

विशेष प्रकाशन सं. 80

ISSN : 0972-2351



समुद्र कृषि की नई प्रगतियाँ



केंद्रीय समुद्री मात्स्यिकी अनुसंधान संस्थान
कोचीन - 682 014



संपादन

प्रोफ. डॉ मोहन जोसफ़ मोडयिल

श्रीमती शीला पी.जे.

सलाहकार समिति

डॉ. ई.वी. राधाकृष्णन

डॉ. एल. कृष्णन

डॉ. इमेलडा जोसफ़

श्री. सी.जे. स्टीफ़न

संपादन सहयोग

श्रीमती ई.के. उमा

श्रीमती ई. शशिकला

राष्ट्रीय वैज्ञानिक हिंदी संगोष्ठी

(कार्यवाही)

समुद्र कृषि की नई प्रगतियाँ



केंद्रीय समुद्री मात्स्यिकी अनुसंधान संस्थान

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद

कोचीन 682 014, भारत

जनवरी 2004



प्राक्कथन



खाद्य उत्पादन, भेषजीय और औषधीय अनुप्रयोगों के क्षेत्रों में समुद्री जैवप्रौद्योगिकी की क्षमताएं साबित हो गई हैं। परिणामस्वरूप हाल के वर्षों में इस विषय में वैज्ञानिक अभिरुचि बढ़ गई है। हमारे समुद्र हमारे भविष्य की प्रत्याशा हैं; कई जनकल्याणकारी कार्यकलाप व उद्यम इस से साध्य होगा, इस में संदेह नहीं।

सी एम एफ आर आइ में समुद्री संवर्धन और समुद्री जैवप्रौद्योगिकी के अनुप्रयोगों पर हुई वर्धित अभिरुचि से कई प्रभावी प्रौद्योगिकियाँ विकसित की हैं। चिंगटों का प्रेरित प्रजनन, केकड़ा, पंक केकड़ा, महा चिंगट, सजावटी मछलियाँ, समुद्री ककडियाँ, मुक्ता शक्तियाँ, सीपियाँ, शंबु, समुद्री घोड़ा, कटल फिश आदि संपदाओं के हैचरी पालन पर प्राप्त अग्रगामी सफलता इन उपलब्धियों में कुछेक हैं। हाल में ऊतक संवर्धन प्रौद्योगिकी के ज़रिए मुक्ता शक्ति और शक्ति एबलोन में मोती का उत्पादन कर पाया जो विश्व में पहली घटना है। समुद्र कृषि में फूट पड़े रोगों के निदान प्रविधि के लिए विकसित किया पी सी आर किट और एक उपलब्धि है। खाद्य रूपायन को आगे बढ़ाते हुए किण्वित खाद्यों के निर्माण में प्राप्त सफलता भी हाल में हुए अग्रगामी अनुसंधान का परिणाम है। आजकल खेतों में पालन केलिए विकसित किए गए किस्म की ट्रिप्लाइड शक्तियाँ संस्थान के अथक परिश्रमों के ज्वलंत उदाहरणों में एक हैं। अलावा इसके खारा, अंतर्स्थलीय और ज्वारनदमुखी जलस्रोतों में समुद्रकृषि की प्रमाणित प्रौद्योगिकियाँ और इन सबसे ऊपर समुद्री उत्पादों की निर्यात मुद्राओं से देश को समृद्ध बनाए जाने के अन्य मात्स्यिकी संगठनों की अग्रगामी सफलताएं सम्मिलित करके प्रकाशन में सूचनाओं का उर्वरीकरण किया है।

यह अत्यंत हृदयग्राही है कि सारे भारतीय समुद्र तटों में हमारे वैज्ञानिकों द्वारा विकसित प्रौद्योगिकियों का प्रयोग हो रहा है। राजभाषा हिंदी में ऐसी अनुसंधान उपलब्धियों की अभिव्यक्ति होने से पूरे हिन्दुस्तान में इन प्रौद्योगिकियों का तेज से प्रचार हो जायेगा। हमारे वैज्ञानिकों व विषय विशेषज्ञों द्वारा इस कार्य की सफलता केलिए हिंदी में लिखने केलिए दिखाया श्रम सराहना का विषय है। मैं उनका और इस प्रकाशन को समय पर निकालने केलिए अविराम परिश्रम किए हिंदी अनुभाग के अर्पणशील कार्मिकों का अभिनंदन करता हूँ। अतः प्रफुल्ल मन से समुद्र कृषि की नई प्रगतियाँ पर ऐसा एक तकनीकी प्रकाशन हिंदुस्तान के पाठकों के सम्मुख प्रस्तुत करता हूँ।

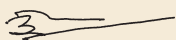
प्रोफ. डॉ मोहन जोसफ मोडयिल
निदेशक

कोचीन
16-1-2004

संपादकीय

हमारे अनुसंधान और विकास संगठन ज्ञान का भंडार माना जाता है. इन में कार्यरत प्रत्येक कार्मिक जन कार्मिक है अतः उनकी प्रतिबद्धता जनता से हैं कि उन्हें अपनी अर्जित जानकारीयों व सूचनाएं जनहित केलिए परिवर्तित की जानी चाहिए. सूचनाओं के व्यापन में संप्रेषणीयता का महत्वपूर्ण स्थान है विशेषकर संप्रेषणीयता के कई परतों में एक अंग रही भाषा की जानकारी पाबंदी न बनकर ई-चिप से संसूचनाएं अभरनेवाले हाल के संदर्भ में. फिर भी एक बड़े समूह के संवेदी तलों को छूने और जगाने का सफल माध्यम भाषा ही रही है और भारत के माहौल में वह हिंदी के सिवा और किसी भाषा नहीं है.

राजभाषा हिंदी का प्रयोजनपरक पक्ष आज चिंता का विषय नहीं बल्कि प्रयोग किए जाने का है. इस दरमियान संस्थान अपनी समर्थता साबित करने के एहसास के साथ राजभाषा हिंदी में **समुद्र कृषि की नई प्रगतियाँ** विषय पर संपादित यह प्रकाशन पाठकों के सम्मुख पेश करता है. इस में 24 लेख जोड़े गए हैं जिन में 5 मूल रूप से हिंदी में लिखित और बाकी अनूदित है; विषयवस्तु अद्यतन और गहन है फिर भी आशय संवेदन केलिए अनुवाद में समतुल्य हिंदी शब्द और कोष्ठकों में लिप्यंतरण करके या उसी प्रकार दे दिए हैं. जहाँ तक हो सके तकनीकी शब्दों में एकरूपता बर्तने की कोशिश की है, उच्चारण और मानकीकरण तत्वों के अनुसार. मूलों, यौगिकों व माप-तौल के अन्तर्राष्ट्रीय प्रयोगों का लिप्यंतरण और चिह्नों को उसी प्रकार में ही दे दिया है. इस श्रमकर प्रयास में भाषा के प्रवाह में कहीं कहीं शब्दों व अर्थों को लेकर रुकावट आ जाए तो कृपया हमारे साथ गुज़रें फिलहाल राष्ट्र और राष्ट्रभाषा हिंदी आत्मनिर्भरता और स्वाभिमान से विकास की ओर अग्रसर है.



शीला पी. जे.

सहायक निदेशक (रा भा)

कोचीन

26-1-2004

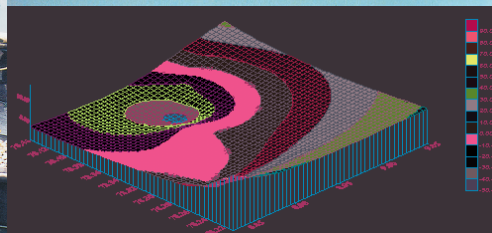
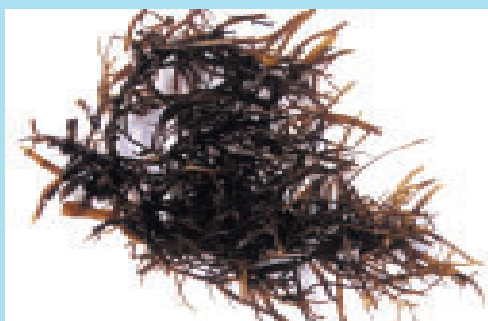
विषय सूची

क्र. सं.	विषय	पृष्ठ सं.
	I	
	समुद्र कृषि की हाल की प्रगतियाँ	
1	शूली महा चिंगटों के प्रजनन और स्फुटनशाला प्रौद्योगिकी के विकास में नई प्रगतियाँ ई.वी. राधाकृष्णन, एस. लक्ष्मी पिल्लै, के.एन. सलीला और जो किप्रक्कुडन	1
2	सक्रिय धातु आयनों के अनुकूलन द्वारा अन्तःस्थलीय भूमिगत नमकीन जल में टाईगर झींगा (पीनियस मोनोडान) के स्थाई पालन की संभावनाएँ सुधीर रायज़ादा, एन.के. चट्टा, यू.के. माहेश्वरी, हसन जावेद, मुशरफ अली, आई.जे. सिंह तथा संजीवन कुमार	7
3.	समुद्री मत्स्यों का कटघरा पालन एस. शिवकामी	11
4	समुद्री शैवाल के पैदावार में अभिवृद्धि रीता जयशंकर	17
5	जीवंत खाद्य के रूप में रॉटिफर मोली वर्गीस	21
6	झींगा एवं मछली - स्वास्थ्य प्रबंधन के बदलते समीकरण मात्यू एब्रहाम, आज़ाद आई.एस	25
7	खारा पानी खेतों में पर्यनुकूल और टिकाऊ झींगा पालन पी.के.मार्टिन तोम्पसन और पी.एम. अबूबक्कर	29
8	जल भृंग (क्लाडोसीरा) पी.एस. निओमी	33
9	हरे कर्कट के मुटाने पालन के लिए सूत्रित गुटिका खाद्य आर. पॉल राज और उणिक्कृष्णन. यू	37
10	समुद्र कृषि हेतु भौगोलिक सूचना प्रणाली का अनुप्रयोग डॉ.वीरेंद्र वीर सिंह एवं डॉ.राजगोपालन	41
11	समुद्र कृषि में व्यवस्था विश्लेषण और अनुरूपण नमूने सोमी कुरियाकोस और नीता सूसन डेविड	47
12	सीपी नर्सरी प्रणालियों में नूतन विकास षोजी जोसफ	51

क्र. सं.	विषय	पृष्ठ सं.
13	सिल्ला सेरेटा (पंक केकडा) का प्रजनन और पालन ई.वी. राधाकृष्णन, मेरी के माणिशेरी, जोसलीन जोस, सुबोध कुमार पत्रा, लिया अंबि पिल्लै	55
14	तलमज्जी पखमछलियों का समुद्री संवर्धन एल. कृष्णन और ग्रेस मात्यू	59
<div>II</div> जलकृषि में जैवप्रौद्योगिकी अनुप्रयोग		
15	समुद्री शैवाल अनुसंधान में जैवप्रौद्योगिकी और भारत में उपयोगिता पी. कलाधरन	61
16	जलखाद्य उत्पादन में घन-अवस्था किण्वन से सस्य संघटकों का सूक्ष्म जैविकी संपोषण इमेल्डा जोसफ़, पॉलराज आर और विजयकुमार. एम.	67
17	औषध और कीड़े : जलकृषि में प्रतिसूक्ष्म जीवी कारकों का प्रभाव वी. चन्द्रिका	71
18	जल जीव कृषि में स्वास्थ्य प्रबंधन के लिए जैवप्रौद्योगिकी का प्रयोग के.एस. शोभना और के.सी. जोर्ज	73
19	आण्विक जीवविज्ञान तकनीक द्वारा समुद्री खाद्य में खाद्य रोगजनक की खोज राकेश कुमार	79
20	श्वेत चित्ति संलक्षण विषाणु (वाइट स्पॉट सिन्ड्रोम वाइरस) के लिए सी एम एफ आर आइ का पी सी आर किट पी.सी. तोमस एवं एम.पी. पोल्टन	85
<div>III</div> जीविकार्जन के लिए तटीय जलकृषि		
21	सुन्दरबन्स की मात्स्यिकी-समस्याएं और प्रत्याशाएं गणेश चन्द्रा और आर एल सागर	87
22	तटवर्ती जलकृषि विकास में एम पी ई डी ए की भूमिका श्री बी विष्णुभट्ट, श्री पी एन विनोद, श्री एम विश्वकुमार	91
23	केरल में एरणाकुलम जिला के तटीय गाँव में संस्थान-गाँव-संपर्क कार्यक्रम आर. सत्यदास, शीला इम्मानुएल, सिन्धु सदानन्दन और जयन के. एन.	97
24	शंबु कृषि में महिला स्वयं सहायक ग्रुप - भारत के तटीय जनता के लिए रोज़गार एवं आमदनी टी. एस. वेलायुधन	105

भाग I

समुद्र कृषि की हाल की प्रगतियाँ



शूली महा चिंगटों के प्रजनन और स्फुटनशाला प्रौद्योगिकी के विकास में नई प्रगतियाँ

ई.वी. राधाकृष्णन, एस. लक्ष्मी पिल्लै,

के.एन. सलीला और जो किषकूडन

केंद्रीय समुद्री मात्स्यिकी अनुसंधान संस्थान, कोचीन

सारांश

शूली महा चिंगट (स्पाइनी लोबस्टर) अत्यधिक निर्यात माँग के मूल्यवान कवचप्राणी हैं। अंतर्राष्ट्रीय बाज़ार में होने वाली अत्यधिक माँग की पूर्ति के लिए सभी आकारों के महाचिंगटों का वर्धित विदोहन किए जाने की वजह से यह संपदा अत्यधिक मत्स्यन दबाव पर है। सी एम एफ आर आइ द्वारा शूली महाचिंगट पालन की प्रौद्योगिकी वर्ष 1980 के अंतिम वर्षों में विकसित करने पर भी अनुयोज्य स्फुटनशाला प्रौद्योगिकी के अभाव के कारण वाणिज्यिक तौर का पालन नहीं किया जा रहा था। शूली महा चिंगटों की प्रग्रहण स्थिति में उनका परिपक्वन और प्रजनन सफलता से किए जाने पर भी इनकी दीर्घ अवधि का डिंभकीय पालन बीजों के उत्पादन का मुख्य प्रतिबंध रहा है। फिर भी जापान लोग शूली महा चिंगटों की छः जातियों के डिंभकीय विकास में सफल हो गए, विशेषतः शीतोष्ण जातियों और विभिन्न जातियों के 132-319 दिनों तक की आयु के डिंभकीय अवस्थाओं के विकास में वे सफल हो गए। बाद में आस्ट्रेलिया और न्यूसिलैण्ड ने 300 दिनों में पैन्युलिरस सिग्नस और जासस एड्वार्सी के फिल्लोसोमा के सभी डिंभकीय स्टेजों का विकास किया। शूली महा चिंगटों की जल कृषि में डिंभकों का सफलतापूर्वक विकास सर्वतोमुख प्रगति मानी जाती है। फिर भी शूली महा चिंगटों के सुदीर्घत कीय स्टेजों के विकास में कई समस्याएं होती हैं। भारत में 60 दिनों में पी. होमारस के डिंभक को 7 वीं अवस्था तक पालन किया गया। पी. पोलिफैगस और पी. ओर्नाटस के डिंभक पालन में भी भागिक सफलता पायी गई। फिर भी, विभिन्न डिंभक स्तरों में अनुयोज्य खाद्य, खाद्य लेने का स्वभाव और डिंभकों के तेज़ निर्मोचन और बढ़ती के लिए आवश्यक अनुकूलतम पानी गुणता आदि के बारे में ज़्यादातर सूचनाएं सफलतापूर्वक महाचिंगट स्फुटनशाला प्रौद्योगिकी

के लिए आवश्यक है। यह प्रत्याशित है कि सफल स्फुटनशाला प्रौद्योगिकी से भारत में वाणिज्यिक तौर पर महा चिंगट बीजोत्पादन के लिए रास्ता खोला जाएगा।

आमुख

महा चिंगट अत्यधिक निर्यात मूल्य वाले मूल्यवान कवचप्राणी हैं। जीवत महा चिंगटों के लिए बढ़ती हुई मांग और आकर्षक मूल्य की वजह से मछुआरे लोग समुद्र से अधिकतर विदोहन करने के लिए प्रेरित हो गए, तद्वारा मत्स्यन दबाव और प्राकृतिक स्टॉक में कमी भी होने लगी। प्राकृतिक मात्स्यिकी से कम पकड़ होने की स्थिति में महाचिंगटों की जलकृषि के बारे में चिंता होने लगी। प्रयोगशाला अध्ययनों और प्राथमिक पालन परीक्षणों से यह दिखाया पड़ा कि शूली महाचिंगट कृत्रिम वातावरण को स्वीकारने की क्षमता वाले हैं और खाद्य एवं पानी की गुणता प्रबंधन से उनकी बढ़ती दर में वृद्धि की जा सकती है। साबित प्रौद्योगिकी के अभाव के कारण उच्च शक्यता होने पर भी महा चिंगट पालन वाणिज्यिक स्तर पर नहीं पहुँचा। चिंगटों के विरुद्ध महा चिंगट अत्यंत उत्पादकता वाले कवच प्राणी हैं। लेकिन विभिन्न जीव वैज्ञानीय कारणों से बहुत कम प्रतिशत पश्च डिंभक सभी डिंभकीय स्टेजों की समाप्ति के बाद मात्स्यिकी में वापस पहुँच आते हैं। टिकाऊ पालन परिचालन को बीजों की प्राप्ति के लिए प्राकृतिक संपदाओं पर आश्रय नहीं कर सकता है क्योंकि बीजों की उपलब्धि मौसम पर प्रतिबंधित है या लगातार परिचालन से स्टॉक की कमी हो गई है। अतः महाचिंगटों का वाणिज्यिक पालन केवल बीजों के स्फुटनशाला उत्पादन से साध्य होता है। महाचिंगटों की बहुत कुछ जातियों के प्रजनन एवं पूरे डिंभकीय विकास सफल होने पर भी वाणिज्यिक स्तर के बीजोत्पादन में स्फुटनशाला प्रौद्योगिकी उपलब्ध की जानी चाहिए। इस लेख में भारत और अन्य देशों में महाचिंगट की प्रजनन प्रौद्योगिकी का स्तर, प्रतिबंध और भविष्य की प्रत्याशाओं की समीक्षा की जाती है।

महाचिंगटों का प्रजनन

उष्णकटिबंधीय महाचिंगट पूरे वर्ष में प्रजनन करते हैं। फिर भी कुछ महीनों में जब खाद्य की ज्यादातर उपलब्धता है, तब प्रजनन भी ज्यादातर होता है। *पैन्थुलिरस होमारस* उथले जल में प्रजनन करते हैं और *पी. ओर्नाटस* और *पी. पोलिफैगस* प्रजनन के लिए गहरे सागर तक प्रवास करते हैं। कारापेस की लंबाई (सी एल) 55 मि मी तक होने पर *पी. होमारस* प्रौढ़ावस्था प्राप्त करते हैं और 90 मि मी सी एल होने पर *पी. ओर्नाटस*। सभी तीनों जातियों में बारम्बार प्रजनन की रिपोर्ट की गई। महाचिंगटों के मैथुन होते वक्त अंतर निर्मोचन के दौरान कवच दृढ़ होने पर अंड निःस्रवण और अंड संपुटन होते हैं। एक निर्मोचन चक्र में 3-4 बार प्रजनन की रिपोर्ट की गई है। पानी के तरंगों में वेलापवर्ती फिल्लोसोमा डिंभक महासागर क्षेत्रों तक जाते हैं और पश्च डिंभक (प्यूरुलस) अवस्था में परिवर्तित करने से पहले कई बार निर्मोचन करते हैं। प्यूरुलस डिंभक तट की ओर तैरते हैं और तटीय क्षेत्र में जमा होते हैं। किशोर और उप प्रौढ़ उथले जलक्षेत्र में पाए जाते हैं और कुछ महाचिंगट जाति प्रजनन के लिए गहरे क्षेत्र तक जाती हैं।

बद्ध स्थिति में प्रजनन

स्फुटनशाला परिचालन के लिए अंडवाहक स्त्री जातियों को प्राकृतिक क्षेत्रों से या बद्ध ब्रूड स्टॉक से प्राप्त किया जा सकता है। अगर प्राकृतिक अंडवाही स्त्री जाति महा चिंगटों को लेते हैं तो स्फुटनशाला ब्रूडस्टॉक के स्रोत के पास होनी चाहिए क्योंकि लंबी दूरी तक परिवहन करने पर दबाव होने की संभावना है और अंडों में सूक्ष्माणु ग्रसन हो जाता है और प्रौढ़ होने से पहले अंड देते या कमजोर डिंभकों का स्फुटन हो जाता है। अतः स्फुटनशाला में महा चिंगटों के सफलतापूर्वक उत्पादन करने के लिए नियंत्रित पुनरुत्पादन आवश्यक है। किशोर महा चिंगटों को लैंगिक परिपक्वता तक बढ़ाकर या लैंगिक रूप से परिपक्व महा चिंगट को संग्रहित करके नियंत्रित अवस्था में प्रजनन के लिए प्रेरित करके ब्रूडस्टॉक विकसित किया जा सकता है। शूली महा

चिंगट पी. सिग्नस और पी. होमारस के किशोरों को बद्ध स्थिति में लैंगिक परिपक्वता तक बढ़ाया और प्रजनन भी कराया गया। कम प्रकाश तीव्रता (<500 लक्स) में पानी के पुनःचक्रण में पी. होमारस के ब्रूडस्टॉक का अनुरक्षण किया गया और प्रतिदिन शंबु मांस से खिलाने पर पूरे वर्ष में प्रजनन करने लायक बन गया। प्रेरित परिपक्वता में खाद्य का महत्वपूर्ण स्थान होता है और शूली महाचिंगटों को खाद्य के रूप में शंबु मांस दिए जाने पर उच्चतम प्रजनन साध्य हो गया। मैथुन के लिए स्त्री-पुरुष अनुपात 2:1 अनुयोज्य देखा गया।

पी. होमारस की उत्पादकता आकार के अनुसार 50,000 से 5,00,000 है। बद्ध स्थिति में महा चिंगटों की उत्पादकता प्राकृतिक महा चिंगटों की अपेक्षा 20% कम आकलित किया गया है और अंड की गुणता भी प्राकृतिक महा चिंगटों के अंडों के समान थे और स्फुटन से अत्यधिक जीवंत डिंभक प्राप्त हुए। उत्पादकता, अंडपीत, करोटिनोइड अंश, अंडों के स्फुटन का प्रतिशत और डिंभकीय जीवंतता अधिकतर ब्रूडस्टॉक की पौष्टिकता पर आधारित है। सामान्य तौर पर रात को मैथुन होता है और स्टेर्नल प्लेटों में स्पेर्मटोफोर को जमा कर देते हैं। स्पेर्मटोफोर जमाव और ओवीपोसिशन या अंड निःस्रवण एक से 17 दिनों के अंतराल में होता है और यह अंतराल विभिन्न जतियों में भिन्न होता है और अनुकूल पर्यावरण स्थिति पर आश्रित भी है। प्रतिकूल स्थिति में अगर मैथुन नहीं हुआ तो अंडाशय फिर से अंडजनन के लिए तैयार होता है और हीमोलिम्फ का रंग नील से कड़ा लाल होता है। शूली महा चिंगटों के परिपक्वता और अंडजनन के लिए अन्य विशेष तकनीकों की ज़रूरत नहीं है। वास्तव में शूली महा चिंगटों को बद्ध स्थिति में प्रजनन कराना आसान है। निर्मोचन के समय स्पेर्मटोफोर भी निकल जाने के कारण हर एक निर्मोचन के बाद मैथुन होना आवश्यक है।

शूली महा चिंगटों का अंडाशय विकास तेज़ करने के लिए द्विपार्श्विक नेत्रवृंद अपक्षरण भी एक प्रचलित तरीका है। दोनों निर्मोचनों के अंतराल से पहले अपक्षरण करने पर अंडाशय

परिपक्वता होता है और मैथुन के बिना अंड निःस्रवण होता है। मैथुन होने पर जीवंत डिंभकों को प्राप्त होता है। फिर भी कभी कभी अंडस्फुटन से पहले निर्मोचन होता है। अपक्षरण किए गए महा चिंगटों में निर्मोचन उद्दीपन और गोनाड उद्दीपन होमोन के अभाव में ही निर्मोचन और अंडाशय विकास होता है। अगर दोनों निर्मोचनों के बाद के स्तर में या निर्मोचन के पहले की स्थिति में अपक्षरण किया गया तो अंडाशय विकास होने पर भी अंतिम निर्मोचन होने की वजह से अंडाशय अगले परिपक्वता की तैयारी में होगा। साधारणतया दो निर्मोचनों के अंदर मैथुन, अंड निःस्रवण और अंडस्फुटन होना अनिवार्य है। निर्मोचन अवरोधन होमोन का स्तर बढ़ाए जाने पर महाचिंगट के दोनों निर्मोचनों के बीच का अंतराल बढ़ाया जा सकता है और 3 या 4 अंडजनन भी कराया जा सकता है।

डिंभक पालन

उष्णकटिबंधीय महाचिंगटों की ऊष्मायन अवधि पानी के तापमान के आधार पर 20-25 दिनों तक होती है। उदरीय प्लियोपोड्स में नए रूप से स्थापित अंडों का रंग स्फुटन के पहले गाढ़ संतरे से गाढ़ भुरा होता है। बद्ध प्रजनकों में सूक्ष्माणु ग्रसन कम होता है। ब्रूडस्टॉक टैंक अंडवाहक महा चिंगट को डालने के तुरंत बाद प्रजनक को स्टेरिलाइस्ड समुद्र जल भरे गए स्फुटन टैंक में बदल दिया जाना है। मित रूप से वातन प्रदान किया जाना है। रात को स्फुटन होता है और डिंभक सुतार्य होते हैं। कुल डिंभकों की संख्या का आकलन करने के बाद डिंभकों को पालन टैंक में बदल दिया जाना है।

जापान में लगभग 50 वर्षों से पहले ही फिल्लोसोमा डिंभकों के पालन परीक्षण किए जा रहे हैं। भारत सहित कई देशों में डिंभक पालन पर अध्ययन हो रहा है। फिर भी वर्ष 1988 में किट्टाका ने शूली महाचिंगट *जासस लालन्डी* के फिल्लोसोमा डिंभक के पालन में सफलता प्राप्त होने पर शूली महाचिंगट के संपूर्ण डिंभकीय विकास की लक्ष्य प्राप्ति हुई। बाद में उनके टीम के वैज्ञानिक गण अन्य पांच जातियों के डिंभकों को अंड से

प्यूरुलस अवस्था तक पालन करने में सफल हो गए। विभिन्न जातियों की अतिजीवितता का प्रतिशत 0.03-10% के बीच में था। पी. सिग्नस का डिंभकीय स्तर आस्ट्रेलिया में और जे. एडवार्डसी का प्यूरुलस स्तर न्यूज़िलैण्ड में भी पूरा किया गया। विभिन्न जातियों की डिंभकीय अवधि 132-319 दिनों के बीच में बदलती रही (सारणी - 1 देखिए)

जापान के अनुसंधान विदों की सफलता के मुख्य कारण नीचे दिए जाते हैं:

सुधार होता है।

- पूरी पालन अवधि के दौरान पानी की गुणता का अनुरक्षण। सी ओ डी का सुरक्षा स्तर 1.2 पी पी एम रखा गया (सारणी-2 देखिए).

डिंभकीय पालन परीक्षणों से फिल्लोसोमा डिंभक की विभिन्न अवस्थाओं में खाद्य का स्वभाव और खाद्य की आवश्यकता पर सूचना प्राप्त हुई है। खाद्य से डिंभक के शारीरिक अवयवों की

सारणी : 1 प्रयोगशाला में (किट्टाका, 1994 बी) शूली महाचिंगटों का डिंभकीय विकास

जाति	डिंभकीय अवस्था (दिन)	इन्स्टार की संख्या	प्यूरुलस की संख्या	अतिजीवितता
जासस ललान्डी	306	15	1	-
जासस (संकर)	319	15	2	-
जे. एडवार्डसी	303	17	16	0.11
जे. वेरियाक्सी	205	17	168	10.0
पालिन्यूरस एलिफास	132	9	4	0.08
पान्युलिरस जापोनिकस	306	12	4	0.03

- अमरीकी महाचिंगट डिंभक के लिए मस्साकुसेट्स प्रौद्योगिकी संस्थान द्वारा मूल रूप से रूपाइत उत्स्रवण डिंभक पालन व्यवस्था का सुधार

- पालन जल में पहली बार सूक्ष्म शैवाल नानोक्लोरोप्सिस जाति को जोड़ देने पर डिंभक पालन के लिए आवश्यक पानी की गुणता कायम रखी जा सकी। डिंभकों के बाद की अवस्थाओं को स्वच्छ जल में पालन किया गया।

- फिल्लोसोमा डिंभक को शंबु मांस का खाद्य। नए स्फुटित आर्टीमिया नोप्ली, साजिता जाति और मछली फ्राइ का परीक्षण भी किया गया। शंबु मांस अच्छा खाद्य होने पर भी डिंभक के अवयवों में लटककर मृत्यु होने की संभावना ज़्यादा है। इसके अतिरिक्त रोग जनक बैक्टीरिया से पानी की गुणता भी खराब होती है। प्रोबयोटिक बैक्टीरिया जोड़ देने से इस समस्या का

ज़रूरतों और पौष्टिक आवश्यकताओं की पूर्ति की जानी है क्योंकि खाद्य सीधे शरीर में पहुँचने पर फिल्लोसोमा अवस्था की अवधि पर प्रभावित होती है। पोषण संतुलित खाद्य देने और अनुकूल पर्यावरण स्थिति प्रदान करने पर कुल डिंभकीय अवधि कम की जा सकती है। डिंभकों को प्राकृतिक स्वास्थ्य प्रदान करने के लिए पालन तरीकों और खाद्य के स्वरूप में सुधार लाना आवश्यक है।

भारत में चलाए गए डिंभकीय पालन परीक्षण

केंद्रीय समुद्री मात्स्यिकी अनुसंधान संस्थान के मद्रास अनुसंधान केंद्र की कोवलम क्षेत्र प्रयोगशाला में वर्ष 1976 में शूली महा चिंगटों के प्रजनन एवं डिंभकों के पालन के लिए परीक्षण शुरू किए गए। पी. होमारस के डिंभकों का 60 दिनों में 6 अवस्थाओं तक पालन किया गया और सातवां अवस्था का पालन कालिकट

सारणी : 2 डिंभक पालन व्यवस्था (किट्टाका, 1994 ए) में पानी की गुणता के प्राचल

प्राचल	मूल्य
तापमान °C	20.0-21.5 (25.0)*
लवणता (पी पी टी)	33.5-35.5
पी एच	8.0 - 8.6
अमोनिया (मि ग्रा/ली) (उच्च सीमा)	8.0
सी ओ डी (पी पी एम) (उच्च सीमा)	1.2
ज़िन्क (मि ग्रा/ली) (एल डी 50)	6.0
कोप्पर (मि ग्रा/ली) (एल डी 50)	0.3

* पैन्थुलिरस जापोनिकस (उपोष्ण कटिबंधीय)

अनुसंधान केंद्र में किया गया। कई अन्य प्रयोगशालाओं में भी डिंभकीय पालन के लिए प्रयास किए गए थे लेकिन बहुत कम सफलता पायी गयी (सारणी - 3 देखिए). कोचीन में एक विकसित डिंभक पालन व्यवस्था सजायी गयी है। जापान लोगों द्वारा प्रयुक्त उत्स्रवण रीति में सुधार करके उसी रूप में प्रयुक्त किया गया और खाए बिना पड गए आर्टीमिया खाद्य के अपशिष्टों का अधिकांश भाग पानी के चक्रण से ऊपर लाया जा सका।

इस से पालन व्यवस्था के स्वास्थ्य की स्थिति भी बेहतर हो गई। पी. होमारस के प्रारंभ के डिंभकों को शंबू मांस स्वीकार्य नहीं था। फिल्लोसोमा डिंभक कीटोग्नात साजिता जाति पसंद करते हैं और कई प्लवक जीवों की जीवंत खाद्य संवर्धन रीतियों में फिल्लोसोमा डिंभक की खाद्य पूर्ति के लिए आवश्यक विकास किया जाना है। डिंभक की अंतिम अवस्था में समृद्ध और एम्बडड आर्टीमिया अच्छा खाद्य है।

सारणी : 3 प्रयोगशाला में पालित पैन्थुलिरस होमारस (लिनेयस, 1758) के फिल्लोसोमा डिंभकों की संचयी अंतर निर्मोचन अवधि (\pm एस.डी.) और अतिजीवितता प्रतिशत

स्टेज	संचयी अंतर निर्मोचन अवधि (दिन)		अतिजीवितता प्रतिशत
	रेंच	मीन (\pm एस.डी)	
I-II	8-10	8.7 \pm 1.95	96
II-III ए	13-18	14.9 \pm 1.95	80
III ए - III बी	19-22	20.3 \pm 1.16	64
III बी - III सी	25-29	26.6 \pm 1.26	57
III सी - IV ए	32-36	33.7 \pm 1.25	48
IV ए - IV बी	36-45	40.2 \pm 2.82	35
IV बी - V ए	39-50	46.4 \pm 3.06	25
V ए - V बी	43-57	53.2 \pm 4.54	15
V बी - VI	52-64	60.0 \pm 3.33	8

अगर पालन व्यवस्था के पानी की गुणता जैव पदार्थों से खराब होती है तो डिंभकों में पक्ष्माभियों (सिलियेटा) और तांतुक जीवाणुओं का ग्रसन होता है। एक बार जूतामिनियम जाति और अन्य वोर्टिसेल्लिडों (vorticellid) से पीड़ित होता है तो डिंभक की चलन क्षमता और तैरने की शक्ति में कमी होती है। फोर्मलिन 25 पी पी एम की मात्रा में जोड़ देने पर पक्ष्माभों के लिए कुछ हद तक प्रभावकारी होने पर भी लगातार उपचार करने पर डिंभक के लिए अच्छा नहीं है।

अनुसंधान निर्देश

शूली महा चिंगटों के डिंभकीय पालन पर अब तक आयोजित अनुसंधान कार्यों से यह दिखाया पड़ा कि डिंभकों का बद्ध स्थिति में पालन और दीर्घ काल तक अनुरक्षण भी किया जा सकता है। फिर भी डिंभक की अंतिम अवस्था में अनुयोज्य खाद्य और निर्मोचन एवं बढ़ती के लिए आवश्यक अनुकूलतम वातावरण प्रदान करने पर भविष्य में आगे भी अनुसंधान किया जाना आवश्यक है। महा चिंगट के डिंभकों को विशेष प्रकार का पालन तंत्र आवश्यक है। जापान लोगों की पालन व्यवस्था की सबसे बड़ी समस्या बिना खाए पड गए खाद्य और अपशिष्टों को निकालने में हुई कठिनाई थी। सी एम एफ आर आइ द्वारा विकसित पालन व्यवस्था में इस प्रकार की कठिनाइयों का सुधार किया गया है। डिंभकों के विशेष खाद्य स्वभाव के कारण फिल्लोसोमा डिंभक के लिए अनुयोज्य खाद्य पहचान करना आवश्यक बन गया। डिंभक अपने पादों से खाद्य की उपस्थिति जानते हैं। डिंभकों की चाल मृदु और मंद होती है। भारत में

फिल्लोसोमा संवर्धन पर किए जाने वाले अनुसंधान कार्यों में खाद्य विकास, पालन तंत्र का रूपायन और पानी की गुणता की आवश्यकताओं पर प्राथमिकता दी जानी चाहिए। एक बार डिंभकों का संपूर्ण विकास हो जाने पर अत्यधिक अतिजीविता के साथ बीजों के भारी उत्पादन पर ध्यान दिया जाना है।

भविष्य की प्रत्याशाएं

फिल्लोसोमा डिंभकों का पालन अत्यंत तकनीकी साध्यताओं से युक्त कार्य है। डिंभकों के सभी अवस्थाएं पूरे करने के लिए शायद 100-300 दिन लग जाएंगे। डिंभकीय चक्र की कम अवधि वाली जातियाँ पालन के लिए अनुयोज्य है। फिर भी जल कृषि के लिए इनकी अनुयोज्यता का मूल्यांकन किया जाना है। अगर अच्छी जल कृषि शक्यता और लंबी डिंभक अवधि युक्त महा चिंगट जातियों के विकास के लिए स्फुटनशाला प्रौद्योगिकी विकसित की जा सकी तो भी उच्च मूल्य और उपभोक्ता मांग वाला समुद्री खाद्य होने की वजह से यह विकास कार्य भी सराहनीय मानना पड़ेगा। जिन जातियों के पालन परीक्षण में सफलता प्राप्त हुई है उनमें खाद्य, पर्यावरणीय या होर्मोन परिवर्तनों से बेहतर अतिजीवितता और कम डिंभकीय अवस्थाओं के लिए प्रयास किया जाना चाहिए। छोटी प्रयोगशाला स्तर के डिंभक पालन तंत्रों को जल कृषि उद्योग में होने वाली बड़ी मांग की पूर्ति के लिए बीजों के भारी उत्पादन के स्तर तक बढ़ाया जाना है। तेज़ बढ़ने वाले और रोग प्रतिरोधता वाले डिंभकों और किशोरों का प्रजनन करना इस क्षेत्र में लंबे अरसे से होने वाला लक्ष्य है।



सक्रिय धातु आयनों के अनुकूलन द्वारा अन्तःस्थलीय भूमिगत नमकीन जल में टाईगर झींगा (पीनियस मोनोडान) के स्थाई पालन की संभावनाएँ

सुधीर रायज़ादा, एन.के. चट्टा, यू.के. माहेश्वरी,
हसन जावेद, मुर्शरफ अली, आई.जे. सिंह
तथा संजीवन कुमार

केंद्रीय मत्स्य शिक्षा संस्थान का रोहतक केन्द्र, लाहली, रोहतक (हरियाणा)

प्रस्तावना

विदेशों में निर्यात होने के कारण, टाईगर झींगा (*पीनियस मोनोडान*) को आज की जलकृषि में एक विशेष स्थान प्राप्त है। इस प्रजाति का पालन भारत में मात्र समुद्र तटीय राज्यों में किया जाता है, यद्यपि इसका सफल पालन मीठे जल में भी कुछ देशों में किया जा रहा है। भारत के उत्तरी-पश्चिमी राज्यों में नमकीन खेतों व भूमिगत नमकीन जल के असीम क्षेत्र है, जहाँ टाईगर झींगा के पालन की दिशा में अस्सीवें व नब्बे दशक में प्रारम्भिक परीक्षण में विभिन्न उत्पादन सफलताएँ प्राप्त हुई (ठाकुर तथा चट्टा 1995) परन्तु उपरोक्त स्थान के अतिरिक्त अन्य स्थानों पर किए गए परीक्षणों में इस प्रजाति के पालन की दिशा में कोई सफलता प्राप्त न हो सकी तथा पाया गया कि टाईगर झींगा के पोस्ट-लार्वा संग्रहण के पश्चात भूमिगत नमकीन जल में मर जाते हैं। इस पहलु को ध्यान में रखकर, हाल में केन्द्रीय मत्स्य शिक्षा संस्थान के रोहतक केन्द्र पर जैव-परीक्षण (बायोऐसे) किए गए, जिसमें प्रमुख सक्रिय धातु आयनों में फेर-बदल द्वारा इस प्रजाति की जीवितता आँकी गई, जिसका विश्लेषण इस शोध-पत्र में प्रस्तुत किया जा रहा है।

साधन तथा विधियाँ

जैविक परीक्षण प्रारम्भ करने से पूर्व केन्द्रीय मत्स्य शिक्षा संस्थान, लाहली, रोहतक (हरियाणा) में उपलब्ध ट्यूबबैल से प्राप्त 16 पी पी टी नमकीन जल में उपलब्ध सक्रिय धातु आयनों का विश्लेषण किया गया। तत्पश्चात इसकी तुलना 16 पी पी टी के कृत्रिम समुद्री जल से की गई (रेड्डी आदि, 1991)। इस तुलनात्मक विवरण में कैल्शियम, मैग्नीशियम तथा पोटेशियम के स्तर में विभिन्नता पाई गई। कृत्रिम समुद्री जल में भूमिगत

तालिका 1 : विभिन्न गुणवत्ताओं के 16 पी पी टी नमकीन जल में उपलब्ध सक्रिय धातु तत्वों का स्तर

प्रयोग संख्या	जल का प्रकार	कैल्शियम कार्बोनेट के रूप में कुल कठोरता (मिग्रा/ली)	कैल्शियम (मिग्रा/ली)	मैगनीशियम (मिग्रा/ली)	पोटेशियम (मिग्रा/ली)
टी-1	कृत्रिम समुद्री जल (ए.एस.डब्ल्यू.)	3270	228	656	154
टी-2	कच्चा भूमिगत जल (आर.एस. डब्ल्यू.)	5900	840	923	16.6
टी-3	पोटेशियम मिश्रित भूमिगत जल	5900	840	923	160
टी-4	डीआयोनाइज तथा पोटेशियम मिश्रित भूमिगत जल	2520	328	442	165
टी-5	डीआयोनाइज तथा पोटेशियम व मैगनीशियम मिश्रित भूमिगत जल	3200	328	600	160

जल के विपरीत कैल्शियम तथा मैगनीशियम आयनों की अधिकता पाई गई, जबकि पोटेशियम अत्यधिक कम मात्रा में आंका गया। उपरोक्त जल विभिन्नता को ध्यान में रखकर तीन गुणवत्ताओं के जल को तैयार किया गया, जिसमें उपरोक्त तीनों धातु आयनों को विभिन्न स्तरों पर समायोजित किया, जिसका विवरण तालिका-1 में दर्शाया गया है।

कैल्शियम, मैगनीशियम तथा पोटेशियम धातु तत्वों का टाईगर झींगा पर प्रभाव देखने के लिए एक परीक्षण (बायोऐसे) बन्द कमरे में किया गया। इस कार्य के लिए 15 एक्वेरियम (साइज 2' x 1' x 1') को उपयोग में लिया गया, जिसमें 16 पी पी टी नमकीनता का 20 लीटर जल, 4 विभिन्न गुणवत्ताओं का भर दिया गया। कृत्रिम समुद्री जल जिसकी नमकीनता भी 16 पी पी टी थी, कंट्रोल के रूप में पांचवें सैट के रूप में उपयोग किया गया। सभी पांचों गुणवत्ताओं के जल को तीन सैटों में एक्वेरियम में भरकर, प्रत्येक एक्वेरियम में टाईगर झींगा के 20 दिन आयु

के 50 पोस्ट-लार्वा डाल दिए गए। एक्वेरियम में आक्सीजन की मात्रा अनुकूलतम रखने के लिए कृत्रिम वायु का लगातार प्रवाह रखा गया तथा खाने में व्यापारिक पैलेट फीड (स्टार्टर सी.पी.फीड) को दिया गया। जल गुणवत्ता को अनुकूलतम रखने के लिए बचे भोजन व झींगों द्वारा उत्सर्जित मल को साइफन द्वारा प्रतिदिन निकाल कर स्वच्छ जल से परिपूर्वित कर दिया गया। मरे हुए झींगों को भी जल्द से जल्द बाहर निकाल दिया गया। परीक्षण को 35 दिनों तक जारी रखा गया तथा टाईगर झींगा की जीवितता व बढ़त का अध्ययन परीक्षण की समाप्ति पर किया गया।

परिणाम तथा विवेचना

तालिका-1 को देखने से मालूम पड़ता है कि कच्चे भूमिगत जल में 16 पी पी टी नमकीनता पर पोटेशियम का स्तर मात्र 16.6 मिग्रा/ली पाया गया, जबकि कृत्रिम समुद्री जल में 154 मिग्रा/ली आंका गया। इसके विपरीत कच्चे भूमिगत नमकीन

तालिका 2 : विभिन्न प्रकार के जल गुणों पर 35 दिनों में टाईगर झींगा की जीवितता तथा बढ़त

प्रयोग संख्या	जल का प्रकार	जीवितता दर	औसत लम्बाई (सेमी)	औसत वजन (ग्राम)
टी-1	ए.एस.डब्ल्यू.	44	3.53	0.286
टी-2	आर.एस. डब्ल्यू.	शून्य	-	-
टी-3	एस. डब्ल्यू के	28	3.53	0.319
टी-4	एस. डब्ल्यू डी के	36	3.76	0.354
टी-5	एस. डब्ल्यू डी के एमजी	42	4.11	0.454

जल में कैल्शियम 840 मिग्रा/ली तथा मैग्नीशियम 923 मिग्रा/ली देखा गया जो कृत्रिम समुद्री जल में उपलब्ध क्रमशः 228 मिग्रा/ली व 656 मिग्रा/ली की अपेक्षा अधिक पाया गया। कच्चे भूमिगत जल में उपलब्ध सक्रिय धातु तत्वों की इस असामान्यता के कारण ही इस जल में टाईगर झींगा की जीवितता नगण्य पायी गयी तथा सभी पोस्ट-लार्वा की 8 घंटे में मृत्यु हो गई (तालिका 2). जबकि कृत्रिम समुद्री जल में यह जीवितता 44 प्रतिशत आंकी गई। तालिका -2 को देखने से यह भी ज्ञात होता है कि जल में पोटेशियम, कैल्शियम तथा मैग्नीशियम का अनुपात भी महत्वपूर्ण है, जिसके विभिन्न स्तरों पर जीवितता दर में परिवर्तन देखे गए। जहाँ मात्र पोटेशियम के मिश्रण से जीवितता दर 28 प्रतिशत आंकी गई, वहीं पोटेशियम व कैल्शियम में फेरबदल द्वारा 36 प्रतिशत तक आंकी गई। जांग इत्यादि (1995) तथा मलासन व वैलंटी (1998) के अनुसार सोडियम, पोटेशियम, कैल्शियम तथा मैग्नीशियम तत्वों की आवश्यकता सभी प्राणियों में होमियोस्टेसिस अवस्था को बनाये रखने के लिए आवश्यक

है। जांग (1995) के अनुसार मैक्रोब्रैकियम रोजनवर्गी के लार्वा संवर्धन के लिए कैल्शियम व मैग्नीशियम का अनुपात कम से कम 1.8 से 2.0 के बीच होना चाहिए। जबकि पोटेशियम का स्तर विभिन्न सेलेनिटी पर समुद्री जल के समान होना भी अनिवार्य है। कच्चे भूमिगत नमकीन जल में पोटेशियम की उपलब्धता अत्यन्त कम होने से कोशिकाओं में उपलब्ध सोडियम पंप काम करना बंद कर देता है, जिससे इन कोशिकाओं में सोडियम के जमाव से कोशिकाओं की मृत्यु हो जाती है (रोबिन्स, 1984)

निष्कर्ष

उपरोक्त शोध से यह सिद्ध होता है, कि अन्तःस्थलीय भूमिगत नमकीन जल में उपलब्ध पोटेशियम, कैल्शियम व मैग्नीशियम तत्वों का स्तर ज्ञात कर, उसे समुद्री जल के अनुरूप कर टाईगर झींगा का पालन इन क्षेत्रों में किया जा सकता है।



समुद्री मत्स्यों का कटघरा पालन

एस. शिवकामी

केंद्रीय समुद्री मात्स्यिकी अनुसंधान संस्थान, कोचीन

भूमिका : समुद्र मत्स्य की बढ़ती हुई आवश्यकता का सामना करने के लिए विविध तरीकों से उत्पादन बढ़ाना आज की आवश्यकता है। भारत अपने 8185 कि मी की विशाल तटीय प्रदेश, सुरक्षित खडियाँ, अनुपे, स्तिया और अवरुद्ध खारा से परिस्थिति के अनुयोजित मत्स्य संवर्धन को विकसित करने का अपरिमित अवसर प्रदान करते हैं। अधिकतर उत्पादन, फसल काटने की आसानी, और सीमित जगह की आवश्यकता से कटघरा पालन अन्य मत्स्य संवर्धन तरीकों से अधिक लाभदायक है।

कटघरा पालन की उत्पत्ति कुल दो शताब्दों के पहले 'कंपुचिया' में हुई थी और उसके बाद कई दक्षिण पूर्व के एशियन राज्यों ने इस तरीके को अपनाया। भारत में कटघरा पालन को वाणिज्य मान में प्रवर्तित करने का प्रयत्न करने के बावजूद, यह तरीका आज भी प्रयोगात्मक रखा है क्योंकि इस से मत्स्य कर्षक में कोई असर न हाल सका। इस पत्र में कटघरा पालन समुद्री परिस्थिति में करने के विविध पहलु को उच्च स्थाई करने का प्रयास किया है।

स्पष्टता : 'कटघरा, मत्स्य और अन्य जीवजालों का पाकन करनेवाले घेरा होता है।

कटघरा के प्रकार : कटघरा मुख्यतः तीन प्रकार के होते हैं:-

- 1. ऊपरी परत या निर्धारित कटघरा :** यह, जलाशय के निचले भाग में निर्धारित खुँटा से संभालिन जाल थैली होता है।
- 2. प्रवाहित कटघरा :** यह जलाशय के पर्यावरण की अवस्था के अनुसार ऊपरीतल में मंडराते रहता है या निचला तल में पडा रहता है।
- 3. अवगाहन क्षुभित कटघरा :** इस में जाल को ऊपर से जोडे हुए है और तूफान की चेतावनी मिलने से शिगर को खोलकर कटघरा को एक मीटर से नीचे जल में दबाते है।

कटघरा पालन की रिवाजें : चारा देने के अनुसार, कटघरा पालन को विस्तृत, अर्धतीव्र और तीव्र तरीकों के होते हैं। विस्तृत कटघरा को अत्यन्त उत्पादक स्वभाव के अवलवण जलाशय जैसे झील, टंकी और 'स्युवेज' पानी और घरेलु उपशिष्टों के ग्रहण करनेवाले जलाशय में उपयोग करते हैं। अर्धतीव्र पालन के कटघरा में मछलियाँ को चावल की भूसी, धरेलु उपशिष्ट, इत्यादी को चारे के रूप में देते हैं और इस रीति का कटघरा अवलवण जलाशय में ज्यादातर प्रयोग करते हैं। तीव्र रीति के कटघरा में उच्च मूल्य की मांसाहारी मछलियों जैसे सालमण, येल्लोटेल और ग्रुपर्ज का पालन करते हैं।

कटघरा का अभिकल्प : कटघरा के अभिकल्प मुख्यतः, पालन करने की मछली की जाति, पालन करने की रीति, प्रचलित पर्यावरण की आवश्यकता (विशाल, अर्धतीव्र, तीव्र), कटघरा बनाने के लिए उपयुक्त चीजें इत्यादि कई घटनाओं पर आधारित है। दो तरह के कटघरा अभिकल्प होते हैं जैसे:-

कटघरा के बनावट : कटघरा निर्माण के लिए आधारित आवश्यकता है ढाँचा, घेरा, तिरौंदा, रसी और लंगर की सामान (चित्र :1) उपयुक्त सामान को संतुलित जीवन-अवधि, अवरुद्ध वर्धन के प्रतिरोध करने की शक्ति और समुद्री जल में जंग नहीं होने का स्थायित्व। घेरा में पानी को परिचालित होने देना चाहिए। कटघरा की रीति के अनुसार और उस में पालित मछली की जाति के अनुसार, कटघरा बनानेवाले चीजों को चुनकर उपयोग करना है। ढाँचा के लिए, बाँस, काश्वरैना का स्तंभा जस्तेदार स्टील, इत्यादी का उपयोग कर सकते हैं। घेरा के लिए, नैलोण, टेरिलीन, प्लास्टिक, पोलिएतिलीन और स्टील मेष, अलुमिनियम, स्टेनलस स्टील, पीतल, ताँबा और निकल जैसे पेलिमरिक (संश्लेषित) रेशा का उपयोग कर सकते हैं। घेरा के लिए उपयुक्त धातु, चदर के मधुकोश या विकर्णित छिदवाले हो सकते हैं। जस्तेदार की तार जाली कीमती होने के बावजूद, लाभदायक है क्योंकि इसको कम सफाई ही आवश्यक है और जंग से प्रतिरोधित भी है। निरैंदा के लिए पुराने मोहरबंद और तारकोल से लेपित ड्रम, तेल का ड्रम (रंगा हुआ), फैबरग्लास

ड्रम, स्टैरोफोम सिलिंडर और लइट- वेइट फेरोसिमन्ट औधान का उपयोग कर सकते हैं।

कटघरा का आकार : कटघरा का आकार, जाल के लिए आवश्यक क्षेत्र और परिचालन लगान में, उच्चतम उत्पादन और अभिव्यवस्था पर आधारित है। कम पानी की विनिमय की असुविधा होने पर भी, बड़ा कटघरा क्षेत्र ही बेहतर है क्योंकि उस पर खर्च कम होता है। कटघरा की आकार कम से कम $100-500 \text{ m}^3$ के अन्तर होनी चाहिए। और कटघरा का निचला भाग पानी के स्वतंत्र विनिमय के लिए पानी के (जलाशय) निचला भाग से कम से कम 0.5 m ऊपर होनी चाहिए। मछली के स्वतंत्र चलन के लिए वृताकार और आयताकार कटघरा, चत्वर कटघरा से अधिक फलदायक है। कटघरा के थाली के ऊँचाई 0.9-1.6 m होनी चाहिए क्योंकि मछली को व्यायाम करते में, भरण करने में और शरण देने में पर्याप्त होते हैं।

स्थानवरण : कटघरा डालने के लिए स्थान निश्चय करना बहुत महत्वपूर्ण होता है। इसके लिए काफी पानी का मिश्रण और वातन होना चाहिए और स्टाक के उपशिष्टों को दूर करने के लिए पर्याप्त मिश्रण होना चाहिए। पानी प्रदूषित नहीं होना चाहिए। और पालन करने वाली मत्स्य जाति के आवश्यकानुसार अनुकूल परिस्थिति प्राचल होता चाहिए। डयनोफ्लजलेट्स के ब्लूम जो मत्स्य को नष्ट कर सकते हैं ईसी समदू क्षेत्रों को परिवर्जन करना है। परिस्थिति प्राचल, स्थलाकृती, कटघरा की जाति और पालन करने वाली मछली की जाति इत्यादी के आधार पर उप बेलांचलीय या समुद्र की और की वातावरण को कटघरा डालने के लिए चुन लेना है। उपबेलांचलीय क्षेत्र को चुनते समय ऊँचा और धीमा पानी के तल के बीच की विभिन्नता लघुतम होनी चाहिए। कटघरा लटकाने के लिए क्षेत्र चुनते समय ये सोच में रखना जरूरी है कि कटघरा, तूफान, प्रचण्ड तूफान और औसत धंटेवार पवन की तेज़ी इत्यादी को बरदाश कर सकें। ज्यादातर, सुरक्षित खाड़ी, अनुप, और स्तिया क्षेत्र ही कटघरा लटकाने के लिए बेहतह है।

पानी की गुणता : चुनते हुए जल स्थान को कटघरा के बढ़ते



हुए स्टार्क को वहन करने की काफी क्षमता होती चाहिए। समुद्री स्थानों में नईट्रजन मात्रा को सीमित मानते हैं। लेकिन समुद्री जल की ऊँची संप्रवाहन से पादपप्लव उत्पादन में कम नईट्रजन का असर नहीं होता है। पानी का तापमान, प्राणवायु, पी.एच. नईट्रजन (अमोनिया, नैट्रेट, नईट्रईट) और क्लोरोफिल मात्रा इत्यादी पानी की प्राचलें को हर रोज कटघरा के अंदर और बाहर से ऊपरी भाग तक और निचला तल से प्रबाधक करना आवश्यक है।

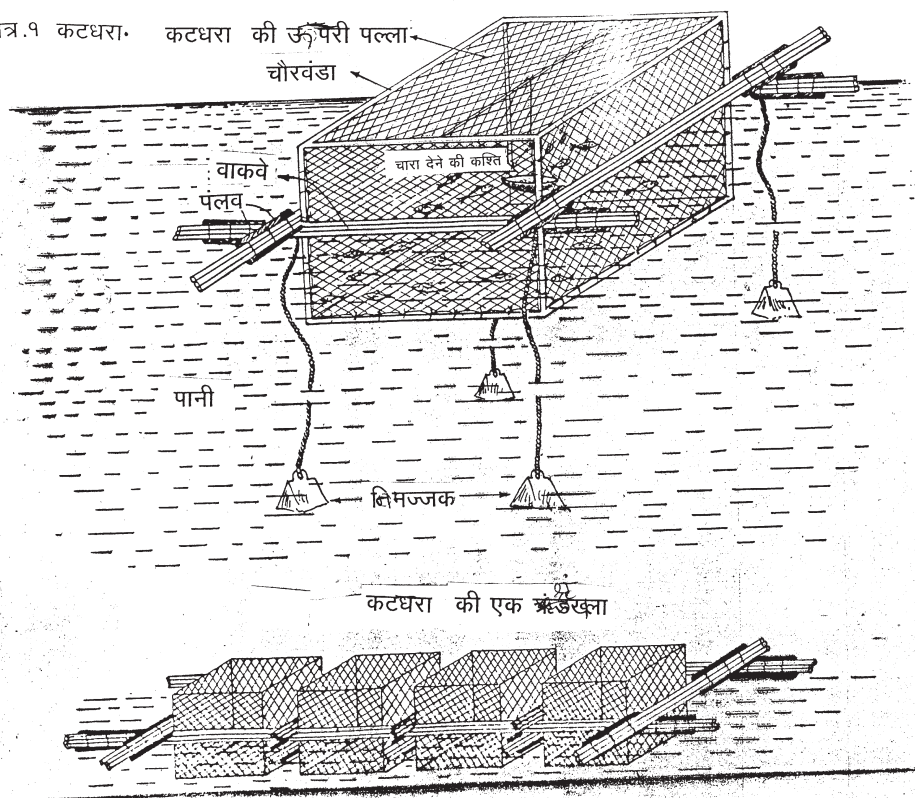
कटघरा की गढ़ना : चौटी को छोड़कर चारों ओर से बन्द साधारण कटघरा (1m x 1m x 1m) जो पोलिएथिलीन मोनोफिलमेन्ट निवार (2mm जाल के डोरे) से बना हुआ, ऐसी कटघरा ही बेहतर है। गढ़न के लिए 0.7 mm गांठ लोहे के दंड जो दो परत के प्रति-संक्षारक पेंट से लेपित है उसका उपयोग करना है। कटघरा को फंलोटे के सहारे से टाँगते हैं और उसके साथ काम करने वालों को मछलियाँ को देख भाल करने के लिए

‘वाकवेयस’ भी होना है।

कटघरा का बंधन : कटघरा को किसी छोट के पास बाँधना ही बेहतर होगा। लेकिन चुना हुआ क्षेत्र, किनारे से दूर होते तो मछली को संभालने के लिए कोई नाव का उपयोग करना पड़ता है। दोनों रीतियों में, मध्य में एक ‘वाकवे’ होना जरूरी है। कटघरा को बाँधते ने के लिए मज़बूत लंगर-कोनक्रीट ढाँचा जिस में जस्तेदार बोलंट है उस से कटघरा को लोहे के जंजीर या मोटी नैलान रसी से बाँधना है।

कटघरा - खुला समुद्र में : नम्य रबड़ का दाँचा, के कटघरा खुला समुद्र में उपयोग कर सकते हैं। ऐसी कटघरा के साथ ‘ब्रेकवाटर’ (पानी के ज़ोर के विरुद्ध एक घेरा) का उपयोग करते जो तटीय समुद्र वाली अधिष्टानों में लहर का असर कम करते हैं। ब्रेकवाटर होते हैं कानक्रीट दीवारों की, प्लावित सिन्थेटिक रबड़ से भरा हुआ फैबरग्लास मोड्युल (12mx 7m), ढाँचा का या प्लावेट टयर ब्रेकवाटर (पुराने ट्रक या मोटर कार के

चित्र. 9 कटघरा.



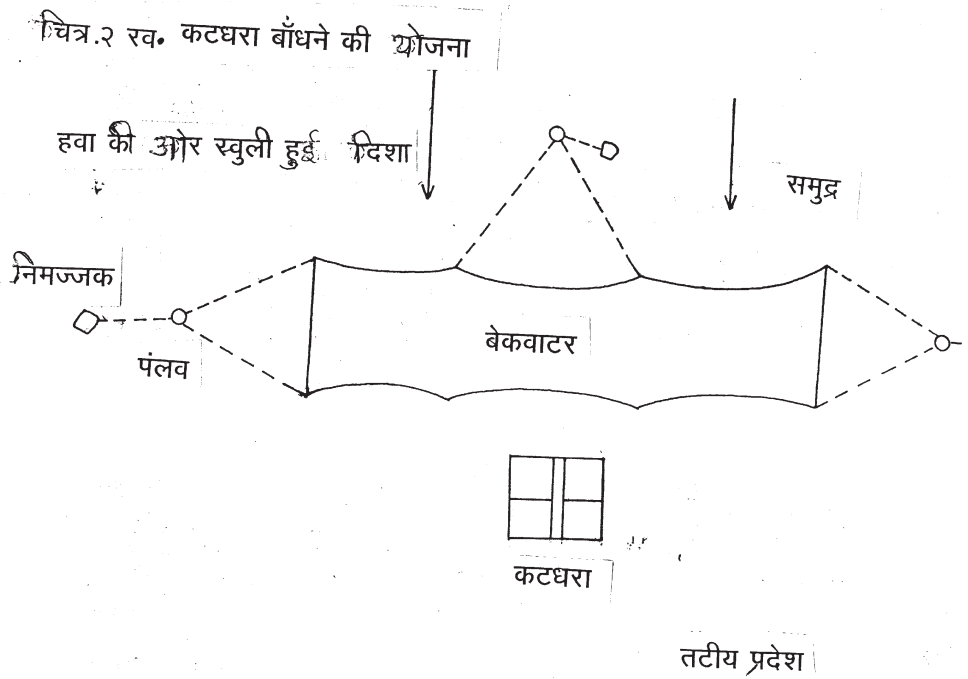
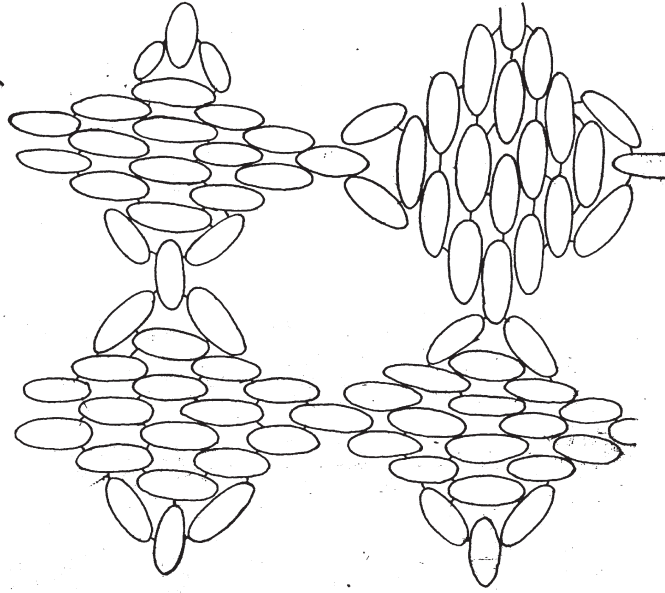
टयरों को जोड़ कर उपयोग करने वाले (चित्र : 2b)।

चारा देने की रीति : कटघरा में पली मछली को हस्त से खिला सकते या पोषक से। पोषक दो प्रकार के होते हैं : माँग के अनुसार खानेवाली और अष्वोचित पोषक। माँग पोषक माँग के अनुसार मछली को चारा देता है और दूसरा रीति में निश्चित अवधि पर चारा वितरण करता है।

सुविधाएँ और असुविधाएँ

I सुविधाएँ

1. प्रतियोगियों और परभक्षियों का आसानी से नियंत्रण
2. रोग का नियंत्रण
3. फसल काटने में आसानी, उत्तर जीविता



4. स्टाक को आसानी से स्थानांतरण करने की सुविधा
5. गढ़ने में आसानी
6. कटघरा में पल मछली की श्रेष्ठता-स्वाद में
7. कृषकों को सीमित जगह से ज़्यादा आमदनी

II असुविधाएं

1. शैवाल वृद्धि से कटघरा का जाल दूषित हो सकता है।
2. स्टाक बच सकते हैं।
3. कटघरा के अंदर का पानी प्रदूषित हो सकता है।
4. कटघरा तूफान से अधिक प्रदूषित हो सकता है।
5. स्टाक चोरी हो सकते हैं।

भारत में समुद्री मछली का कटघरा पालन : भारत में समुद्री मछली जैसे राबिटफिश (सिगानस कनालिकुलेटस, सिगानस जावस), गुपुर्ज (एपेनेफलस टैविता) और सांडू वैटिंग (सिल्लागा सिहामा) को कम खर्च वाली कटघरा में (1m x 1m x 1m) तटीय जलाशय में टाँग करके 1980 में पालन किए थे। (नम्मलवार आदी : 1996). उसके अनुसार, सिगानस कनालिकुलेटस में औसत वर्धन अनुपात 8.5mm /3.1 g /महीने थे, सिगानस जावस में 6.2 mm /2.0 g. थे एपिनेफलस टैवीना में 19

mm /87.3 gm थे और सिल्लागा सिहामा में 10mm /1.6 gm थे।

असंहार : संसार के खेती पालित मत्स्य, शेल फिश और क्रस्टेशियन्स के उत्पादन में कटघरा पालित मछली का योगदान सिर्फ 4% है (सजोद खान आदी 2003) भारत में मछली का कटघरा पालन आज भी प्रयोगात्मक और माननीकृत प्रौद्योगिकी की स्थिती पर है। कटघरा के छोटे जीवन अवधि, कटघरा बनाने की चीजों का अवमूल्यन और पालित उत्पादन की चुराई ये सब कटघरा पालन का प्रतिबंध है।

भारत के 2025 ए. डी तक की वार्षिक समुद्री पालित मछली का उत्पादन दो दशलक्ष डण तक अनुमानित है जिस में 0.1 दशलक्ष डण (5%) को समुद्री फिन फिश पालन से उत्पादन करने की प्रतीक्षा है (देवराज आदी : 1998)। इस लक्ष्य को साकार करने के लिए कटघरा पालन जैसी प्रौद्योगिकी का प्रचार करना है। इस के लिए, दीर्घ अवधि की कटघरा पालन, कृषियोग्य मछली का पहचान, भोजन और चारा का अनुपात का माननीकरण, मत्स्य की बीज संपत्ती का सर्वेक्षण और कृषिभोग्य समुद्री मछलियों की प्रभावित प्रजनन और कृत्रिम प्रचरण आदि रीतियों से आयोजित प्रयत्न करना है।



समुद्री शैवाल के पैदावार में अभिवृद्धि

रीता जयशंकर

केंद्रीय समुद्री मात्स्यिकी अनुसंधान संस्थान, कोचीन

भारत सहित और अनेक देश जैसे जापान, चीन और फिलिपीन्स में प्राकृतिक संपदाओं से समुद्री शैवालों का विदोहन वर्ष 1966 से शुरू हुआ। कच्चे माल की कमी और उद्योगों में समुद्री शैवालों की मांग के कारण उपर्युक्त देशों में समुद्री शैवाल की कृषि के लिए प्रेरणा बन गयी। चिली, कोरिया और दक्षिण आफ्रिका जैसे छोटे देशों में भी इस की कृषि की शुरुआत हुई। हाल के वर्षों में पैदावार किए गए शैवालों का वार्षिक उत्पादन भौगोलिक रूप से 10.7 मिलियन मेट्रिक टन है जिससे 5.6 बिलियन डोलर का राजस्व भी प्राप्त हुआ है। उपर्युक्त देशों में समुद्री शैवाल उद्योग इनके पैदावार पर निर्भर है और वहाँ प्राकृतिक संपदाओं का संरक्षण भी हो रहा है।

भारत में समुद्री शैवालों का विदोहन अभी भी प्राकृतिक संपदाओं से हो रहा है। प्राकृतिक रूप से विदोहित शैवालों में से अल्जिनोफाइड्स जैसे सरगासम वाइटी, एस. इलिसिफोलियम, एस. लॉजिफोलियम, एस. मेरियोसिस्टम, टर्बिनोरिया कोनाइडस, टी. आर्नेटे, टी. डकेरन्स; अगरोफाइड्स जैसे जेलीडियेला असिरोसा, ग्रासिलेरिया एडुलिस, और जी. क्रासा प्रमुख हैं। भारत के दक्षिण पूर्व तटीय क्षेत्रों में समुद्री शैवाल का संग्रहण, उपचार, सुखाना, पैकिंग, चढ़ाव और परिवहन स्थानीय मछुआरों को आय कमाने का एक अच्छा स्रोत है। सरगासम के श्रृंग काल में लगभग 2000 लोगों को रोजगार मिल जाता है। यह समझा जाता है कि अल्जिनोफाइडों का संग्रहण वर्ष में दो-तीन महीनों के दौरान किया जाता है। बल्कि अगरोफाइड का विदोहन पूरे वर्ष के दौरान पुनरुत्पादन अवस्था निर्विशेष में भी किया जाता है। अति विदोहन और फसल प्रबंधन के अभाव से अगरोफाइड जैसे प्राकृतिक शैवाल की कमी महसूस हो रही है। कच्चे माल की अनुपलब्धता के कारण तमिलनाडू के आसपास के कई अगर कारखाने बंद हो चुके हैं। शैवालों की कृषि ही संपदाओं की बढ़ोतरी का एकमात्र सुझाव है।



अगरोफाइट ग्रासिलेरिया के भौगोलिक वितरण और पुनरुत्पादन क्षमता के कारण हाल के वर्षों में इसकी कृषि समुद्री शैवालों की कृषि का एक मुख्य भाग बन गया है। शैवालों के पैदावार के लिए कई तरीके होते हैं। एक है कायिक खंडन और दूसरा पुनरुत्पादन बीजाणु।

(क) कायिक खंडन से कृषि : इस तरीके की कृषि अभितट और अपतट में भी किया जा सकता है।

I. अभितट कृषि

1. पी वी सी टैंकों में समुद्री शैवाल की कृषि
2. समुद्र जल के गुरुत्वाकर्षण बहाव से समुद्री शैवाल की कृषि
3. सिमेन्ट टैंकों में समुद्री शैवाल, मछली और द्विकपाटियों की बहु कृषि
4. समुद्र जल के चिटाव से समुद्री शैवाल की कृषि
5. ग्रीन हाउस में समुद्री शैवाल की कृषि
6. नियंत्रित पर्यावरण में प्रयोगशाला में समुद्री शैवाल की कृषि

II. अपतटीय कृषि

1. नारियल या नाइलोन की लंबी रस्सी में शैवाल की कृषि
2. नारियल या नाइलोन रस्सी के जाल में शैवाल की कृषि
3. स्थिर बेडा में शैवाल की कृषि
4. प्लवमान बेडा में खंडी रस्सियों से शैवाल की कृषि
5. प्लवमान बेडा में लंबी डोर से शैवाल की कृषि
6. नाइलोन से बनी हुई जालीदार फल थैली में शैवाल की कृषि

(ख) पुनरुत्पादन बीजाणु से शैवाल कृषि : यह कृषि भी अभितट और अपतट दोनों क्षेत्रों में किया जा सकता है। बीजाणुओं के मोचन और बीजाणु से छोटे पौधे की अवस्था तक यह कृषि अभितट पर किया जाता है परंतु छोटे पौधे से फसल काटने की स्थिति तक अपतट में किया जाता है।

बीजाणु मोचन

1. गोलाकार सिमेन्ट खंडों पर
2. निर्जीव मोलस्क कवचों पर
3. नाइलोन की रस्सी और चपटी नाइलोन धागे पर
4. पुराने मत्स्यन जाल के टुकड़ों पर

II. अपतट कृषि

1. नारियल रस्सी में गोलाकार सिमेन्ट खंडों को खड़ी रूप से लटकाकर शैवाल की कृषि
2. कंटकीय तार से बंधित स्थिर बेडा में शैवाल की कृषि
3. प्लवमान बेडा में बीजाणु रोपित खंडी नाइलोन रस्सी और मत्स्यन जाल में शैवाल कृषि
4. जाल में बीजाणु संलग्न के लिए प्लवमान बेडा में बीजाणु रोपण नहीं किए गए जाल बांधकर बीजाणु मोचन और इसकी कृषि की जाती है।

कायिक पैदावार (Vegetative cultivation)

शैवाल के टुकड़े नारियल रस्सी या नाइलोन रस्सी की मरोड़ में सन्निविष्ट करके या नाइलोन रस्सी से टुकड़े लंबी डोर रस्सी में बांधकर कायिक पैदावार किया जा सकता है। *ग्रेसिलेरिया इडुलिस* के टुकड़े को 2 x 2 वर्ग मी की नारियल रस्सी के जाल में सन्निविष्ट करके समुद्र में खड़े हुए चार कैसुरीना खंभों में बांध दिया जाता है। यह ध्यान दिया जाना है कि निम्न ज्वार के समय बांध दिया जाता है में समुद्री शैवाल वायु से अनावृत न हो। समुद्री शैवालों को तालाबों में बिखेरकर एक संवर्धन तरीके से या मछली तथा द्विकपाटियों के साथ बहु संवर्धन तरीके से पैदावार किया जा सकता है। *ग्रेसिलेरिया इडुलिस* को अभितट पर 250 लिटर पी वी सी टैंकों को सीढ़ीदार तरीके से रखकर समुद्र जल के गुरुत्वाकर्षण बहाव से पैदावार किया जा सकता है (कालियपेरुमाल आदि 2003)। कृत्रिम रोशनी और प्रकाश काल (photo period) की सहायता से ग्रेसिलेरिया की कृषि समुद्र जल के चिटाव से की गई है (लिग्नेल और पडेरसन

1986). प्राकृतिक अवस्था को सृजित करके समुद्री शैवाल को अलूमिनियम ढांचा और कांच से ढके हुए ग्रीन हाउस में समुद्र जल के चिटाव से पैदावार किया जाता है। सी एम एफ आर आइ के मंडपम क्षेत्रीय केंद्र में भी ग्रीन हाउस में समुद्री शैवाल का परीक्षणात्मक पैदावार किया गया है। कापाफैक्स जैसे समुद्री शैवाल को जालीदार फल की थैली में डालकर प्लवमान बेडा में पैदावार किया गया है और यह तो सफल भी देखा गया।

चिली देश में ग्रेसिलेरिया को उपज्वारीय बिस्तर और रेतीली तल पर एक मीटर लंबा, 0.1 मि मि मोटाई, 4 से मी व्यास के पोलिथीन ट्यूब में बांधकर पैदावार किया गया है (सैन्टलिस और फोंक, 1979)। चिली में इस तरीके को ज़्यादा लोकप्रियता मिली है क्योंकि यह लाभदायक है और प्राकृतिक तरीके से किया जाता है। इसका एक और गुण यह है कि अगर प्लास्टिक थैली टूट गई तो समुद्र तल में शैवाल का संस्तर बन जाएगा। ग्रेसिलेरिया के खंडन को रेत भरे प्लास्टिक थैलों में बांधकर समुद्र में स्थिर करने के लिए कांटेदार रोपण औजार का उपयोग किया जाता है।

पुनरुत्पादन तरीके से पैदावार (Reproductive method of cultivation)

चीन में लामिनेरिया, जापान में पोरफिरा और चिली में ग्रेसिलेरिया की कृषि इन शैवालों के जीवन चक्र की पूरी जानकारी प्राप्त होने के बाद ही सफल हुई। ग्रेसिलेरिया के जीवन चक्र में तीन स्तर होते हैं जिन में एक गुणी और द्विगुनी पीढ़ी होती हैं। बढ़ती की प्राथमिक अवस्था में इन दोनों पीढ़ियों को पहचानना मुश्किल है। लेकिन प्रौढ़ता के समय स्त्री पौधे को कायिक, पुरुष और द्विगुणित पीढ़ी से अलग किया जा सकता है क्योंकि स्त्री पौधे पर गोलाकार बीजाणु ग्रंथि पायी जाती है। बीजाणु ग्रंथि में काफी मात्रा में बीजाणु पाए जाते हैं जो द्विगुणित होती है। ये बीजाणु गोलाकार, लाल रंग और अचल होते हैं और ग्रंथि से निकलने के बाद समुद्र जल में डूबकर चिपकीला द्रव उत्पादित करके अनुयोज्य धरातल में लटक जाते हैं। बीजाणु विभाजित होकर धरातल के साथ दृढ़ रूप से संलग्न हो जाते हैं और बढ़ने लगते हैं। बीजाणु संलग्न के लिए सिमेन्ट के टुकड़े, प्लास्टिक

की रस्सी, नाइलोन की रस्सी, नारियल की रस्सी या मत्स्यन जाल उपयुक्त किया जा सकता है। इस के बाद की वृद्धि खुले समुद्र में की जाती है। भारत के दक्षिण पूर्व तट में बीजाणुओं के संवर्धन के लिए समुद्र में कैसुरीना खंभे लगाकर इनके चारों ओर कांटेदार तार को बांध दिया जाता है। उसी कांटों में बीजाणु रोपित नाइलोन धागों को समांतर बिस्तर की तरह लगाया जाता है। इस तरीके से सूर्य रश्मि सभी बीजाणुओं के ऊपर एक समान पड़ती है। समुद्र ज्वार ज़्यादा विक्षुब्ध नहीं होने वाले क्षेत्रों में इस तरह की शैवाल कृषि की जा सकती है।

भारत के दक्षिण पश्चिम तट में उपर्युक्त तरीके से समुद्री शैवाल कृषि नहीं की जा सकती, समुद्र ज्वार ज़्यादा विक्षुब्ध होने के कारण इस क्षेत्र में प्लवमान बेडा में (लंगर और प्लव के साथ) में शैवाल के बीजाणुओं को नाइलोन मत्स्यन जाल में संलग्न करके खड़ी रस्सियों में बांध कर पैदावार किया जाता है। प्रयोगशाला में उत्पादित समुद्री शैवाल के बीजाणुओं के अलावा प्राकृतिक तरीके से भी बीजाणुओं का संग्रहण किया जा सकता है। इस तरीके में एक ही बेडे में धरातल (नाइलोन रस्सी में बांधा हुआ मत्स्यन जाल) और बीजाणु रहित पौधे बांधा जाता है। विमोचित बीजाणु पौधे से निकलकर धरातल में खुद लग जाते हैं।

प्रतिकूल वातावरण के समय पर्यावरण को सुचारू रूप से नियंत्रित करके लामिनेरिया और पोरफिरा जैसे शैवालों के बीजाणुओं को पौधशाला में उपजाया जाता है। इस प्रकार वर्द्धित बीजाणुओं को आगे बढ़ने के लिए अनुकूल परिस्थिति में समुद्र के अंदर प्रतिरोपण किया जाता है। चीन और जापान जैसे देशों में समुद्री शैवाल की संवर्धन प्रौद्योगिकी की प्रगति से शैवाल उद्योगों की उल्लेखनीय सफलता के कारण देश की वाणिज्यिक आय में बढ़ती हुई है और इन दोनों देशों में यह उद्योग बागवानी उद्योग के बराबर है।

भारत में समुद्री शैवाल की कृषि और वाणिज्य शुरुआत के स्तर पर है और भविष्य में यह आकांक्षा है कि समुद्री शैवाल की कृषि वाणिज्य का एक मुख्य भाग बन जाएगा। ■



जीवंत खाद्य के रूप में रॉटिफर

मोली वर्गीस

केंद्रीय समुद्री मात्स्यिकी अनुसंधान संस्थान, कोचीन

आमुख

रॉटिफर दुनिया भर पाये जाने वाले जलीय, सूक्ष्मदर्शीय अकशेरुकियों का एक वर्ग है। कई पख मछलियों और कवचप्राणियों के डिम्भक अवस्था में खाद्य के रूप में सजीव रॉटिफरों का उपयोग किया जाता है। यह एक उत्कृष्ट खाद्य है और पर्याप्त मात्रा में जीवंत खाद्य के रूप में उपलब्ध हो जाये तो किसी भी स्फुटनशाला के लिए सफल सिद्ध होगा। रॉटिफेरा फाइलम के अधीन आने वाले ये “चक्र जंतुक” के नाम से मशहूर हैं। इनमें अधिकांश अलवणजल क्षेत्रों में और कुछ खारा जल क्षेत्रों में और समुद्री आवासों में भी रहते हैं। *ब्राकियोनस* जातियाँ जैसे वर्मिकाकार रॉटिफरों (loricate rotifer) में शरीर भित्ति एक वर्मिका (lorica) में घना होता है। इटो ने वर्ष 1960 में मछली डिम्भकों के लिए जीवंत खाद्य के स्रोत के रूप में *ब्राकियोनस प्लिकाटिलिस* का संवर्धन प्रस्तुत किया था और आज *ब्राकियोनिस* जातियाँ कई पख मछलियों और कवचप्राणियों के लिए अधिकतः स्वीकार्य और अनिवार्य जीवंत खाद्य है। इस दृष्टि में दुनिया भर इसका संवर्धन और प्रयोग होता है। इसकी छोटी सी आकृति, मंद तरण गति, उच्च सघनता में रहने की क्षमता, लवणता के विस्तृत परिसर में रहने की क्षमता, अनिषेकजनन द्वारा उच्च जनन दर और वसा अम्लों से आसानी से पुष्ट होने की क्षमता आदि इन्हें मछलियों की डिम्भक अवस्था के उत्कृष्ट खाद्य के रूप में स्वीकार करने के कारण हैं। अधिकतर हैचरियों में जीवंत खाद्य के रूप में *ब्राकियोनस प्लिकाटिलिस* और *ब्राकियोनस रोटण्डिफॉर्मिस* का अधिकतर उपयोग किया जाता है। आज और एक अति सूक्ष्म प्रभेद का भी पृथक्करण किया है जो *ब्राकियोनस रोटण्डिफॉर्मिस* से कहीं ज़्यादा छोटा है।

ब्राकियोनस जातियाँ पृथुलवणी होती हैं और उष्णकटिबंधीय और उपोष्णकटिबंधीय जलक्षेत्रों में वितरित है। ये निस्स्यंदक भोजियाँ है और स्वभावतः पादपलवक, (phyto plankton) अपरद (detritus) और जीवाणु (bacteria) निहित आहार खाते हैं। इनका जीवन चक्र 4-7 दिन है। ये चक्रीय अनिषेकजनन तरीके से पुनरुत्पादन करते हैं। ये लैंगिक या अलैंगिक जनन कर सकते हैं जिनमें अलैंगिक जनन साधारण है जो संवर्धन की अनुकूलतम समय में होता है। प्रतिकूल स्थितियों में, जैसे निम्न ऑक्सिजन स्तर, उच्च



संख्या सघनता, भोजन की कमी और पारिस्थितिक प्राचलों की विभिन्नता के समय लैंगिक जनन घटित होता है।

संवर्धन रीतियाँ

ब्राकियोनिया जातियों के संवर्धन में शामिल प्रमुख कार्य ये हैं: (1) समुचित सूक्ष्म ऐल्गे का संवर्धन (2) रॉटिफर का पृथक्करण और प्रभव संवर्धन विकास और (3) रॉटिफरों का अपस्केलिंग और बहुमात्र-उत्पादन।

इस उद्देश्य के लिए साधारणतया क्लोरेल्ला जातियाँ, नानोक्लोरोप्सिस जातियाँ, आइसोक्राइसिस जातियाँ, ट्रेट्रासेलमिस जातियाँ जैसे सूक्ष्म ऐल्गे का संवर्धन किया जाता है। इनके प्रभव संवर्धन केलिए वालेन्स तरीका का प्रयोग खूब प्रचलित है और बहुमात्र संवर्धन प्रक्रिया में समुचित अनुपात में अमोनियम सल्फेट, यूरिया और काल्सियम सूपर फोस्फेट जैसे फार्म रासायनों का उपयोग किया जाता है। इस माध्यम में ऐल्गे का एक छोटा सा संरोप का प्रयोग करना है और 3-5 दिनों में ऐल्गे प्रस्फुटन का संग्रहण किया जा सकता है।

संवर्धन की अगली कार्रवाई होती है पृथक्करण और रॉटिफरों का प्रभव संवर्धन विकास (stock culture development)। पर्याप्त मैग्नीट्यूड के एक बाइनोकुलर सूक्ष्मदर्शी के नीचे रखे एक सजीव प्राणिप्लवक नमूने से एक माइक्रो पिपेट की सहायता से रॉटिफरों का पृथक्करण किया जा सकता है। एक प्रभव संवर्धन विकसित करने के लिए कुछ अंडयुक्त नमूनों को ऐल्ल संवर्धन निहित एक छोटे टेस्ट ट्यूब में स्थानांतरित करना है। रॉटिफरों का अनिषेकजनन द्वारा तेज़ बहूकरण होता है और 3-4 दिनों के अंदर पर्याप्त सांद्रता के प्रभव संवर्धन प्राप्त हो जाएगा।

बड़े पारभासी (ट्रान्सलूसेन्ट) टैंकों में डालकर संवर्धकों का अपस्केलिंग किया जा सकता है। यहाँ रॉटिफरों को रोज़ ऐल्गे से खिलाना है। संग्रहण रीति और संवर्धन टैंकों के आकार के अनुसार तीन तरीकाओं से अधिक मात्रा में संवर्धन किया जा सकता है।

1) बैच संवर्धन : इस तरीके में एक टैंक में उत्पादित कुल संवर्धन का संग्रहण किया जाता है और कुछ हिस्से को अगले संवर्धन के लिए संरोप के रूप में उपयोग करता है।

2) अर्ध-सतत संवर्धन : इस तरीके में आवधिक संवर्धन के ज़रिए रॉटिफर सघनता को स्थिर रहने का प्रयास करता है। संग्रहित रॉटिफरों की मात्रा का निर्धारण एक दिन में संवर्धन केलिए आवश्यक सघनता की मात्रा के अनुसार किया जाता है। इस तरीके में प्रयुक्त संवर्धन टैंक बैच संवर्धन में उपयोगित टैंक से भी बड़ा हो सकता है।

3) निरन्तर संवर्धन : हाल में, संवर्धन स्थिरता में प्रगति लाने और मज़दूरी और प्रयास कम करने की दृष्टि में योंग फ्यू आदि ने वर्ष 1997 में एक स्वचालित निरन्तर संवर्धन तरीका विकसित किया। इस प्रणाली में एक निरन्तर एकक, एक संवर्धन एकक और एक संग्रहण एकक हैं। इस तरीके में रॉटिफर संवर्धन टैंक में एक पूर्व-निर्धारित दर के अनुसार निरन्तर जल और खाद्य का निरन्तर आपूर्ति की जाती है और उसी मात्रा के संवर्धन जल को संग्रहण टैंक में स्थानांतरित किया जाता है ताकि विशेष जीवमात्रा के रॉटिफर उपलब्ध हो जाए।

ऐल्गे के अलावा समुद्री यीस्ट कान्डिडा जाति और बेकेर्स यीस्ट साक्रोमाइसेस सेर्वीसिए को भी रॉटिफरों के खाद्य के रूप में उपयोग किये जाते हैं। इन सभी खाद्यों में डिम्बकों केलिए अत्यन्त अनिवार्य उच्च असंतृप्त वसा अम्ल HUFA निहित नानोक्लोरोप्सिस जाति को सबसे उत्कृष्ट खाद्य माना जाता है।

संवर्धन प्रणालियों में रॉटिफरों की जनन दर और बढ़ती खाद्य की गुणता और मात्रा, लवणता, प्रकाश, तापमान, विलीन ऑक्सिजन, पीएच और अमोनिया पर आश्रित रहती है। निर्धारित मूल्यों की सीमा में इन भौतिक रासायनिक विशेषताओं को बनाये रखने केलिए मोनिटरन के साथ साथ सीलियेट्स, कोपिपोड्स और अपरद आदि अनावश्यक जीवों और वस्तुओं का दूरीकरण संवर्धन की अच्छी स्थिति कायम रखने के लिए अनिवार्य है।

संवृद्धि : समुद्री मछली डिम्बकों को HUFA बहुत ही आवश्यक



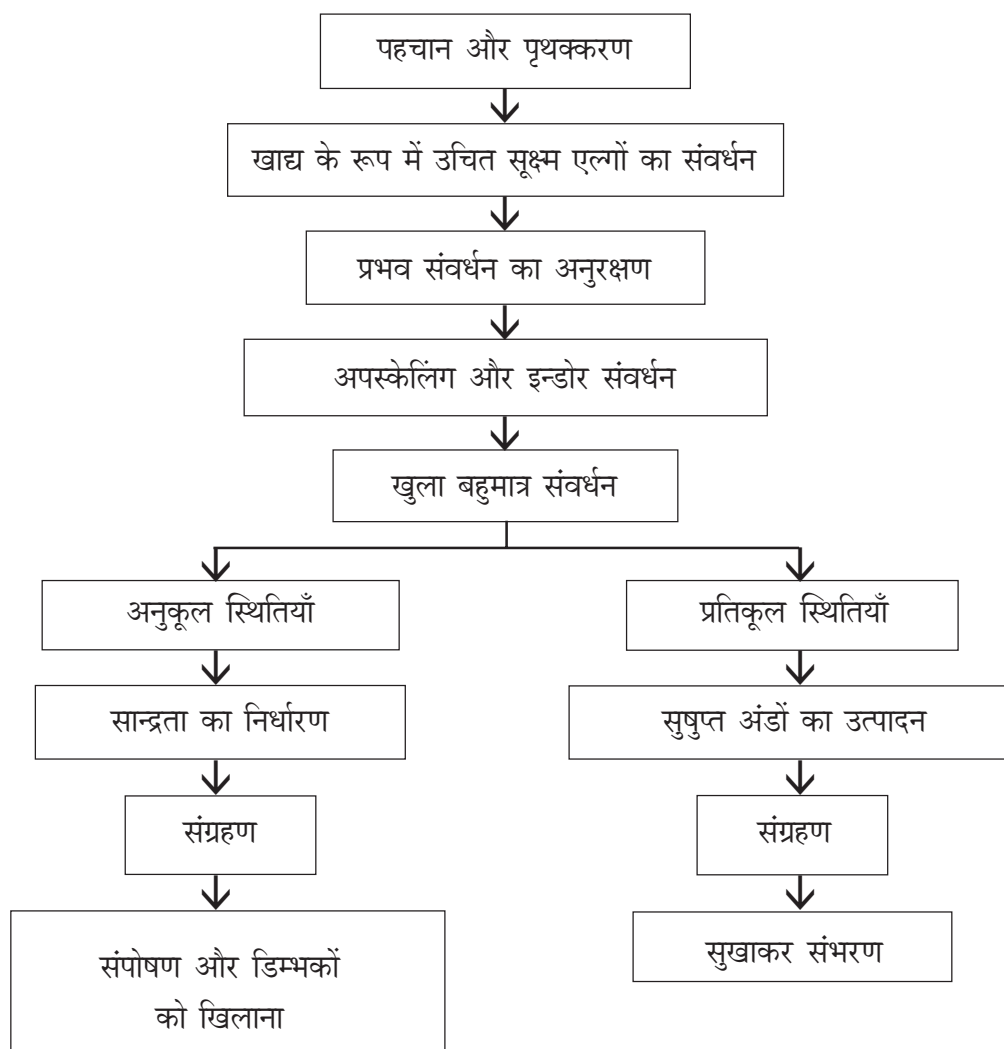
है। इसलिए डिम्बकों को खिलाने के पहले रोटिफरों में इन कोम्पाउन्ड्स की मात्रा बढ़ाना अनिवार्य है। इसकेलिए डिम्बकों को जीवंत खाद्य के रूप में देने के पहले रोटिफरों को सूक्ष्म ऐल्गो, लिपिड एमेलघन्स, मछली तेल, लिपिड निहित माइक्रोकाप्स्यूल्स, आदि से खिलाकर एच यू एफ ए बढ़ाने की रीति प्रचलित है। रोटिफरों के पोषण मूल्य बढ़ाने के लिए प्रत्यक्ष और परोक्ष रीतियों का स्वीकार किया जा सकता है। प्रत्यक्ष रीति में संग्रहित रोटिफरों को 6-12 घटों तक पोषणजोड़ तल में डालते हैं और परोक्ष रीति में पोषण को खाद्य में जोड़कर

रोटिफरों को खिलाते हैं।

संग्रहण

डिम्बकों को खिलाने लायक आकार प्राप्त रोटिफरों को उपयुक्त छालनियों के ज़रिए संग्रहण किया जा सकता है। संग्रहण में नियमित अंतराल, संवर्धन को लंबे समय तक अच्छी स्थिति में ले जाने के लिए सहायक होगा। डिम्बकों को जीवित खाद्य के रूप में खिलाने के पहले संग्रहित रोटिफरों को निर्यदिता समुद्र जल में साफ करना चाहिए।

रोटिफर संवर्धन का प्रवाह संचित्र



झींगा एवं मछली - स्वास्थ्य प्रबंधन के बदलते समीकरण

मात्यू एब्रहाम, आज़ाद आई.एस

केंद्रीय खारा जलजीव पालन अनुसंधान संस्थान, चेन्नै

भूमिका

आठवें व नवें दशक के पूर्वार्द्ध में चिल्का झील के किनारे वर्षापूरित तालाबों में पी. मोनोडान युक्त झींगा कृषि की सरलतम पद्धति अपनाई गई। इन तालाबों से वर्ष में दो बार फसल हुई। संग्रहण सघनता लगभग 25,000/- हे. थी। ऐसे तालाबों से उच्चतम रिकार्ड उत्पादन 1611 कि.ग्रा./हे वर्ष रहा तथा औसत उत्पादन 600 कि.ग्रा./हे/वर्ष था। आठवें दशक के मध्य तक कुल झींगा उत्पादन में पालित झींगों का योगदान अत्यल्प था। कुल उत्पादन का 15,000 मे. ट. पालित झींगे ज्यादातर पश्चिम बंगाल व केरल के पारंपरिक झींगा कृषि क्षेत्रों से उत्पादित थे। आठवें दशक के उत्तरार्ध व नवें दशक के दौरान वैज्ञानिक झींगा कृषि के अधीन क्षेत्र के विस्तार के कारण झींगा कृषि के योगदान में महत्वपूर्ण बढ़ोतरी हुई। 1989-90 में पालित झींगा उत्पादन 30,000 मे. ट. से बढ़कर 1994-95 में 82,850 मे. ट. हो गया। खारेपानी में मत्स्य जलकृषि अपने शैशवकाल में है। भेटकी (लैटिस कैल्कैरिफर) ग्रुपर तथा मुल्लेट का जलकृषि उत्पादन के उत्पत्तिक अवसर हैं। हमारा संस्थान भेटकी के नियंत्रित प्रजनन में महत्वपूर्ण उपलब्धि प्राप्त कर चुका है। संभावित रोग समस्याओं की घंटी बज चुकी है। सीबास के स्फुटनशाला उत्पादित बीजों के एक, दो मामलों में नोडो वाइरस संक्रमण देखा गया। अतः मत्स्य स्वास्थ्य प्रबंधन को बहुत-ही योजनाबद्ध करना है।

1. स्वास्थ्य प्रबंधन - न कि रोग प्रबंधन

विश्वभर में झींगा जलकृषि के टिकाऊ विकास में रोग एक बहुत बड़ी रुकावट है। सामान्यतया यह महसूस किया जाता है कि जलकृषि प्रणाली में रोग के प्रकोप - पर्यावरिक ह्रास, प्रक्षेत्र जल गुणवत्ता की अपर्याप्तता, घटिया पोषण, उच्च संग्रहण सघनता तथा संवर्धन के कारण प्राणियों पर संयुक्त दबावों से घनिष्ठ रूप से संबंधित है। यद्यपि झींगा जलकृषि में अत्यधिक फैले हुए रोग के प्रकोप क्षेत्रों व स्थानों के बीच, झींगा प्रजनक,

डिम्भक, डिम्भकोत्तर परिपवहन, नये क्षेत्रों तथा रोग मुक्त आबादी में विदेशी रोगजनकों के प्रवेश से भी स्पष्टतः संबंधित है।

झींगों में अत्यधिक संक्रामक रोगों के प्रकोप को क्वारेंटाइन सावधानी, रोगनिरोधक चिकित्सा तथा उन्नत प्रक्षेत्र प्रबंधन कार्यों द्वारा कम किया जा सकता है। यद्यपि “गुड आन-फार्म मैनेजमेंट” कार्य जिसे सभी कृषक बड़े ही उत्साह से अपनाना चाहते हैं वे महंगे होते हैं तथा संवर्धन हेतु उचित स्थान चयन, प्रक्षेत्र डिजाइन, प्रवेशी जल की गुणवत्ता, आहार का पौषणिक स्तर तथा बीजों की गुणवत्ता जैसी मूलभूत आवश्यकताएँ सही न होने पर प्रभावकारी भी नहीं होते। कृषकों को मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति विश्व के कई क्षेत्रों में एक चुनौती है। इस उद्देश्य की प्राप्ति हेतु सभी पणधारकों का सहयोग अत्यंत आवश्यक है। यह बात विशेषकर वैज्ञानिक समुदाय पर लागू होती है जिससे प्राथमिक क्षेत्रों में शोध की तीव्रता बढ़ाकर इस प्रक्रिया में महत्वपूर्ण योगदान दिया जा सकता है।

शोध हेतु प्राथमिक क्षेत्र हैं :

1. झींगों के जीवन चक्र पर पूर्णतः नियंत्रण हेतु झींगा प्रजनकों में आनुवंशिकी उन्नति।
2. विशिष्ट रोगाणु मुक्त या रोगाणु प्रतिरोधी गुणवत्ता युक्त पश्च डिम्भक का उत्पादन।
3. प्राकृतिक व कृत्रिम आहार की आहारिय गुणवत्ता बढ़ाना।
4. शीघ्रगामी, उचित व कम लागत युक्त निदान तकनीकों का विकास।
5. कम लागत युक्त व सफल जल पुनर्संचरण तंत्र का विकास।
6. नई जैवसंवर्धन व जीवोपचार तकनीकों का विकास।
7. झींगा प्रतिरक्षा, प्रतिरक्षा नियंत्रकों तथा प्रतिरक्षा उद्दीपकों पर अनुसंधान बढ़ाना।

गुणवत्ता को अच्छी बनाने व इन अनुसंधानों के परिणामों की उपयुक्तता हेतु यह आवश्यक हो जाता है कि वैज्ञानिकों तथा झींगा जलकृषकों के मध्य अन्तर्क्षेत्रीय सहयोग बढ़ें। इसे उन्नत सूचना विनिमय, कोलॉबरेटीव रिसर्च नेटवर्किंग तथा अन्तर्क्षेत्रीय

निरीक्षण द्वारा आसानी से प्राप्त किया जा सकता है। इसके अलावा टिकाऊ झींगा जलकृषि हेतु अन्तर्राष्ट्रीय दाता समुदाय द्वारा प्रदत्त सहायता को मजबूत करना तथा अन्तर्क्षेत्रीय सहयोग को सुसाध्य बनाना अत्यावश्यक है। इसके अतिरिक्त सोद्देश्य प्रयुक्त अनुसंधान को बढ़ाने तथा उसे सुसाध्य बनाने के लिए उचित व सामंजस्य आधारित क्षेत्रीय तथा राष्ट्रीय नीतिगत ढाँचे के विकास व कार्यान्वयन में देश की सरकारें भी उतनी ही उत्तरदायी हैं।

2. स्वास्थ्य प्रबंधन हेतु पारिस्थितिकूल प्रौद्योगिकियाँ:

स्वास्थ्य प्रबंधन में परपोषी, रोगाणु व पर्यावरण ध्यान रखना आवश्यक होता है। कुछ पारिस्थितिकूल प्रौद्योगिकियाँ नीचे दी गई हैं:

(क) रोगजनकों से बचना तथा उनका निरोध :

विषाण्विक रोगों के संबंध में अब तक कोई उपचार की जानकारी नहीं है। अच्छा यह होगा कि संवर्धन प्रणाली में रोगजनकों के प्रवेश को रोका जाए। संक्रमित डिम्भक, दूषित जल, आहार या वाहक जन्तु किसी के द्वारा भी रोगाणु संवर्धन प्रणाली में आ जाते हैं।

(ख) झींगे के प्राकृतिक रक्षा तंत्र को बढ़ाने की विधियाँ :

यद्यपि पी सी आर परीक्षा बीजों में विषाणु का पता लगाने में सहायक है परंतु यह अपने आप में पूर्ण नहीं है। तालाबों में पी सी आर नकारात्मक बीजों के संग्रहण के बावजूद रोग के प्रकोप पाए गए। व्हाइट स्पॉट विषाणु विभिन्न वाहक जन्तुओं (केकड़े, कॉपिपोड, अनियंत्रित झींगों), जल इत्यादि से संवर्धन प्रणाली में प्रवेश करते हैं जबकि झींगों में रोगाणु जीवों, जीवाणुओं तथा विषाणुओं के विरुद्ध स्वयं प्राकृतिक रक्षा प्रणाली युक्त होती है। वर्तमान अध्ययनों से पता चला कि झींगों में इस प्राकृतिक रक्षा प्रणाली को बढ़ाया जा सकता है तथा प्राणियों में प्राकृतिक रक्षा को बढ़ाने वाले पदार्थों के लिए प्रतिरक्षा उद्दीपक शब्द का प्रयोग किया जाता है। कई प्रतिरक्षा उद्दीपक सूक्ष्मजैविक स्रोत से उत्पन्न अणु हैं। इनमें लिपोपॉलिसेकराइड, ग्लुटान, पेप्टाडोग्लाइकान इत्यादि सम्मिलित हैं।



3. जैवप्रौद्योगिकी औजार :

(क) स्थानिक व विशिष्ट प्राणिजात का जीनोम संग्रह तैयार करना

डी.एन.ए. फिंगर प्रिंटिंग व डी.एन.ए. मार्किंग के जैवप्रौद्योगिकी औजार स्थानिक व विशिष्ट तटीय प्राणिजात तथा वनस्पति की पहचान करने, उनकी विशेषता बताने तथा उनके संरक्षण में सहायता करते हैं। तटवर्ती क्षेत्र में कुछ जलीय पादप व जन्तु की प्राजातियों में औषधीय तथा अन्य व्यावसायिक उपयुक्तता पायी गई। इन जैविकों के औद्योगिक उपयोग हेतु इन स्रोतों को पहचानना तथा सूचीबद्ध एवं संरक्षित करना है।

(ख) ट्रांसजेनिकस तथा आनुवंशिकतः परिवर्तित जीव (GMO)

ट्रांसजेनिक मछलियों के उपयोग द्वारा मत्स्य उत्पादन बढ़ रहा है अन्यथा मछलियों को पण्य आकार प्राप्त करने में लगभग एक वर्ष या उससे अधिक समय लगता है। ट्रांसजेनिक वृद्धि विशेषकों में सहायता करते हैं जो कि वृद्धि को बढ़ा सकता है तथा जिससे संवर्धनावधि कम हो जाती है। यह प्रौद्योगिकी हमें जलीय प्रणाली में स्वतः स्वच्छ होने के लिए समय तथा प्राकृतिक अनुकूलन प्रदान करने में समर्थ है अन्यथा यह संभव नहीं है।

(ग) वैक्सिक, प्रोबायोटिक तथा बायोरेमेडियेशन

वैक्सिन बहुत-ही प्रभावकारी एवं पारिस्थितिनुकूल औजार है जोकि जलीय पर्यावरण में रोगों से बचाव व उनके नियंत्रण में सहायता प्रदान करता है। प्रोबायोटिक तथा बायोरेमेडियेशन औजार पर्यावरण को और अधिक संपोषित रखने, परपोषी में रोग-प्रतिरोध क्षमता बढ़ाने तथा हानिकारक रसायनों व प्रतिजैविकों का उपयोग कम करने में सहायता प्रदान करते हैं। उपयोगी जीवाणुओं का जाँच व चयन किया गया प्रचुर उद्भव, जो जलीय जीवों के स्वास्थ्य स्तर को उन्नत बनाने की क्षमता प्रदान करता है तथा रोगाणुओं की रोगजनकीय क्षमताओं को कम करता है। इसी कारण प्रोबायोटिकों के विकास पर बल दिया गया है। बायोरेमेडियेशन जैविक एजेंटों के उपयोग का कार्य करते हैं जिनमें तटीय उत्पादन तंत्र से हानिकारक यौगिकों को

निकालने या उस क्रिया में सहायता प्रदान करने की क्षमता होती है।

(4) शमनोपाय

भारत में झींगों का प्रमुख स्थल आंध्र प्रदेश में नेल्लूर है। यहाँ 1994-95 में पहली बार झींगा वायरल रोग का प्रकोप पाया गया। जिसे साइटोमिक एक्टोडर्मल एंड मीसोडर्मल बेक्यूलो वायरस रोग (SEMBU) नाम दिया गया। झींगे के इस भयंकर वायरल रोगजनक पर विश्वभर में किए गए अध्ययनों के आधार पर व्हाइट स्पॉट वायरस के रूप में इसका पुनर्नामकरण किया गया। पालित झींगों का उत्पादन 1994-95 में 82,850 मे. ट. से अचानक गिरकर 1995-96 में 70,753 मे. ट. हो गया। इस रोग के कारण लगभग 12,000 मे. ट. की हानि हुई। एम.पी.ई.डी.ए. WSV रोग के कारण प्रतिवर्ष 300-350 करोड़ रु. के 10,000 से 15,000 मे. ट. पालित झींगों की हानि का आकलन किया।

रोग की समस्याओं का सामना करने के लिए वैकल्पिक कृषि प्रौद्योगिकियों का समर्थन किया गया। कृषकों के पास झींगा कृषि हेतु मड केकड़ा, भेटकी, मूल्लेट, मिल्क मछली का पालन, मछली व झींगा का मिश्रित पालन इत्यादि वैकल्पिक विधियों के विकल्प उपलब्ध हैं जिससे रोग के प्रभाव को कम करने के लिए फसल का आवर्तन किया जा सकता है।

हजर्ड एनालाइसिस एंड क्रिटिकल कंट्रोल पाइंट दूसरी संकल्पना है जिसका जितना जल्दी कार्यान्वयन हो उतना ही अच्छा है। यह गुणवत्ता आश्वासन प्रणाली है जो नई WTO व्यवस्था में आहार उत्पादन प्रणाली में अनिवार्य होगी। HACCP संकल्पना मुख्यतः बीमारी व नुकसानदायक कारकों का पता लगाने तथा क्रिटिकल नियंत्रण बिंदुओं को पहचानने तथा बचाव न्यूनीकरण या कुछ मामलों में खतरों से पूर्णतः मुक्ति हेतु नियंत्रण मानदण्डों को स्थापित करने के संबंध में कार्य करती है। प्रदूषक, रोगाणु, रसायन, संदूषक, प्रतिजैविक जैसे पदार्थों के अव्यवस्थित उपयोग को जलकृषि में आपद स्थितियों से संलग्न देखा गया। ■

खारा पानी खेतों में पर्यनुकूल और टिकाऊ झींगा पालन

पी.के.मार्टिन तोम्पसन और पी.एम.

अबूबक्कर, कृषि विज्ञान केंद्र,

केंद्रीय समुद्री मात्स्यिकी अनुसंधान संस्थान, कोचीन

हाल में खारा पानी झींगा पालन कई कारणों से संकर कार्य बन गया है. झींगा पालन में लाभ और नष्ट अनिश्चित हो गया है. पर्यनुकूल कृषि रीतियों से बाक्टीरिया और वैरस जनित रोगों का नियंत्रण बड़े तौर पर किया जा सकता है.

क्षेत्र

भारत के समुद्र तटों के 11,90,000 हेक्टर क्षेत्र झींगा पालन के लिए अनुयोज्य देखा गया है जबकि इस में से 1,47,837 हेक्टर क्षेत्र में झींगा पालन हो भी रहा है. केरल की बात ली जाएं तो परंपरागत नवनीकृत, परंपरागत विस्तृत और अर्ध तीव्र, जैसे पालन रीतियों से पलन 14,705 हेक्टरों में हो रहा है.

खेत की तैयारी

खेत की तैयारी करते वक्त निम्नलिखित बातों पर ध्यान दी जाएं.

अर्धतीव्र और विस्तृत पालन प्रणालियों में परभक्षी जीवियों और जंगली मछलियों का दूरीकरण पहला कदम है. इसके लिए माहुआ, क्रोटन टी सीड आदि से बनाए खलियों का प्रयोग किया जाता है. इन में से टी सीड खली प्रभावकारी और आसान देखा गया है. खेत से पानी निष्कासित करके 0.25 मीटर गहरा की पानी में प्रति हेक्टर को 100 कि ग्राम की दर में टी सीड खली का मिलावट करें. खेत में मौजूद परभक्षी मछलियों और मिट्टी के अंदर रहनेवाली सर्पमीनों (ईल) का निष्कासन इस से साध्य होता है. इसके बाद पानी के जैव कीचड़ और मिट्टी निकाल देता है. खेत को फिर सारे क्षुद्रजीवों के मर जाने तक धूप में सुखाता है. बीचों बीच जुताई भी करता है ताकि नीचे की मिट्टी का ऑक्सीकरण हो जाए. मिट्टी का पी एच स्थिर रखवाने और पूरे पालन काल में आरोग्यपूर्ण स्थिति के



अनुरक्षण केलिए तालाब के तल में तेज चूने से उपचार किया जाए. धूप में सुखाने पर सूख न जानेवाले खेतों में 150-200 कि ग्रा/ हेक्टर जूलैट और 25-50 कि ग्रा हेक्टर सोइल प्रोबियोटिक्स से उपचार करना पड़ेगा.

चूनायन

मिट्टी के पी एच के स्थायीकरण केलिए पहली और दूसरी जुताई के बाद दो बार चूनायन किया जाए.

मिट्टी का उर्वरीकरण

खेत में पादपप्लवकों के स्थायीकरण और वर्धन केलिए अजैविक उर्वरक जैसे अमोनियम सल्फेट और सूपर फोस्फेट, डोलोमाइट के साथ प्रति हेक्टर में 100 कि ग्रा की दर में दूसरी जुताई के बाद प्रयोग किया जाए.

क्लोरीकरण

झींगा खेतों के क्लोरीकरण केलिए ब्लीचिंग पाऊडर कालश्रयम हाइपो क्लोराइट का प्रयोग व्यापक रूप से होता है. 1.2 मी गहराई के पानी में प्रति हेक्टर खेत में 400-500 कि ग्राम ब्लीचिंग पाऊडर का प्रयोग कर सकता है. क्लोरीकरण की सफलता शाम को अधिक होता है. क्लोरीकरण करके 24 घंटे बीत जाने पर डीक्लोरीकरण शुरू होता है; खेत तीन दिवसों तक इसी अवस्था केलिए खुला रखना है. इसके बाद पानी से क्लोरीन के अंश निकालने केलिए प्रति हेक्टर 150-200 कि ग्राम डोलोमाइट का प्रयोग करना भी है. क्लोरीकरण से पानी के शुद्धीकरण के साथ पानी के जीवजातों व सूक्ष्म अंडों का नाश भी होता है.

पानी की गुणता

पानी में पादपप्लवकों के फुल्लन केलिए प्रति हेक्टर में 35 और 12 कि ग्राम की दर में यथाक्रम अमोनियम सल्फेट और सूपर फोस्फेट के प्रयोग से पानी का उर्वरण किया जाता है. सूखे मुर्गी खाद और गोबर भी इसकेलिए इस्तेमाल किया जा सकता है. पानी का स्वर्णिम हरित रंग पानी में जीवप्लवकों का अच्छी मात्रा सूचक है इस समय पानी की पारदर्शिता 25-35 से मी होगा जब बीजों को संग्रहण किया जा सकता है.

शिशु झींगों (बीजों) का चयन

झींगा पालन की सफलता बीजों की गुणवत्ता पर निर्भर है. इसलिए बीजों का चयन करते वक्त निम्नलिखित बातों पर ध्यान दिया जाना चाहिए.

- 1) 18-22 पी एल आकार के शिशु झींगों का चयन करें.
- 2) पारदर्शी और पिगमेन्टवाले शिशु झींगे स्वास्थ्यपूर्ण होगा।
- 3) आहार नली आहार से भरा हो और पेशी मसल व आंत्र (गट) का अनुपात 4:1 हो.
- 4) बाह्य चोट या रोग से पीडित शिशु झींगों की उपेक्षा करें.
- 5) स्ट्रेस टेस्ट और विब्रियो बाक्टीरिया काऊन्ट चेक के बाद बीजों का चयन करें.

शिशु झींगों का संग्रहण

ऐसे चुने गए बीजों को सीधे खेत में रोपित करें. पानी की लवणीयता, तापमान और पी एच का अनुकूलन हर 10-15 मिनिटों में करते रहे. रोपण केलिए अनुकूल समय सुबह और शाम है. अतिजीविता दर समझने का मार्ग एक हापा में मिलनेवाले बीजों की संख्या जो कि 200-300 बीज होगा, कि गिनती है. प्रत्येक 24 घंटे और 48 घंटे में यह किया जाना है. अर्धतीव्र पालन प्रणाली में प्रति हेक्टर में 30000-50000 पुलि झींगा बीजों का संग्रहण किया जा सकता है.

फसल प्रबंधन

झींगों के स्वास्थ्यपूर्ण बढ़ती केलिए पानी प्रबंधन अनिवार्य है. यह पानी के रंग के मॉनिटरन से किया जाता है. 10 दिनों के अंतराल में प्रति हेक्टर खेत में 75 कि ग्राम डॉलेमाइट का प्रयोग होता है. इसके सिवा प्रति हेक्टर पर 75 कि ग्रा चूने का प्रयोग भी वांछित है. रोगजनक बाक्टीरियाओं के रोकथाम केलिए वाटर प्रोबियोटिक्स का प्रयोग भी किया जा सकता है. विब्रियो जनित रोगों के रोकथाम केलिए नीम खली और मेथिलिन ब्लू से उपचार किया जा सकता है. प्रति हेक्टर पर 35 कि ग्राम नीम खली की दर में 18 घंटों तक पानी में भिगोकर 90 ग्राम



मेथिलीन ब्लू से संयोजित करके खेत में साप्ताहिक अंतरालों में इसका प्रयोग करते हैं। इसके प्रयोग के बाद 4 दिनों में पानी विनिमय नहीं करना है। मेथिलीन ब्लू, नीम की खली के सान्निध्य में सक्रिय होते हुए वाइट स्पॉट रोग का रोकथाम करते हैं। नीम खली लायिनी फंगे के निरोधक के रूप में काम करते हुए फंगे से होनेवाले द्वितीयक रोगों का रोकथाम करती है।

पानी विनिमय

पालन काल में पानी की गुणता का अनुरक्षण अनिवार्य है। पहले 40-50 दिनों में जब पालन जीव का भार 10-15 ग्राम होगा तब अपशिष्ट वस्तुओं का संचयन कम होगा। फिर भी जैविक अपशिष्टों के संचयन का मोनिटरन करना उचित होगा। पालन-जीव 15-30 ग्राम के हो जाने पर जैविक अपशिष्ट बढ़ जायेगा। इस समय में 20-30% पानी का विनिमय आवश्यक है। पानी विनिमय के साथ साथ जियोलेट और प्रोबियोटिक का प्रयोग भी करना है जिससे मिट्टी में पैदा होनेवाला विषालू वायुओं का नियंत्रण हो सकता है। पानी विनिमय का अनुयोज्य समय रात है, फिर भी अर्ध तीव्र संवर्धन रीति में समय-समय पर पानी विनिमय आवश्यक माना गया है।

आहार और आहार प्रबंधन

झींगा पालन में आहार का महत्वपूर्ण स्थान है। शिशु झींगों के संग्रहण के साथ ही आहार दिया जाना है। शुरुआत में प्रतिदिन एक लाख झींगों को 1-1.5 कि ग्राम आहार की दर में खिलाता है। आहार प्रतिदिन 500-600 ग्रामों में बढ़ाते बढ़ाते 30 दिवसों तक खिलाना है। इसके बाद झींगों की अतिजीविता दर और शरीर भार को आँकते हुए माँग के अनुसार की आहार-मात्रा से खिलाना है।

स्वास्थ्य और रोग प्रबंधन

आरोग्यपूर्ण बढ़ती केलिए खेत में स्वस्थ स्थितियों का अनुरक्षण होना चाहिए। खेत के नितलस्थ तल में अनुपयोगित आहार, गले हुए जैव पदार्थ, विषाणु वायु जैसे हाइड्रोजन सल्फाइड, अमोनिया और नैट्रेट का संचयन होने की संभावना है। इस केलिए खिलाने के आहार आवश्यक दर में ही दिया जाना है। मिट्टी के ऑक्सीकरण केलिए जियोलेट, सोइल प्रोबियोटिक्स और पानी का विनिमयन आवश्यक है। पानी गुणता प्राचल जैसे पी एच, लवणीयता, विलीन आक्सीजन और पादप्लवक सान्द्रता का अनुकूलतम अनुरक्षण किए जाने चाहिए।

नितलस्थ में होनेवाले पर्यावरणिक व्यतियान से बाक्टीरिया, वैरस, प्रोटोजोवा और फंगे जनित रोग उद्भूत हो सकता है। पानी के मलिनीकरण और रोगपीडित समीपवर्ती खेतों के संपर्क से भी रोग फूट पड़ सकता है। वैरस जनित रोगों का नियंत्रण करने का मार्ग पी सी आर नेगटिव बीजों के चयन और पानी गुणता का अनुरक्षण है। अन्य रोगों का नियंत्रण पहले ही पहचान और इलाज से रोका जा सकता है। पोषण संबंधी रोगों का नियंत्रण फीड प्रोबियोटिक्स इम्युनोस्टिमुलन्ट्स, माइक्रोन्यूट्रियन्ट्स और डाइजेस्टिव एनजाइमों के प्रयोग से किया जा सकता है।

निष्कर्ष में अनुकूलतम फसल काट और लाभ प्राप्ति केलिए निम्नलिखित बातों पर ध्यान दिया जाना उचित होगा। 1) खेत की उचित तैयारी 2) फिल्टरन किये पानी का नियमित प्रदान 3) स्वास्थ्य पूर्ण खेत स्थितियों का मोनिटरन और अनुरक्षण 4) गुणतापूर्ण आहार का उपयोग और प्रोबियोटिक्स का नियमित प्रयोग 5) पानी की गहराई का 1.2 मी में अनुरक्षण 6) 8.5 पर पी एच का अनुरक्षण 7) खेत की तैयारी के बाद खेती शुरू करना याने निरंतर पालन में संयम वर्तना।



जल भृंग (क्लाडोसीरा)

पी.एस. निओमी,

केंद्रीय समुद्री मात्स्यिकी अनुसंधान संस्थान, कोचीन

पानी में जीनेवाला जलभृंग (क्लाडोसीरा) एक आदिम क्लोमपाद परुषकवची जीव है जिसका शरीर कवच से आवृत है, पर *सिर कछुए* के समान मुक्त है. जीव को 4 से 6 पाद, एक आँख और शरीर के निचले भाग में अंडधानी हैं. जलभृंग पर्यनुकूल जीव जात है जो कि तटीय, वेलापवर्ती और समुद्र के नितलस्थ भागों में पाए जाते हैं. विश्व में मीठा जल जलभृंग की 600 से ऊपर जातियाँ पाई गई हैं जो कि झीलों में, जल सस्यों के बीच; तालाबों, दलदली भूमियों, कीचड़ों में रहनेवाली और पानी में तैरनेवाली भी हैं. समुद्री क्लोडोसीरा की सिर्फ 8 जातियाँ अब तक जानी गई हैं ये *इवाडन*, *पोडॉन* और *पेनिलिआ* वंश में आती हैं. इन में *इवाडन* और *पोडोन*, पोडोनिडे अधिकुटुम्ब के कुटुम्ब में आती है जबकि पेनिलिआ, सिडेडियेडा अधिकुटुम्ब के पोलिफीमोइडा सिडिडे कुटुम्ब में आती हैं. क्लोडोसीरा की जानी मानी जातियाँ ये हैं.

1. *पोडोन लूकारती* सार्स (podon leuckarti sars)
2. *पोडोन इन्टरमीडियस*, लिसबोर्ग (*P. intermedius Lillyjeborg*)
3. *पोडोन पोलिफीमोइडस* लूकार्त (*P. polyphemoides Leuckart*)
4. *पोनोडॉन स्मैकेरी* पोप (*P. Schmackeri Poppe*)
5. *इवाडेन नोर्डमन्नी* लॉवन (*Evadne normanni Loven*)
6. *इवाडेन स्पिनिफेरा* मल्लर (*E. spinifera Muller*)
7. *इवाडेन टर्गिस्टेना* क्लाऊस (*E. tergestina claus*)
8. *पेनिलिया अविर्रोस्ट्रिस* डाना (*Penilia avirostris Dana*)

क्लाडोसीराएं अनिषेकजनन (parthenogenesis) से अतः मादाओं के अंडधानियों में निक्षेपित अंडों के बिना निषेचन से ही मादा समान संततियों का क्लोन (clone) करनेवाले जीव हैं। मादा क्लाडोसीराओं से सिर्फ मादा संततियों का जनन होती है। पर विपरीत परिस्थितियों में पार्थनोजेनटिक द्विगुणित अंडों (perthenogenetic diploid egg) से नरों का भी जनन होता है। द्विगुणित नरों से अगुणित गामेटों (haploid gametes) का उत्पादन होता है जबकि कुछ मादाएं अगुणित लैंगिक अंडों (haploid sexual eggs) का उत्पादन करती हैं जिनके विकास के लिए निषेचन आवश्यक है। थोड़ी समय बाद ये मादाएं सुषुप्त अंडों (resting egg) का भी उत्पादन करती हैं और ये अंडे लैंगिक पुनरुत्पादन के उत्पाद माने जाते हैं। ये अंडे कारापेस जैसे पदार्थ से आवृत होकर समुद्र जल में सुषुप्त अंडों के समान रहने लगते हैं। अनुकूल अवस्था में ये स्फुटन करके अनिषेकजनन मादा (पार्थनोजेनटिक फीमेल) बन जाते हैं। इस प्रकार क्लाडोसीराओं के जीवन चक्र में अनिषेकजनन और गामेटोजेनन नामक दोनों चक्र बदलते फिरते हैं। अनिषेकजनन से एकदम होनेवाला द्रुत उत्पादन प्लवकी परुषकवची जन्तुओं के बीच इन सूक्ष्म जीवों को अपने आप में अलग साबित करते हैं। इनका औसत आकार 200 से 1001 माइक्रोन है जबकि मीठा जल की समान जाति 7-8 मि.मी. तक बढ़ती हुई देखी है।

निस्यंदक और शैवाल भोजी होते हुए जलभृंग प्लवक जीवों के पोषण श्रृंखला में प्रभावी भूमिका निभाते हैं। वेलापवर्ती खाद्य श्रृंखला में बाक्टीरिया भक्षी सूक्ष्म कशाभियों के भक्षण से क्लोडोसीराओं के सक्रिय प्रवर्तन पर प्रकाश डाला गया है। बदले में ये अकशेरुकियों और प्लवकभोजी मछलियों का अच्छा आहार है। उत्सवण होनेवाले उष्णकटिबंधीय और उपोष्ण कटिबंधीय तटीय पानी में इसका वर्धन और विपरीत परिस्थितियों की सहनक्षमता आदि विशेषताओं से जल खाद्य श्रृंखला में प्लवक भोज्य के रूप में इनका महत्वपूर्ण स्थान नकारा नहीं जा सकता है। जलकृषि में खाद्य के रूप में अपने छोटे आकार और उच्च उत्पादकीय क्षमता से इनका प्रयोग अनुयोज्य देखा गया है। वाणिज्य की दृष्टि से महत्वपूर्ण मछली पोनाओं और वयस्कों के

भोज्य के रूप में इसका प्रयोग रिपोर्ट की गई है। समुद्री जन्तुप्लवकों में क्लाडोसीराओं की एकदम बढ़ती, बाद का उतार-चढ़ाव और वेलापवर्ती मात्स्यिकी और जलराशिकी स्थितियों के अनुसार भारतीय समुद्रों से अदृश्य होने के संबंध में लगभग सभी अन्वेषकों ने रिपोर्ट की है।

क्लाडोसीराओं के वितरण और प्रचुरता में अजैविक घटक जैसे तापमान, प्रकाश, गहराई, विलीन ऑक्सिजन, कार्बन डायोक्साइड, पी.एच., लवणीयता और सूक्ष्मपोषक सान्द्रता का प्रभाव है। ये जीव जैविक प्रतिकूल स्थितियों का सामना, अंडों के सुषुप्तावस्था स्वीकरण से किया जाते हैं। परिस्थितियों के अनुरूप अतिजीविता के लिए आकार में किए जानेवाला व्यतियान-स्वीकरण से किया जाते हैं। परिस्थितियों के अनुरूप अतिजीविता के लिए आकार में किए जानेवाला व्यतियान-स्वीकरण के कारण इनका वर्गिकरण श्रमकर बन जाता है। फिर भी आणविक जैव प्रौद्योगिकी के प्रयोग से आज कल यह साध्य हो गया है। क्लाडोसीराओं पर भारत में मई 2003 में प्रकाशित सूची में 49 वंशों, 10 कुटुम्बों में फैली गई 190 जातियाँ रिपोर्ट की गई हैं। इन में 18 स्थानीय हैं। क्लाडोसीराओं में *डाफ्निआ* मशहूर वंश है जबकि केरल के पानी में यह मौजूद नहीं है।

क्लोडोसीरा अकशेरुकी और कशेरुकी जलजीवों का खाद्य है। कम उत्पादन समय और उच्च उत्पादकता से झींगों व मछलियों के डिंभक पालन प्राणाली में क्लाडोसीराओं का उपयोग किया जा सकता है।

भारतीय हैचरियों में *मोइना माइक्रूरा*, *डाफ्निआ लम्होल्टी*, *अलोना टारापोरेवाले* और खारा पानी क्लाडोसीरा *डियाफ्नोसोमा सेलेवेनसिस* का पुंज संवर्धन सफल देखा गया है। आज कल यह पाया गया है कि जलकृषि में डिंभक खाद्य के रूप में उपयोग किए जानेवाला आर्टिमिया के स्थान पर भारतीय जलों में उपलब्ध *सेरियोडाफ्निआ कमूर्टा*, *सिमोसेफालस सेरुलाटस*, *एस. वेटुलस*, *एस. अक्टीरोस्ट्राटस*, *माक्रोक्स स्पिनोसा*, *स्काफोलेबरिस किंगी*, *डॉफनिआ कारनिकेटा*, *डी. इक्सिसकम*, *डी. सेनेगल*, *मोइना वीसमनि*, *एल. अकान्थोसीरोइड* आदि क्लोडोसीराओं का उपयोग



किया जा सकता है. आर्टिमिया की तुलना में ये सस्ते हैं.

क्लाडोसीरा पालन की रीतियाँ भी विकसित की है; यीस्ट, आलगे, भूसी, जन्तुओं के उच्छिष्ट को पानी में विलगन करके इसका पालन किया जा सकता है.

हाल के निरीक्षणों ने व्यक्त किया है कि समुद्री बास पालन में मीठा जल क्लोडोसीरा *मोइना मक्रोपा* का इस्तेमाल किया जा सकता है. यह भी देखा गया है कि खारा पानी क्लोडोसीरा *डयाफनोसोमा सेलेबेनसिस* का उपयोग सी बास के 15 दिवस आयु के डिंभकों को खिलाने के लिए ब्राइन झींगे के बदले में

किया जा सकता है. क्लोडोसीराओं के पालन से माँग की पूर्ति की जा सकती है जो आसान भी है. आर्टिमिया की तुलना में क्लोडोसीराओं में प्रोटीन और वसा अधिक है जबकि n-3 HUFA की मात्रा कम है; पर इसके संपोषण से यह बढ़ाया जा सकता है. अन्य उपयोगी समुद्री क्लोडोसीरा जातियाँ हैं *इवाडेन टर्गस्टिना*, *पेनिलिआ अवरोस्ट्रिस* और *पोडोन पोलिफीमाइडे*. Biomanipulation में इसकी अनुयोज्यता व शक्यता को मानते हुए जलकृषि में जलभृंगों का प्रयोग आजकल नियमित रूप से बढ़ाया जा रहा है.



हरे कर्कट के मुटाने पालन केलिए सूत्रित गुटिका खाद्य

आर. पॉल राज और उणिक्कृष्णन. यू

केंद्रीय समुद्री मात्स्यिकी अनुसंधान संस्थान, कोचीन

सिल्ला वंश (जीनस) के हरे कर्कट का पालन पिछले सौ साल से चीन में और तीस साल से पूरे एशिया में हो रहा है। भारत में परंपरागत खारा जल जन्तु पालन में इसे द्वितीय या तृतीय फसल का ही स्थान था, पर पिछले बीस साल से हरे कर्कट पालन का महत्व बढ़ गया है। झींगा पालन का वैरस रोग और दक्षिण पूर्व एशियाई राज्यों में हरे कर्कट का बढ़ती निर्यात माँग इस प्रतिभास का कारण समझा जाता है।

हरा कर्कट झींगा जैसे कवच उतारकर याने मोल्ट करके बढ़नेवाला जीव है। कवच उतारने के बाद कर्कट के शरीर में पानी का अंश अधिक होता है और शरीर बहुत मृदु हो जाता है। इसी कारण कवच उतारे कर्कट को 'पानी कर्कट' (water crab) या 'मृदु कवचित कर्कट' (soft shelled crab) कहा जाता है। कुछ ही दिनों में खाद्य की उपलब्धि और पानी का खारापन, पी एच, तापमान आदि के अनुसार कवच और माँस दृढ़ हो जाता है, और पानी का अंश कम होता है। बाज़ार में इस दृढ़ कवचित कर्कट को मृदु कवचित कर्कट से तीन गुना अधिक मूल्य मिलता है।

हरे कर्कट का पालन दो तरह किया जाता है।

पालन रीति :

(Grow-Out) इस में पच्चीस से एक सौ पचास ग्राम (25-150g) के किशोर कर्कटों को दो से चार तक स्क्वयर मीटर (m^2) पर जुटाया जाता है। इसका पालन चार से आठ महीने तक किया जायेगा। इस बीच में किशोर कर्कट चार से दस तक कवच उतारकर तीन सौ पचास ग्राम (350g) से ऊपर आता है। आरंभ में प्रतिदिन शरीर भार के 7.5 प्रतिशत पर लवणित या ताज़ा कूड़ा करकट मछली और शुक्ति माँस से खिलाता है। कर्कटों की बढ़ती होने पर खाद्य 5.0 प्रतिशत पर देता है। इसके अलावा तालाब में

उपलब्ध खाद्य पदार्थों का भी इस्तेमाल होता है।

हरे कर्कट पालन का सर्वेक्षण

‘राष्ट्रीय कृषि प्रौद्योगिकी योजना की उप परियोजना में समुद्री जन्तु पालन में पोषण और रोगविज्ञान’ के लिए किये पालन, खाद्य और खाद्य प्रबंधन आदि को आधारित करके किए गए सर्वेक्षणों से यह व्यक्त हो गया है कि किसान लोग तालाब की तैयारी, पानी का विनिमय, कर्कटों का संग्रहण वगैरह में अच्छी प्रक्रिया का अनुसरण करते हैं। पर खाद्य के मामले में उतना अच्छा अभ्यास न देखा गया। लवणित या ताज़ा कूड़ा-करकट मछली, कच्चा या पकाया कसाई अपशिष्ट और शुक्ति माँस आदि का खाद्य के लिए इस्तेमाल होता है। इनमें शुक्ति माँस अच्छी वृद्धि देती है, मगर महंगा होने के कारण अधिक इस्तेमाल नहीं किया जा सकता। प्रायः निम्न कोटि का या कम दाम की सड़ी हुई मछली को लवणित करके खाद्य के लिए इस्तेमाल करता है, क्योंकि इसका दाम किलो पर पाँच रुपये से कम आता है। पर हमारा विश्लेषण से सुव्यक्त हुआ है कि यह सड़ी हुई लवणित मछली कर्कटों को उतना पसंद नहीं है जितना शुक्ति माँस या ताज़ा कूड़ा-करकट मछली, वृद्धि भी बहुत कम होती है और इसके ऊपर पानी की गुणता पर बहुत बुरा असर डालता है।

सर्वेक्षण के अनुसार ये भी देखा कि प्राकृतिक या ताज़ा खाद्य पदार्थों के उपलब्धि, परिवहन संग्रहण और प्रदान में कई मुश्किलें हैं, साथ में इनके उपयोग से पानी की गुणता में बुरा असर भी। इन विश्लेषणों ने हरे कर्कट पालन के लिए सूत्रित खाद्य के रूपायन के लिए उकसाया था।

पदार्थ और ढंग

बीस ग्राम से एक किलो तक भारवाले हरे कर्कटों को सूत्रित खाद्य देकर स्वीकार्यता और भरण स्वभाव का विश्लेषण किया गया। इसके नतीजे को देखते हुए स्थानीय उपलब्ध खाद्य संघटकों से कम लागत का सूत्रित गुटिका खाद्य बनाया गया। (सारणी-1 से 3 देखिए)

वैपीन द्वीप का एक प्रगतिशील किसान अपने तालाब में सूत्रित खाद्य का प्रयोग करने को तैयार हुआ और उन्होंने मृदु कवची कर्कटों को खरीद कर तालाब में संग्रहण किया। राष्ट्रीय कृषि प्रौद्योगिकी योजना की उपयोगना के अधीन समुद्री जन्तु पालन में पोषण और रोगविज्ञान, का धन और तकनीकी सहाय से सूत्रित गुटिका खाद्य सौजन्य से दिया गया।

बाज़ारी या विपणन योग्य आकार (तीन सौ पचास ग्राम और इस से ऊपर) को एक एक करके पाँच लीटर परिमाण के प्लास्टिक पिंजरे में डाला गया और ऊपर से लोहा जाल से ढक्कन किया। इन पिंजरों को H.D. प्लास्टिक की रस्सी से लटकाकर तालाब में जलद्वार के सामने पानी में डूबा गया।

प्रतिदिन शाम को पाँच बजे रस्सी को खींचकर पिंजरों को बाँध (dyke) के ऊपर लाकर, शरीर भार के 2.5 प्रतिशत सूत्रित खाना दिया गया। साथ में कर्कटकों के स्वास्थ्य का अनुमान भी किया गया।

प्रतिदिन पानी का आदान-प्रदान और एकांतर दिनों में पानी की गुणता का अनुमान किया गया।

हर पाँचवें दिन को खाद्य देते वक्त कवच की दृढ़ता का अनुमान से छाँट कर चुनकर संग्रहण किया। मूलतः निर्यात से इनका विपणन होता है।

परिणाम

यह देखा गया कि तेईस दिन में दो हजार पाँच सौ अरस्सी रुपये और पचानबे पैसे का परिचालन व्यय हुआ। फसल का पैदावार के बाद एक हजार चार सौ बयानबे रुपये और पचानबे पैसे का सकल लाभ मिला और नियत मूल्य में 20 प्रतिशत की घटती करके 1351.00 रु. निवल लाभ मिला।

परीक्षणों से यह भी स्थापित हुआ कि अन्य खाद्यों की तुलना में सूत्रित गुटिका खाद्य के उपलब्धी, परिवहन, संग्रहण और प्रदान कई गुना आसान है और यह पानी की गुणता में कोई हानि भी नहीं पहुँचाती है। हरे कर्कट पालन के लिए बनाया गया इस सूत्रित गुटिका खाद्य को ‘सिल्ला पुष्ठी’ नाम दिया गया। इसका औद्योगिक उद्घाटन भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के माननीय महा निदेश डा. मंगला राय ने 28 अप्रैल 2003 को सी एम एफ आर आइ मुख्यालय में किया गया।



पंक कर्कट मुटाव के लिए सूत्रित गुटिका खाद्य
सारणी :1 गुटिका खाद्य के घटक

घटक	प्रतिशत
फिश मील	50.0
स्क्विड मील	5.0
श्रिंप मील	3.0
स्क्वल्ला मील	2.0
सोया फ्लोर	16.0
वीट फ्लोर	16.0
सारडेन ओइल	3.0
कोलस्ट्रॉल	0.5
विटामिन मिक्स ¹	0.5
मिनरल मिक्स ²	2.0
बैंडर ³	2.0

1,2 व 3 विशेष रूप से रूपाइत व

चयन किया

सारणी :2 गुटिका खाद्य के पौष्टिक घटक

लिपिड (%)	कूड भस्म (%)	सकल ऊर्जा (MJ/Kg)
10	18	17.8

सारणी :3

आकार समूह	सं	संग्रहित कर्कटों की मात्रा	कवच कटु हो जाने के दिवस	वजन भार के 2.5% के क्रम में खिलाने की खाद्य मात्रा
उत्कृष्ट 850 g - 1.0 kg	12	8.80 kg	22	4.84 kg
बड़ा 550 g - 799 kg	10	6.67 kg	17	2.83 kg
मध्यम 350 g - 549 kg	8	3.60 kg	10	0.90 kg



समुद्र कृषि हेतु भौगोलिक सूचना प्रणाली का अनुप्रयोग

डॉ.वीरेंद्र वीर सिंह एवं डॉ.राजगोपालन

केंद्रीय समुद्री मात्स्यिकी अनुसंधान संस्थान, कोचीन

भारतीय संस्कृति में समुद्र को एक विशेष स्थान प्रदान करके सदैव महिमा मंडित किया जाता रहा है। अमृत व विष के साथ-साथ अथाह रत्नों, खनिज एवं प्राणियों से भरपूर संपदा का स्रोत समुद्र आधुनिक काल में भी विभिन्न प्राकृतिक संसाधनों के अतिरिक्त हमारे लिये नाना प्रकार की सेवायें भी उपलब्ध कराता है। मानव जाति आदिकाल से प्राकृतिक संसाधनों में सर्वाधिक उपयोग मत्स्य एवम् मात्स्यिकी संसाधनों का करने की अभ्यस्त हो चुकी है। समुद्री मात्स्यिकी हेतु पारंपरिक मछुआरे अपने जीवन की परवाह न करते हुये लहरों को चुनौती प्रदान करके आजीविका हेतु गहरे समुद्र में जाकर मत्स्य आखे करते थे परंतु साधनों के सीमित होने के कारण उनका यह कृत्य प्राकृतिक संतुलन नहीं बिगाड़ता था।

धीरे-धीरे मात्स्यिकी की आधुनिक तकनीकों, नौकाओं एवम् समृद्ध जालों के विकास के फलस्वरूप समुद्री मात्स्यिकी से प्राप्त संसाधनों की विविधता एवम् आर्थिक लाभ में निरन्तर वृद्धि होना प्रारंभ हुआ। भारत का समुद्री मात्स्यिकी उत्पादन जो स्वतंत्रता प्राप्ति के समय लगभग 6 लाख टन था आज 29 लाख टन के आंकड़ों को पार कर चुका है। संरक्षण के समुचित उपायों के अभाव में तथा अधिकाधिक लाभ कमाने के लालच में विकसित यंत्रीकृत नौकाओं के बेड़े के कारण सम्भावना रहते हुये भी विभिन्न कारकों के कारण प्रणाली में बिना किसी आमूल परिवर्तन के समुद्री मात्स्यिकी से और अधिक से अधिक उत्पादन की आशा धीरे-धीरे क्षीण होती जा रही है।

वर्तमान परिदृश्य में तटीय क्षेत्रों में समुद्र कृषि अपनाकर न केवल वांछित संसाधनों के उत्पादन में वृद्धि की जा सकती है अपितु आय के नये स्रोत भी उत्पन्न किये जा सकते हैं। समुद्र कृषि के विकास हेतु तकनीकों एवम् संसाधनों के परिष्करण हेतु भारत में अनेकों

संस्थागत प्रयास जारी हैं परन्तु आज भी एक ऐसे सूचनातंत्र का अभाव महसूस किया जा रहा है जिसके द्वारा उन क्षेत्रों का पता लगाया जा सके जहाँ पर समुद्र कृषि सफलतापूर्वक अपनायी जा सकती है। योजनाकारों एवम् हितग्राहियों के लिये उक्त तंत्र में समय-समय पर प्राप्त नवीनतम जानकारी के समावेश की संभावना को भी जोड़ा जाना वांछित रहता है। अन्तरराष्ट्रीय समन्वयन पर आधारित नवीन सेवा जिसे हम भौगोलिक सूचना प्रणाली GIS (Geographic Information System) के नाम से जानते हैं आज हमारी आवश्यकताओं के अनुरूप समुद्र कृषि हेतु उपलब्ध परिक्षेत्रों के मानचित्रीकरण की क्षमता समाहित रखती है।

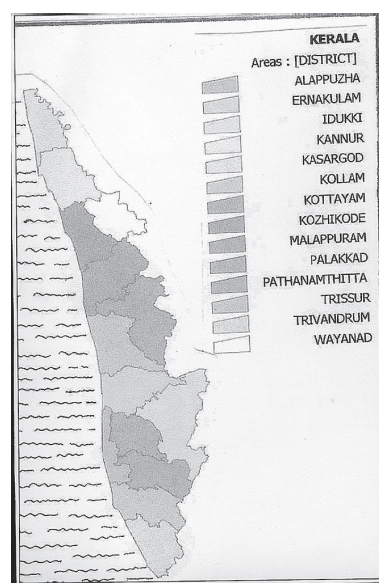
भौगोलिक सूचना प्रणाली हेतु संगणक की संरचनात्मक विशेषताओं एवम् इसके कार्यक्रमों की विश्लेषणात्मक क्षमताओं का एकीकृत प्रयोग करके इनका उपयोग भौगोलिक आंकड़ों को भरकर संग्रहित एवम् परिचालित करने में किया जाता है। विश्लेषित आंकड़ों का निरूपण विभिन्न भौगोलिक परिस्थितियों के प्रस्तुतीकरण हेतु अभीष्ट तरीके से किया जा सकता है। भूमि एवम् जल की स्थानीय सूचनाओं में मूलभूत अन्तर के फलस्वरूप आज सामुद्रिक GIS अपनी एक अलग पहचान बनाकर एक उपसमूह के रूप में उभर रही प्रणाली के रूप में स्थापित हो चुकी है।

यहाँ यह स्पष्ट करना आवश्यक है कि वास्तविकता में इस प्रणाली का अनुप्रयोग सामुद्रिक मात्स्यिकी अथवा जलकृषि हेतु अत्यन्त सीमित रहा है यद्यपि तटीय क्षेत्र प्रबन्धन, प्रदूषण प्रतिमान एवम् नियन्त्रण इत्यादि क्षेत्रों में इसका अनुप्रयोग प्रचलित हो चुका है।

भौगोलिक सूचना प्रणाली (GIS) द्वारा जब संगणक में स्थानिक संदर्भ में आंकड़ों का आधार विकसित कर लिया जाता है तो इसका प्रयोग भौगोलिक परिप्रेक्ष्य में उच्चस्तरीय मानचित्रकारी रचनाओं के विश्लेषण हेतु किया जाना संभव हो जाता है। आधारभूत तथा प्रक्रियाकृत मानचित्रों का संग्रहण करके इनका उपयोग योजनाकारों तथा हितग्राहियों द्वारा 'एटलस' अथवा

मानचित्रावली के रूप में किया जा सकता है। मात्स्यिकी मानचित्रावली में दो प्रकार के आंकड़े प्रमुख होते हैं; पहले प्रकार के आंकड़े प्रशासनिक इकाइयों जैसे जिला, थाना इत्यादि के सम्बन्ध में होते हैं जबकि द्वितीय प्रकार के आंकड़ों में स्थानिक सूचनाओं का समावेश रहता है।

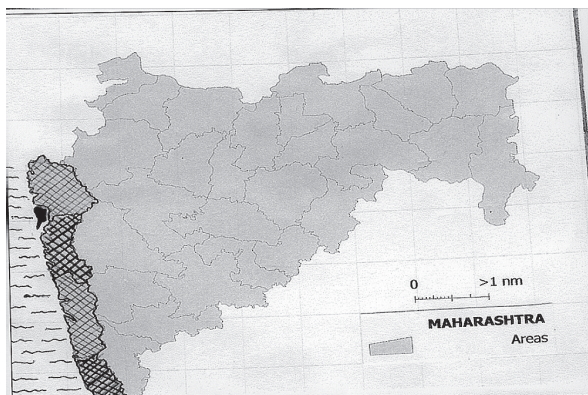
आकड़ों के राष्ट्रीय आधार की तुलना एक पेड़ से की जा सकती है जहाँ राष्ट्र को मूल या जड़ मानकर प्रान्त, जिला, थाना, नगरपालिका एवम् ग्राम पंचायत इत्यादि को स्तंभ, शाखाओं एवम् उपशाखाओं के रूप में मान्यता दी जा सकती है। आंकड़ों का समायोजन प्रशासनिक सीमाओं के संदर्भ में सामाजिक आर्थिक परिस्थितियों एवम् संसाधनों की उपलब्धता के परिप्रेक्ष्य में विकास की आवश्यकताओं के अनुरूप किया जा सकता है। समुद्र कृषि के संदर्भ में सामाजिक आर्थिक तथा प्रशासनिक आंकड़ों का महत्व बहुत अधिक रहता है क्योंकि आज भारत में समुद्र तटीय जलकृषि हेतु विभिन्न नियामक अधिनियम प्रचलित हैं तथा क्षेत्र के जलकृषि उपयोग हेतु बहुस्तरीय अनुमतियों की आवश्यकता होती है जो कि स्थान विशेष की अनेकों विशेषताओं की विवेचना के उपरान्त ही प्रदान की जाती हैं। आंकड़ों का स्रोत मुख्यतः स्थानीय निकायों, पंचायतों एवम् जिला कार्यालयों



चित्र क्र.1 - भारत के केरल राज्य का जिला स्तर पर क्षेत्रीय सीमाओं को दिखाता मानचित्र।

में उपलब्ध अभिलेख रहते हैं जिनकी पुष्टि एवम् संवर्धन क्षेत्रीय सर्वेक्षणों द्वारा किया जाता है। स्थानिक आंकड़ों की प्रशासनिक सीमाएं अंतरराष्ट्रीय, राष्ट्रीय, प्रान्तीय जिला (चित्र क्र.1) अथवा पंचायत स्तरपर अभिलेखित की जा सकती हैं।

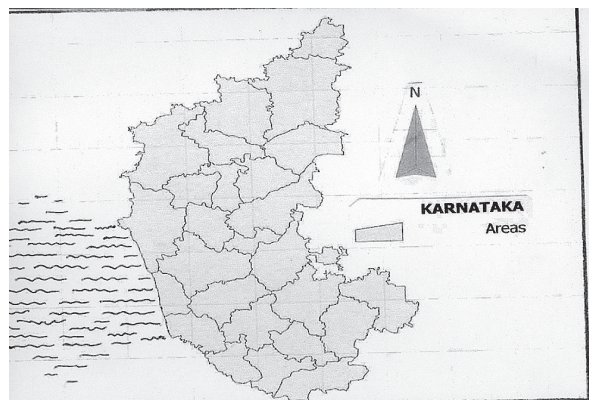
GIS कार्यक्रम का उपयोग करके प्रान्त विशेष के मानचित्रीकरण के समय जिला स्तरीय क्षेत्रों को दर्शाने वाले मानचित्र में अभीष्ट जिलों जैसे तटवर्ती जिलों को अलग प्रकार से दर्शाने की सुविधा भी उपलब्ध रहती है तथा क्षेत्रों को एक पूर्व निर्धारित पैमाने के अनुरूप भी दर्शाया जा सकता है जैसे चित्र क्र.2 में महाराष्ट्र के तटीय जिलों को विशिष्टतापूर्वक दर्शाया गया है साथ ही यह भी दर्शाया गया है कि यदि चाहें तो अक्षांश



चित्र क्र.2 - महाराष्ट्र के तटीय जिलों को विशिष्टतापूर्वक दर्शाने वाला मानचित्र।

तथा रेखांश दर्शाने वाली रेखाओं के सूत्रजाल को इस प्रकार दिखाया जा सकता है मानो कि वो 'ग्लोब' पर अंकित हों।

इस प्रकार हम देखते हैं कि भौगोलिक सूचना प्रणाली के माध्यम से हमारे पास एक ऐसा सशक्त साधन उपलब्ध रहता है जिसके द्वारा हम किसी भी विशिष्ट भू-भाग के बारे में उपलब्ध जानकारी को अपनी आवश्यकतानुरूप समतल सतह पर अंकित कर सकते हैं। उदाहरणस्वरूप चित्र क्र.3 में दर्शाया गया चित्र कर्नाटक राज्य का है जिसमें उत्तर दिशा सूचक प्रतीक चिह्न के प्रयोग के साथ-साथ भू तथा समुद्री लक्षणों को अलग से पहचाना जा सकता है। पृथ्वी की गोलाकार आकृति पर स्थित इस क्षेत्र

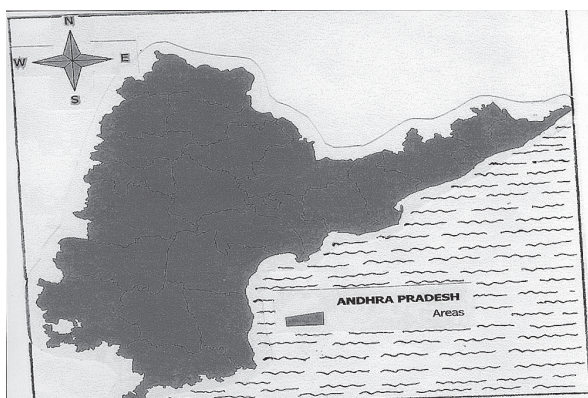


चित्र क्र.3 - उत्तर दिशा सूचक प्रतीक चिह्न तथा स्थान विशेष पर प्रक्षेपित रेखाजाल दर्शाता भारत के कर्नाटक राज्य का मानचित्र।

को समतल सतह पर प्रदर्शित करने में स्थान विशेष की स्थिति को अंकित करना आवश्यक होता है अतः वास्तविक सर्वेक्षण द्वारा पहले भू-अवस्थितिकरण-प्रणाली (Geo-Positioning-System) के माध्यम से स्थान विशेष की स्थिति निश्चित की जाती है और समतल सतह पर अक्षांश तथा रेखांश का जाल प्रक्षेपित करके उसका मान चित्रीकरण भी किया जा सकता है। भू-भाग तथा जल-भाग के प्रदर्शन के साथ साथ जिलों का क्षेत्र प्रदर्शित करने वाले मानचित्र में सभी दिशाएँ सूचित करने वाले प्रतीक चिह्न को भी अंकित किया जा सकता है जैसा चित्र क्र.4 में आन्ध्र प्रदेश के नक्शे में दिखाया गया है।

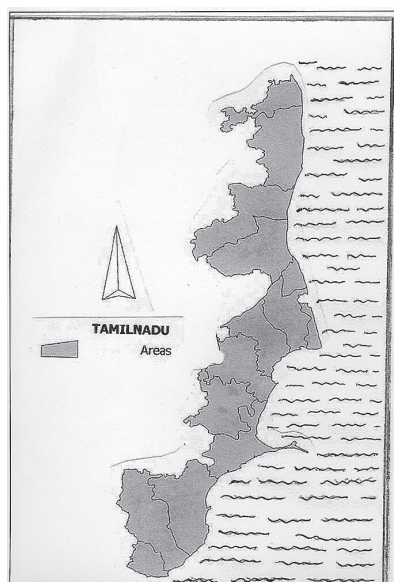
भौगोलिक सूचना प्रणाली स्वयं की परिभाषा के परे वास्तविक स्थान का केवल मानचित्रीकरण न होकर स्थान विशेष के बारे में स्थानिक एवम् अन्य सूचनाएँ प्रदान करने वाली एक सशक्त प्रणाली है जो आवश्यकतानुसार किसी भी समस्या का समाधान करने हेतु संग्रहित आंकड़ों की सहायता से अनेकों विकल्प उपलब्ध कराती है। यहां चित्र क्र 5 में तमिलनाडु राज्य के मानचित्र में केवल समुद्र तटीय जिलों का चुनाव करके उनका मानचित्रीकरण किया गया है जो कि समुद्र कृषि हेतु एक संभावित क्षेत्र को दर्शाते हैं।

जब समुद्र कृषि हेतु संभावित प्रक्षेत्र की पहचान हो जाती है तो उस स्थान विशेष के गुण अथवा लक्षणों की पहचान निश्चित



चित्र क्र.4 - भू-भाग, जल भाग तथा जिलों का क्षेत्र दर्शाने वाले आन्ध्र प्रदेश के मानचित्र में चारों दिशाये दर्शाने वाला प्रतीक चिह्न।

करने हेतु प्रत्येक स्थान को एक विशेष पहचान अथवा ID प्रदान किया जाता है। चुने गये स्थान की विशेषताओं से सम्बद्ध आंकड़े जैसे नाम, मत्स्य उत्पादन की क्षमता, मात्स्यिकी विकास हेतु किये जाने वाले वार्षिक कार्य, जलक्षेत्रों की उपलब्धता, गुणवत्ता एवम् संख्या, मौसमी परिवर्तनों का प्रभाव, पर्यावरणीय विशिष्टतायें, उपलब्ध फार्म और उनकी उत्पादन क्षमता तथा प्रबन्धन की स्थिति इत्यादि पूर्व निर्धारित पहचान अथवा ID के



चित्र क्र.5 - भारत के तमिलनाडु राज्य के तटवर्ती जिलों को दर्शाने वाला मानचित्र।

अंतर्गत संग्रहित कर लिये जाते हैं और आवश्यकतानुरूप प्रयुक्त किये जाते हैं।

समुद्र कृषि के संदर्भ में चुने गये स्थान तक पहुँचने के लिये यातायात के साधनों की उपलब्धता का मानचित्र में होना उपयोगकर्ताओं के लिये अत्यंत ही आवश्यक है अतः पहुँच मार्ग, महामार्ग, रेलमार्ग अथवा जलमार्गों की स्थिति को भी आकड़ों में भरकर मानचित्रों में दर्शाया जा सकता है। मात्स्यिकी के परिप्रेक्ष्य में निकटस्थ बाजार, शीत गृह, मत्स्य परिसंस्करण उद्योग, हैचरी तथा प्रदूषण के स्रोत से संबंधित जानकारीयों को भी एकत्रित करके आंकड़ों का आधार तैयार किया जाता है।

समुद्र कृषि हेतु पर्यावरणीय एवम् पारिस्थितिकीय आंकड़े भी अति महत्वपूर्ण होते हैं। इस हेतु समुद्री किनारे, खाडियों एवम् पश्चजल प्रक्षेत्रों का उपयोग किया जाता है। अतः इन स्रोतों का भू-अवस्थीकरण करने उपरान्त यहाँ के भौतिक-रासायनिक व जैविक कारकों का विवरण भी स्थान विशेष की पहचान के साथ संलग्न कर दिया जाता है। यहाँ के उठाव, गहराई तथा जल राशि के विवरण के साथ भूमि अथवा मिट्टी संबंधित आंकड़ों भी आधारभूत आंकड़ों में जोड़ दिये जाते हैं।

भूमि उपयोग के विवरण भी GIS कार्यक्रम में जमा किये जाते हैं जिसमें कृषि, मात्स्यिकी, वानिकी, परती एवम् तटीय क्षेत्र में झींगा पालन के लिये उपलब्ध भूमि के अतिरिक्त समुद्र सतह के तापमान, गंदलापन, हरित प्लवकों का वितरण इत्यादि शामिल हैं। स्थान विशेष पर होने वाली वर्षा, तापमान तथा नमी से संबंधित आंकड़े भी शामिल करने के उपरान्त आधारभूत आंकड़े अत्यन्त जटिल प्रतीत होते हैं परन्तु अगर इन्हें बहुभुजी, रेखीय तथा बिन्दु सद्ृश आंकड़ों में वर्गीकृत करके देखे तो इनका मानचित्रीकरण एवम् जानकारी समाहित रखने की क्षमता सरल प्रतीत होती है। समुद्र कृषि हेतु किन स्थानों पर किन किन लक्षणों का अध्ययन में समावेश करना है यह अत्यन्त महत्वपूर्ण होता है तथा कार्यक्रम में लचीलापन रखना भी आवश्यक होता है जिससे किसी भी समय नयी जानकारी का समावेश करना संभव रहे, मानचित्र बनाने हेतु कार्य करने की तकनीक

को पूर्व निर्धारित करना कार्य को सुगम बना देता है। उद्देश्य की प्राप्ति हेतु वास्तविक भू-सत्यापन आंकड़े क्षेत्र में जाकर एकत्रित किये जाते हैं। सुदूर-संवेदन द्वारा संग्रहित आंकड़े भी कार्य को काफी हद तक आसान कर देते हैं पर समुद्र कृषि के सम्बन्ध में जब मानसून के बादल आच्छादित रहते हैं तो सुदूर संवेदन तकनीक का प्रयोग सीमित हो जाता है। इसके अतिरिक्त सुदूर संवेदन अपने आप में काफी जटिल कार्य है जिसके लिये अत्यधिक तकनीकी एवं आर्थिक संसाधनों की आवश्यकता होती है।

यहाँ पर एक बात ध्यान रखने योग्य है कि सुदूर संवेदन तकनीक तथा भौगोलिक सूचना प्रणाली का आपसी तालमेल अत्यन्त सशक्त रहता है। वायुयान तथा उपग्रह द्वारा लिये गये चित्रों में भू-संसाधनों, पर्यावरण तथा भूमि उपयोग से संबन्धित सूचनाएँ एकत्रित रहती हैं जिनकी उचित व्याख्या करने के उपरान्त अनेकों प्रासंगिक मानचित्रों का निर्माण किया जाता है

और इन मानचित्रों को भौगोलिक सूचना प्रणाली में विभिन्न सूचनाओं के ग्रहण के लिये प्रयुक्त किया जाता है।

आज भौगोलिक सूचना प्रणाली इतनी विकसित हो चुकी है कि उपयोगकर्ता की आवश्यकता तथा कार्यप्रणाली के अनुरूप अनेकों “साफ्टवेयर” कार्यक्रम जैसे ARC/INFO, IDRISI, ERIM-GIS, Manifold इत्यादि विकसित किये जा चुके हैं जिनका उपयोग “मेनफ्रम” अथवा व्यक्तिगत-संगणक “पी सी” पर किया जा सकता है।

भौगोलिक सूचना प्रणाली द्वारा तैयार किये जाने वाले मानचित्रों एवम् आंकड़ों की उपयोगिता को ध्यान में रखकर केन्द्रीय समुद्री मात्स्यिकी अनुसंधान संस्थान के मात्स्यिकी पर्यावरण प्रभाग ने भारतीय समुद्र तट के पास सम्भावित समुद्र कृषि प्रक्षेत्रों की मानचित्रावली बनाने की परियोजना प्रारम्भ की है जो भविष्य में योजनाकारों तथा हितग्राहियों के लिये लाभकारी रहेगी।



समुद्र कृषि में व्यवस्था विश्लेषण और अनुरूपण नमूने

सोमी कुरियाकोस और नीता सूसन डेविड

केंद्रीय समुद्री मात्स्यिकी अनुसंधान संस्थान, कोचीन

पिछले दशक से लेकर जल कृषि विश्व में सबसे तेज़ बढ़ने वाला खाद्य उत्पादन व्यवस्था बन गयी है। जल कृषि उत्पादन मात्स्यिकी उत्पादन का एक भाग है जो फसल संग्रहण के अतिरिक्त मानवीय हस्तक्षेप से जीव के जीवन चक्र में कुछ शारीरिक नियंत्रण से उत्पादन बढ़ाए जाने की विधा है। इस प्रयोग से, तटीय लैगूनों से चिंगट बीजों को फन्दा करके उत्पादन बढ़ाए जाने के न्यूनतम रेंच से नियंत्रित अवस्था में ट्राइट मछली के उत्पादन करने तक के अधिकतम रेंच के क्रियाकलाप साध्य है।

अन्य जीव विज्ञानीय क्षेत्र और आवास विज्ञान की तरह समुद्र कृषि में बढ़ती हुई जटिल समस्याओं को मात्रात्मक रूप से सुधार करने के लिए व्यवस्था विश्लेषण का प्रयोग किया जाता है। समुद्र कृषि की समस्या को हल करते समय जीव विज्ञानीय और आवासीय घटकों के साथ साथ कई आर्थिक और सामाजिक घटकों पर भी विचार किया जाना है। ऐसी जटिल समस्याओं को संकुचित या खंडशः सुधार करने पर केवल कमज़ोर निर्णय तक पहुँचे जाएंगे। अनावश्यक आर्थिक एवं सामाजिक घटकों का हस्तक्षेप होने पर सही जीव विज्ञानीय सूचनाओं पर आधारित प्रबंधन योजनाएं लागू करना मुश्किल हो जाता है। अवांछित जीव विज्ञानीय सीमाएं बढ़ जाने पर आर्थिक नीतियाँ भी विफल हो जाती है।

इस लेख में एक प्रबंधन आवश्यक ढांचे में व्यवस्था विश्लेषण और अनुरूपण का उपयोग और निर्णय लेने के लिए आवश्यक सूचना प्रदान करने में नमूनों की भागीदारी के बारे प्रकाश डाला गया है। इसमें, प्रबंधन नीति के प्रभावों पर पूर्वानुमान देने वाले नमूने या व्यवस्था के कुछ पहलुओं में पर्यावरण परिवर्तन के बारे में बताया गया है।

परिभाषा और अवधारणा

व्यवस्था

भौतिकी या जीवविज्ञान शास्त्र के संबंध में, एक व्यवस्था निश्चित सीमा और कार्यात्मक एकक की विशेषता होने वाले सह संबंधित भौतिक तत्वों का संयोजित संग्रहण है।

व्यवस्था विश्लेषण

व्यवस्था विश्लेषण एक सैद्धांतिक समीपन और तकनीकों का संग्रहण है जिसमें जटिल समस्याओं को सुलझाने के लिए स्पष्टता से विकसित अनुरूपण भी सम्मिलित है। अन्यथा यह अध्ययन, विवरण और जटिल व्यवस्थाओं के पूर्वानुमान केलिए विकसित सिद्धांतों और तकनीकों का निकाय होता है। यह आधुनिक गणितीय और सांख्यिकी प्रक्रियाओं और कंप्यूटर के उपयोग से अभिलक्षित भी है।

अनुरूपण

अध्ययनाधीन व्यवस्था को किसी एक नमूना उपयुक्त करके आवश्यक समय और सामयिक परिवर्तन को भी सम्मिलित करके क्रमिक रूप से नकल करने या अनुरेखन करने की प्रक्रिया है अनुरूपण। अंकगणित और तर्कसंगत परिचालनों की श्रेणी से इन नमूनों को संकलित किया गया है जिनमें वांछित व्यवस्था की संरचना और स्वभाव भी मौजूद है।

व्यवस्था विश्लेषण के क्रम

सभी शास्त्रीय तरीकाओं के समान, सुधार की जाने वाली समस्या या जवाब दिए जाने वाले प्रश्न के रूप में वांछित स्पष्ट विवरणिका से अध्ययन तरीका शुरू करते हैं।

व्यवस्था विश्लेषण के निम्नलिखित चार स्तर होते हैं;

1. संकल्पनात्मक नमूना रूपायन

वास्तविक व्यवस्था से सुधार की जाने वाली समस्या के घटकों को तैयार करते हैं। इन घटकों को नमूने में जोड़कर बाकी सभी घटकों को छोड़कर हमारी वांछित व्यवस्था निर्धारित

करते हैं। इसके बाद नमूना घटकों को नमूना संरचना और स्वभाव में उनके स्थान के आधार पर स्टेट, ड्राइविंग या ऑक्सिलरी परिवर्तियों के रूप में वर्गीकृत करते हैं और नमूनों के बीच के विशेष संबंधों को पहचान करते हैं। अंत में नमूने को बॉक्स ऐरो चित्रों में अंतरसह संबंध सूचित करने के रूप में नमूने को चित्रित करते हैं।

उदाहरण के लिए एक परिकल्पित तालाब व्यवस्था का अनुमान करें। इसके विभिन्न अनुमान निम्नलिखित हैं

- तालाब में कोई भी उर्वरक या कृत्रिम खाद्य नहीं डाला गया
- मछलियाँ शाकभोजी हैं
- उत्पादकता और प्राकृतिक मृत्युता नहीं

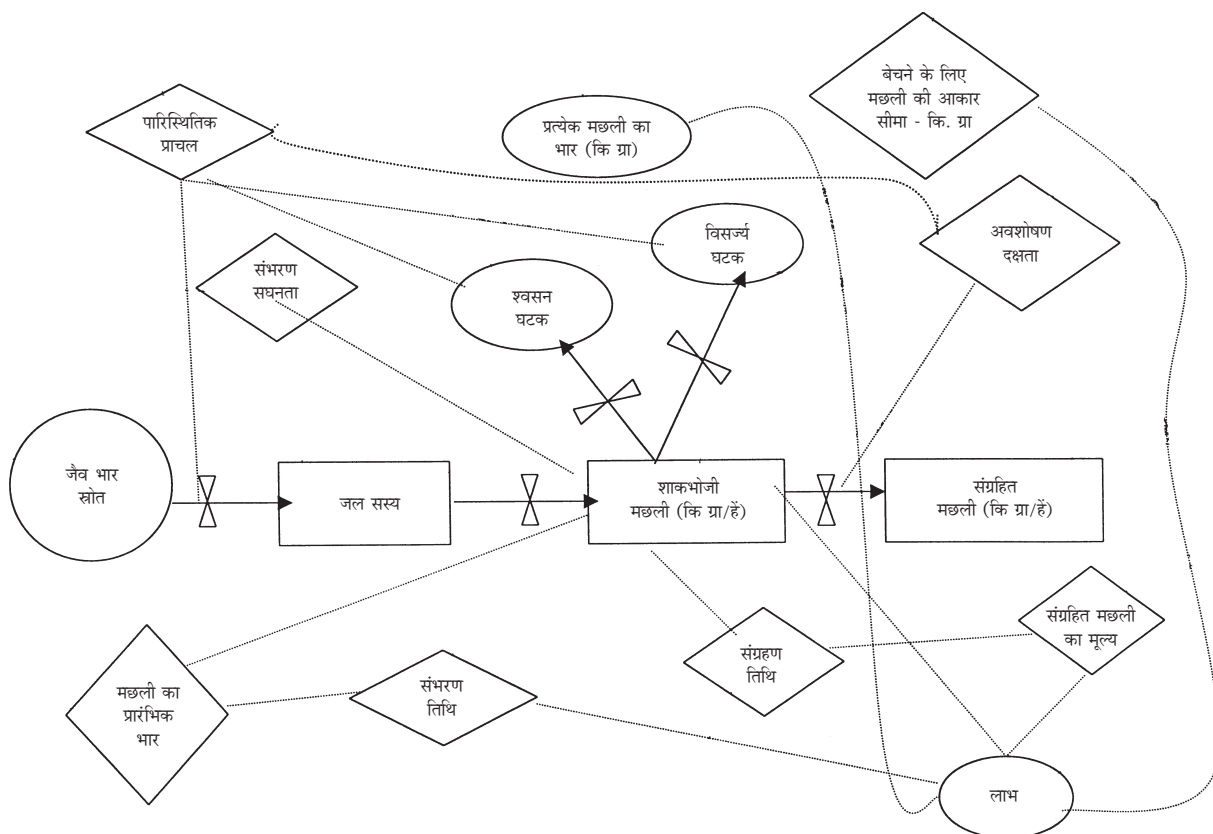
किसान का मुख्य लक्ष्य अधिकतम लाभ प्राप्त करना है। साधारणतया प्रतिमछली का भार 15 ग्रा की दर में 75 मछलियों का संभरण किया जाता है। किसान के हाल का लक्ष्य संभरण सघनता, संभरण और संग्रहण का समय में घटती लाते हुए उत्पादन बढ़ाता है। इस के लिए नमूना रूपायन का विवरण चित्र-1 में दिया गया है।

2. नमूने की मात्रात्मक विशेषता

व्यवस्था विश्लेषण के दूसरे स्तर का लक्ष्य वांछित व्यवस्था का मात्रात्मक या गणितीय नमूना विकसित करना है। इसमें व्यवस्था के सैद्धांतिक, गणितीय और संरचनात्मक पहलू भी सम्मिलित हैं। नमूने की मात्रात्मक विशेषता का अगला कदम स्पष्ट रूप से समीकरण सूत्र तैयार करके व्यवस्था की साधारण स्थिति के अनुसार व्यवस्था सुलझाना है। यह तो नमूने के कंप्यूटर कोडिंग से प्राप्त किया जा सकता है।

समुद्र कृषि में, नमूनों को श्रेणीबद्ध किया जाता है और मछली की बढ़ती, तालाब की सघनता और पानी का तापमान केवल स्टेट वेरियबल की स्थिति से पादपलवक, प्राणिपलवक, जीवाणु और पानी की गुणता/अवसाद गतिकियों की जटिल अवस्था तक नमूनों को उपचार किया जाना है।





चित्र 1. मछली तालाब का परिकल्पित रूपान

पहले किए गए पालन तरीकों की अवधि के आधार पर और उपर्युक्त उदाहरण से व्यवस्था की स्थिति और व्यवस्था में होने वाली प्रक्रियाओं के बारे में किसान को अवगाह मिल जाता है। व्यवस्था के नमूने को व्यक्त करने के लिए मल्टिपल रिग्रेशन नमूना उपयुक्त किया जाता है:

$$y = b_0 + b_1 X_1 + b_2 X_2 + b_3 X_1 X_2 + \dots$$

इसमें y प्रत्येक मछली मिश्रण, X_1 पानी का तापमान, X_2 प्रत्येक मछली भार, $X_1 X_2$ इन सबके बीच के आदान प्रदान के सूचक है।

3. नमूना मान्यता

व्यवस्था विश्लेषण के तीसरे स्तर का उद्देश्य यह सुनिश्चित करना है कि नमूना हमारी ज़रूरतों को निभाने लायक है या

नहीं। हमारे चिंतन की समस्याओं को सुलझाने में नमूने कहाँ तक स्वीकार्य है इसके आधार पर नमूनों का मान्यकरण किया जाता है। यह तो पूर्वानुमानित नमूनों को वास्तविक आंकड़ों से तुलना करके किया जा सकता है। नमूना मान्यता का अंतिम कदम संवेदनशीलता का विश्लेषण करना है जिसमें एक समय एक नमूना प्राचल को अलग कराना और नमूना स्वभाव पर इसके परिणत प्रभावों का मानीटरन करना है।

उपर्युक्त परिकल्पित तालाब व्यवस्था में, अगर किसान जल्दी मछली संग्रहण करना चाहता है तो साधारण स्थिति में मिलने वाले लाभ में क्या परिवर्तन हो जाएगा। संग्रहण अवधि बदलकर कई बार अनुरूपण अध्ययन किए जाने से यह उपर्युक्त परिवर्तन का परिणाम मिल सकेगा।

4. नमूना उपयोग

अध्ययन की अंतिम स्थिति में परियोजना के प्रारंभ में पहचान की गई समस्या का समाधान हो जाएगा। पूरे नमूना प्रक्रियाओं से हमारी इच्छा के अनुसार व्यवस्था स्वभाव में पर्यावरणीय स्थितियों और बदल प्रबंधन नीतियों द्वारा आवश्यक अनुरूपण किया जा सकता है।

जटिल समस्याओं की प्रमुख विशेषताओं के पहचान और अनुरूपण और इस के लिए आवश्यक परिकल्पित तरीके और

गणितीय नमूनों के बार में व्यवस्था विश्लेषण जोर देता है। ये नमूने शिक्षकों, विस्तार कार्यों के एजेंटों, आयोजकों और अनुसंधानकारों को विभिन्न प्रबंधन क्षेत्रों में समुद्र कृषि के द्रुत विश्लेषण की व्यवस्थाओं के लिए औज़ार प्रदान करते हैं और अनुकूलतम प्रबंधन नीतियों के विकास में सहायता भी देते हैं। व्यावहारिक परिस्थितियों में उचित निर्णय लेने के लिए यह सहायक है। समस्या सुधार के लिए रूपाइत व्यवस्था में गणित के प्रश्नों को सुधारने की तरह की सामान्य बोध का प्रयोग ही आवश्यक है।



सीपी नर्सरी प्रणालियों में नूतन विकास

षोजी जोसफ

केंद्रीय समुद्री मात्स्यिकी अनुसंधान संस्थान, कोचीन

व्यापक वितरण और वाणिज्यिक महत्ता के कारण सीपियाँ बहुत ही लोकप्रिय अनुसंधान जीव हैं। साथ ही साथ इनकी विपणन साध्यताएं सीपियों के वाणिज्यिक संवर्धन के लिए प्रेरित किया जाता है। अंतर्राष्ट्रीय बाज़ार में वाणिज्यिक महत्ता की पाँच प्रमुख सीपियाँ हैं; कठोर सीपी *मेर्सेनेरिया मेर्सेनेरिया*; मृदुकवच सीपी *मया आरेनेरिया*; एटलैन्टिक सर्फ सीपी *स्पिसुला सोलिडिस्सिमा*; मानिला सीपी *वेनेरुपिस जापोनिका* और सागर क्वाहोग *आर्टिका आइलान्डिका*। भारत में संवर्धनयोग्य कई सीपियाँ हैं जैसे आर्किडे कुटुम्ब के *अनडोरा ग्रानोसा*, *वेनेरिडे कुटुम्ब के पाफिया* और *मार्सिया*; *कोर्बिकुलिडे कुटुम्ब के विल्लोरिटा साइप्रनोइड्स* और *ट्राइडाक्निडे कुटुम्ब के ट्राइडाक्ना माक्सिमा*, *टी. कोरिया*, *टी. स्क्वामोसा* और *हिप्पोपस हिप्पोपस*। फिर भी भारत में अन्य द्विकापाटी संवर्धन के समान सीपी संवर्धन का अभी तक वाणिज्यिकरण नहीं किया गया है। अतः सीपी उत्पादन बढ़ाने के लिए प्रौद्योगिकियों को प्रभावी तौर पर स्थानांतरण किया जाना है।

नर्सरी पालन

सीपी संवर्धन में नर्सरी पालन एक प्रमुख घटक होता है। इसके लिए पालन प्रणालियों में निम्नतम 7-10 मि मी या बड़े आकार के सीपी बीजों का चयन करते हैं पालन खेतों को नर्सरियों/हैचरियों (स्फुटनशाला) में उत्पादित बीजों की आपूर्ति से सीपी पालन प्रणाली आगे बढ़ाई जा सकती है। अतः वाणिज्यिक सीपी संवर्धन में नर्सरियों को निर्णायक स्थान है। सीपी बीजों के उत्पादन में डिम्बक के कायांतरण से लेकर एक मिलीमीटर तक के आकार प्राप्त करने की अवधि अत्यन्त संकटपूर्ण होती है। यह अवधि सीपी बीज उत्पादन में एक असली चुनौती है और अधिकतर हैचरियाँ कायांतरित होनेवाले डिम्बकों और कायांतरित जीवों को अपने डिम्बक पालन टैंकों में ही सुरक्षित रखते हैं। संवर्धन तल के



जल को रोज़ बदलकर संवर्धकों को अधिक मात्रा में संवर्धित ऐल्गे (10^5 - 10^6 कोश/मि ली/दिन) से खिलाते हैं। एक छोटे अन्तराल के बाद पश्च डिम्बकों को, हैचरी उत्पादन प्रणाली और स्थान के आधार पर विभिन्न पालन प्रणालियों में पालते हैं। अधिकतर बृहत् उत्पादन प्रणालियाँ सपाट तल के टैंकियों में पश्चडिम्बकों का स्थिर या स्थायी जल संवर्धन है। दूसरे प्रकार में भौम जलस्तर में निर्यतित समुद्र जल का नियमित प्रवाह सुनिश्चित किया जाता है। अन्य परिवेशी स्थितियाँ अनुकूल होने पर इस रीति में उत्कृष्ट बढ़ती और उच्च अतिजीवितता दिखाई पड़ी। हाल में पश्च डिम्बकों के संवर्धन में पुनः संचरित उत्प्रवाह (up flow) और अधः प्रवाह (down-flow) संवर्धन रीति की प्रस्तुति भी हुई है। इस रीति में एक टंकी में लटकाये गये बेलन (सिलिन्डर) के ज़रिए अनुलम्ब (वर्टिकल) जल प्रवाह दिया जाता है। सूक्ष्म नाइलोन जाल (100 - $150 \mu\text{m}$) बेलन (सिलिन्डर) के तल पर बिछाते हैं। (एयरलिफ्ट पम्प के ज़रिए उत्पन्न जल प्रवाह में यह जाल छोटे पश्च डिम्बकों को आश्रय देता है। सिलिन्डर के ज़रिए टैंकी के जल का पुनः संचरण जारी रहती है। टैंकियों के जल रोज़ बदलना चाहिए और अशन सान्द्रता (0.5 - 1.0×10^5 कोश/मि ली/दिन) बनाये रखने के लिए पर्याप्त मात्रा में ऐल्गे अनिवार्यतः होना चाहिए। इसके अलावा, पश्चडिम्बकों को बीच बीच में मोनिटरन करना है और लगातार बढ़ती के लिए पालन जीव की संख्या कम करना है। पश्चडिम्बकों की इस संवर्धन रीति में नियन्त्रित तेज़ बढ़ती और उच्च अतिजीवितता रिपोर्ट की है।

खेतों में बीज पालन

नर्सरियाँ सीपी बीजों के पालन के लिए सुरक्षित प्राकृतिक स्थान होती हैं। कृषक प्राकृतिक संस्तरों से छोटे बीजों को संग्रहित करके सुरक्षित समुद्र तटों में बढ़ाते हैं। दूसरे प्रकार में सीपी बीजों को (< 3 मि मी) की छोटी जालाक्षि के प्लास्टिक जाल के नीचे उच्च सघनता में रोप देते हैं और बढ़ती के समय कुछ को निकालके सघनता कम कर देती है। उथला अंतरा-

ज्वारीय क्षेत्र भी तलीय नर्सरी संवर्धन के लिए उपयुक्त है। ऐसी क्षेत्रों में ट्रे और रैक नर्सरी संवर्धन भी किये जाते हैं। ट्रे संवर्धन में ट्रे लकड़ी या प्लास्टिक से निर्मित होता है और जालियाँ सुरक्षा प्रदान करनेवाली होती है। इस में निरन्तर मोनिटरन के ज़रिए अच्छा जल प्रवाह सुनिश्चित करना अनिवार्य है। छोटे तालाबों और कृत्रिम जलक्षेत्रों को आज क्षेत्र नर्सरियों के रूप में उपयोग करते हैं। चिंगट तालाबों में सीपी नर्सरी चलाने पर उच्च बढ़ती दर और कम मृत्यु देखी गयी थीं।

द्विकपाटी संवर्धन के इतिहास में लटकाये गये नर्सरियों का महत्वपूर्ण स्थान है; रैपट, लटकाये ट्रे, लैन्टर्न जाल और मोती जालों का उपयोग होता था और आज भी वाणिज्यिक सीपी संवर्धन में कुछ हद तक इनका उपयोग हो रहा है। इन में बीजों को उच्च सान्द्रता के पादप्लवक युक्त तटीय जल स्तम्भ पर जैव-निक्षेपण और नितलस्थ परभक्षियों से दूर स्थापित करते हैं।

अभितट (ऑनशोर) नर्सरी प्रणालियाँ

अभितट नर्सरी प्रणालियाँ छोटे द्विकपाटी बीजों के संवर्धन करने का एक अर्ध-नियन्त्रित प्राकृतिक तल प्रदान करता है। इन में संवर्धन स्थानों का ठीक चयन और पर्याप्त तकनीकी निवेश अनिवार्य है। परंपरागत अभितटीय नर्सरियों में समुद्र जल की निरन्तर आपूर्ति के प्रबन्धन किए रेसवेस या शालो-टयर्स ट्रे है का उपयोग किया जाता है। रेसवेस विभिन्न प्रकार के डिज़ाइन और आकृति के होते हैं।

साधारणतया ये एपोक्सि से आवृत लकड़ी, फाइबर ग्लास या कंक्रीट से निर्मित लंबे, उथले टैंकियाँ या ट्रफ देते हैं। रेसवे के एक अग्र में समुद्र जल प्रवेश करता है और टैंक में समतल रूप में बहकर विपरीत दिशा में जाता है। उथले रेसवेस में टैंक के अधःस्तर में सीपी बीजों के एक पतला परत बिछाता है और स्टान्ड पाइपों के ज़रिए जल स्तर अनुकूल किया जाता है जिससे जल का समतल प्रवाह बीजों को आवृत करने के लिए आवश्यक गहराई प्राप्त करती है। गहरे रेसवेसों में प्लास्टिक जालाक्षि के रैक या टयर्स सीपी बीजों बिछाने के लिए उपयोग किया जाता है।



गहरे रेसवेस में समतल जल प्रवाह के समायोजन के लिए बाफिल्स का प्रयोग किया जाता है।

उपरी-प्रवाह नर्सरी प्रणालियाँ/उप-फ्लो नर्सरी सिस्टम्स

हाल में कई द्विकपाटी नर्सरियों में ऊपरी प्रवाह संवर्धन प्रणालियों के प्रयोग से रेसवेस और ट्रे नर्सरी संवर्धन रीति का प्रयोग कम हो गया है। इस प्रणाली में एक खड़ी जल प्रवाह (Vertical water flow) रीति का प्रयोग होता है। उपरी प्रवाह प्रणाली में दो रीतियाँ प्रचलित हैं: 'एक्टिव' और 'पासीव' प्रणाली। एक्टिव में जल को बीजों पर नीचे से ऊपर की दिशा में बहने देता है और 'पासीव' में ऊपर से नीचे की ओर। 'एक्टिव'

प्रणाली तल बन्द किये बेलनों में किया जाता है। इस में दाब के समय जल अन्दर आने के लिए नीचे के भाग में फ्लम्ब किया जाता है। सीपी बीजों को अन्तर्ग्राही नाल के ऊपर लटकाया जाता है। जल, बीजों को सींचकर ऊपर उठता है और बेलन के ऊपरी भाग में प्रबन्ध किये नाली से बाहर जाता है। 'पासीव' प्रणाली में बेलनों का तल खुला रहता है जिनको टंकियों में लटकाये देते हैं। उपयुक्त जालाक्षि के एक स्क्रीन के ज़रिए सीपी बीजों को पात्र के तल में रखता है। टंकियों में प्रवेशित जल प्रत्येक पात्र के ऊपरी भाग में रखे नालियों से बीजों पर पड़ता है। उपयुक्त आकार के सीपियों के वाणिज्यिक उत्पादन के लिए ये पालन प्रणालियाँ उपयोग की जा सकती हैं।



सिल्ला सेरेटा (पंक केकडा) का प्रजनन और पालन

ई.वी. राधाकृष्णन, मेरी के माणिशेरी, जोसलीन जोस,

सुबोध कुमार पत्रा, लिया अंबि पिल्लै

केंद्रीय समुद्री मात्स्यिकी अनुसंधान संस्थान, कोचीन

भूमिका

1990 के आरंभ तक भारत में पंक केकडा एक देशी मात्स्यिकी माल था। जीवंत रूप में इसका परिवहन करने की रीतियाँ विकसित हो जाने पर इसकी निर्यात साध्यताएं बढ़ गईं, परिणाम स्वरूप हाल में यह एक महत्वपूर्ण निर्यात माला बन गया है। जिसको दक्षिण पूर्वी एशियाई देशों में बड़ी माँग है। अपनी स्वादिष्टता और पौष्टिकता के लिए केकडा पहले ही मशहूर है, देश में मंद हो जानेवाली झींगा पालन रीतियों की प्रतिपूर्ति के लिए इसकी पालन रीतियाँ विकसित करना समय की माँग है। आज कल सिल्ला वंश में आनेवाले केकडों को मुटाने याने कि वजन बढ़ाने की रीति भारत में व्यापक बन गया है। यह शिशु केकडों को समुद्र से संग्रहित करके पालन-गोहों में बढ़ाने की रीति है। यह रीति अत्यंत लाभकारी होने के कारण हमारे समुद्रों से शिशु केकडों की अनियमित पकड़ हो रही है जिस से इसकी अतिजीविता स्थिति खतरे में पड़ जाने का डर है। इसको मानते हुए सी एम एफ आइ आर में पंक केकडा बीजों का हैचरी उत्पादन विशेष कर बड़ा पंक केकडा सेरेटा के बीजों के विकास के लिए किए प्रयास इस लेख का प्रतिपाद्य है।

पालन वस्तु और विधियाँ

डिंभक उत्पादन करने की मादा केकडों को व्यापारियों से या हैचरियों से संग्रहण किया था। समुद्र से संग्रहित अंडधानी मादाओं के अंडों को बाक्टीरिया और सीलियोटा से मुक्त करने को एक घंटे तक 30 पी पीएम फोर्मालिन से उपचार किया। स्फुटन होने तक शुद्ध पानी से भरे फैबर ग्लास टैंकों में निरंतर वायु प्रवाह देते हुए पालन किया। अंडधारी अवस्था में केकडे कुछ नहीं खायेंगे इसलिए कोई खाद्य नहीं दिया। 25% पानी का नियमित विनिमय करते हुए अपशिष्ट वस्तुएं निकाल दिया। अंडसेचन के अंतिम अवधि में अंडे

पीले से भूरे रंग के हो जाने पर मादा केकड़ों को शुद्ध पानी से भरे हैचिंग टैंक में स्थानांतरित किया और उत्पादित ज़ोइयाओं (Zoea) की निगरानी की।

पालित मादा केकड़ों की अंडे बाक्टीरिया और सिलिएटा और फंगे से मुक्त देखे गए। इन्हें इनसिटु बयोलजिकल फिल्टर सेट से घटित 10 टन धारितावाले फाइबर ग्लास टैंकों में पाला था। इन्हें आहार के रूप में कच्चा सीपी व शंबु मांस, स्क्विड व छोटी झींगे दे दिये। पानी का पी एच (8-8.2) और अमोनिया शून्य स्तर में अनुरक्षण किया। अपशिष्टों को निकालके रोज पानी की गुणता का अनुरक्षण किया और हफ्ते में एक बार 75% पानी का विनिमय भी किया। नई स्फुटित केकड़ा ज़ोइयाओं को दूसरे टैंक में डालके पालन किया। इस दौरान तापमान 26 - 32°C में अनुरक्षण किया।

2 टन धारितावाले फैबर ग्लास टैंक में 1.5 टन शुद्ध पानी भरके *आइसोक्रेसिस गलबाना* और रोटिफर *ब्राकियोनस रोटान्डिफर* से पानी का उर्वरण किया। पानी का तापमान व पी एच यथाक्रम 24°C व 27°C और 7.8 व 8.2 के बीच अनुरक्षण किया। लवणता 34 ± 1 पी पी टी में अनुरक्षण करते हुए निरंतर वातन किया। कुल 40,000 डिंभकों का संभरण किया और रोज़ एक तिहाई पानी का विनिमय किया। रोज़ संपोषित रोरिफर व एल्गे देकर पानी का संपोषण किया।

मांग के अनुसार हैचरी में पालित जीवों खाद्य *नानोक्लोरोप्सिस*, *आइसोक्राइसिस गालबाना*, *कीटोसीरोस ग्रासिल्लस*, *क्लोरेल्ला सलैना* और रोटिफरों से खिलाया। बाद की दशाओं में अभी अभी स्फुटित आर्टिमिया नाप्ली और झींगा बीज-कस्टार्ड, खाद्य के रूप में दिया। जब डिंभक केकड़ावस्था में पहुँचे तब उन्हीं। टन धारितावाले नर्सरी टैंक जिस के धरातल मिट्टी व मोलस्क कवचों से भरा हुआ हो, में स्थानांतरित किया।

परिणाम

अंडसेचन और स्फुटन

अंडसेचन अवधि 10-11 दिवस थे। नए स्फुटित अंडे गोलाकार

व स्फुट पीले / नारंगी रंग के थे। धीरे धीरे रंग बदलके स्फुटन के पहले गहरे भूरे रंग हो गये। माइक्रोस्कोप से देखने पर अंडों में ज़ोइया आकार दृश्य था। नए स्फुटित अंडे के आकार $326.66 \pm 19.58 \mu$ और अंड सेचन के अंत में $399.64 \pm 10.57 \mu$ थे।

कुल हुए 14 स्फुटनों में 8 सफल देखा गया। सभी स्फुटनों के 90-92% अंडे निषेचित थे। इन डिंभकों के पालन करने के श्रम प्रयोगशाला में तीन और समूह में दो बार किए गए।

स्फुटन प्रातः काल 5 बजे और 8 बजे के बीच हुआ था। नए स्फुटित ज़ोइया सक्रिय रूप से प्रकाश की ओर समूहों में बढ़ते हुए देखा। दुर्बल ज़ोइया कम सक्रिय व टैंक के नीचे में ही रहे।

डिंभक पालन

प्रयोगशाला पालन के लिए उपयोग किए जानेवाला जीवों स्वाद्य जैसे *कीटोसिरा*, *क्लोरेल्ला* और रोटिफरों का सम्मिश्र प्रयोग डिंभकों की बढ़ती के लिए अनुयोज्य नहीं देखा। शुरूआत में नानोक्लोरोप्सिस और रोटिफर और बाद में आर्टिमिया नाप्ली और अंडा कस्टार्ड अनुयोज्य खाद्य देखा जिसे खाकर डिंभक क्राबलेटों में विकसित हुआ था। जमा हुआ आर्टिमिया, क्लोरेल्ला + रोटिफर और क्लोरेल्ला + आर्टिमिया नाप्ली से खिलाने पर भी सफल परिणाम नहीं मिला था।

समूह पालन में नानोक्लोरोप्सिस स्टॉक के अभाव में मादा आइसोक्राइसिस एल्गे से खिलाया। प्रयोगशाला में उपयोग किए अन्य खाद्यों का प्रयोग यहां भी किए। कुल संग्रहित 40,000 ज़ोइयाओं में 350 मेगलोपे के रूप में विकसित होके उन से 150 कर्कट बन गए। झींगा अंडा कस्टार्ड + आर्टिमिया नाप्ली से खिलाए दूसरे परीक्षण के सारे जोड़े प्रथम अवस्था में ही मर गए।

डिंभक अवस्थाएं

अंडों के स्फुटन के बाद जीव ने 5 ज़ोइया स्टेजों को पार किया (Z1 - Z5)। प्रत्येक स्टेज और खाद्य का विवरण नीचे सारणी में दिया गया है।



पंक केकडा *सिल्ला सेरेटा* की डिंभक अवस्थाएं, मोल्टन के बीच की अवधि और आहार

डिंभक अवस्था	मोल्टन के बीच की अवधि	आहार/आहार मिश्रण
ज़ोइया Z1	4 - 5	रोटिफर + नानोक्लोरोप्सिस
Z2	3 - 4	do + do
Z3	3 - 4	नानोक्लोरोप्सिस + रोटिफर + अर्टीमिया नॉप्लि Z3 बन जाने के बाद एक दिवस को खिलाना
Z4	2 - 3	रोटिफर + अर्टीमिया नॉप्लि
Z5	3 - 5	रोटिफर + अर्टीमिया नॉप्लि + अंडा कस्टार्ड
मेगालोपा	6 - 8	अंडा कस्टार्ड + अर्टीमिया नॉप्लि

चर्चा

केकड़ा बीजों के उत्पादन के लिए मादा केकड़ों को समुद्र से

संग्रहण करना या हैचरी में पालित करना है। समुद्र से संग्रहित केकड़ों से मिलनेवाला संतति कम आरोग्यवान होंगे। पकड़ व परिवहन में मादाओं का उचित परिरक्षण न होना इसका कारण है। मादा केकड़ों के प्रेरित प्रजनन से अंडों के उत्पादन व पालन करना एक स्वीकार्य रीति है। पालनावस्था में ही मोल्टन, मैथुन और प्रजनन करवाके थोड़े ही समय में बीजोत्पादन करने की रीति इन सब से स्वीकार्य है।

डिंभकों का पालन अनुयोज्यतम स्थितियों में करना चाहिए। उचित समय का आहार उचित समय पर दिया जाना कठिन काम है। फिर भी शुरूआत से ही बड़ी ध्यान देकर यह दिया जाना है किसी भी हालत में जडावस्था खाद्य से खिलाना स्वीकार्य नहीं है।

अन्य क्रस्टेशियाइयों के समान केकड़ा स्वजातिभक्षी है। यह अभिलक्षण डिंभक अवस्था में भी दिखाया पड़ता है। इसे रोकने के उपाय यथेच्छ खिलाना और विविध प्रकार के अभय स्थान प्रदान किया जाना है।



तलमज्जी पखमछलियों का समुद्री संवर्धन

एल. कृष्णन और ग्रेस मात्यू

केंद्रीय समुद्री मात्स्यिकी अनुसंधान संस्थान, कोचीन

समुद्री तलमज्जी पख मछलियों में समुद्री संवर्धन शक्यता रहनेवाली मछलियाँ हैं सर्पमीन, पर्च, पोम्फ्रेट और चपटी मछलियाँ। एक एफ ए ओ आकलन यह बताता है कि वर्ष 2010 तक जलकृषि उत्पादन 33-मिलियन मेट्रिक टन (27-39 मिलियन मेट्रिक टन रैंच) पहुँच जाएगा। यह भी भवितव्य है कि यह भविष्यवाणी वर्ष 2010 के पहले ही घटित हो जाएगी इसमें समुद्री पख मछलियों का विशेष योगदान भी रहेगा।

दक्षिण पूर्वी एशिया में *एपिनेफेलस*, *लूटजान्स*, *प्लेक्ट्रोपोमस*, *क्रोमिलेप्टेस*, *राचिसेन्ट्रॉन*, *लाटस कालकारिफर* जैसी मिश्रित उष्णकटिबंधीय मछली जातियाँ महत्वपूर्ण होने पर भी तीव्र समुद्री पिंजरा संवर्धन अपनी शैशवावस्था में है। इन जातियों को अधिकतर लकड़ी से बनाये पिंजरों में पालते हैं और मछलियों को बने-बनाए खाद्यों से खिलाते हैं। जबकि इससे विपरीत यूरोप, अमेरिका, ऑस्ट्रेलिया, और जापान में सालमो, सिरियोला, पागरस *डाइसेन्ट्रारकस* और *स्पारस* जातियों की मछलियों के पालन के लिए औद्योगिक पालन तकनीकों का प्रयोग हो रहा है।

सेरानिडे कुल में आनेवाले कलवे की कई जातियाँ उच्च मूल्य की समुद्री मछलियाँ हैं जो उष्ण एवं उपोष्ण कटिबंधीय देशों में अत्यधिक माँग के स्वादिष्ट भोजन हैं। कलवों को प्लवी, या स्थापित पिंजरो में, तटीय तालाबों में या टैंकों में भी व्यापक रूप से पालन किया जाता है। लगभग पिछले दशकों से मलेशिया, तायलैन्ड, सिंगपुर, होंकॉंग और इन्डोनेशिया में *एपिनेफेलस टाविना* और ई. *माल्बारिकस* का पालन हो रहा है। होंकॉंग और जापान में ई. *ब्लीकेरी* और ई. *कोलोइडस*; तायवान में ई. *सिल्लस* और ई. *आम्बिसेफालस*; फिलिप्पाइन्स में ई. *सेक्सिफासियाटस* और ई. *ब्लीकेरी*; मेक्सिको में ई. *मेक्सिको* और ई. *मोरियो*; साउदी अरेबिया में ई. *फस्कोगट्टाटस* और ई. *पॉलिफेकाडियोन* का पालन किया जाता है। कलवाओं के वाणिज्यिक स्तर पिंजर संवर्धन या तालाब संवर्धन के लिए प्राकृतिक

संस्तरों से अंगुली की उपलब्धि में कमी एवं अस्थिरता रहने पर भी छोटी कलवा मछलियों का संग्रहण अभी भी हो रहा है। तटीय एवं मैंग्रोव क्षेत्रों से ब्रश लूर (brush lure), जाल; संपाश आदि के ज़रिए ये पकड़ी जाती है। हाल में मलेशिया, सिंगपुर और कुवाइट जैसे कई देशों ने कलवा मछलियों की नियन्त्रित अवस्था में प्रजनन और बीजों के स्फुटनशाला उत्पादन में सफलता प्राप्त की है। सी एम एफ आर आइ के मंडपम केन्द्र में भी कलवा मछलियों के लिए विशेषतः ई. ताविना पर पिंजरा संवर्धन पर परीक्षण किया गया है। (हम्सा और कासिम, 1992)

मात्रा की खाड़ी से जीवंत कलवा मछलियों के संग्रहण और पिंजरों में डालकर इनके वज़न बढ़ाकर होंगकॉंग को निर्यात करने की रीतियाँ टूटिकोरिन से भी रिपोर्ट की गयी है। मात्रा की खाड़ी में टूटिकोरिन के उत्तर भाग में स्थित वेल्लापाट्टी के निकट 70-200 मि मी आकार के अंगुली कलवा मछलियाँ उच्च मात्रा में उपलब्ध है। इसके अलावा सिगानस, लेथ्रिनस और कालियोडॉन के बीज भी यहाँ प्रचुर है। (रंगस्वामी आदि, 1996)। सी एम एफ आर आइ ने जैव निर्यंदकों के प्रयोग करके टैंको में कलवा मछलियों के बूड स्टॉक विकास करने और प्राकृतिक अंडजनन प्राप्त करने के लिए भी प्रौद्योगिकियाँ विकसित की है (ग्रेस मात्यु आदि, 2002)। हमारे तट क्षेत्रों के मौसमिक प्रकृति के अनुसार तटीय तालाबों में इसका संवर्धन किया जा सकता है। उत्तर-पूर्व तट के चिल्का झील, दक्षिण-पूर्व तट पर पुलिकाट झील, मात्रा की खाड़ी और पाक खाड़ी, केरल और कर्नाटक तटों के पश्चिम क्षेत्र, दक्षिण-पश्चिम तट पर कच की खाड़ी और आन्डमान और लक्षद्वीप द्वीप समूहों के उथले लैगून कलवा मछलियों और अन्य पख मछलियों के तालाब और पिंजरा संवर्धन के लिए अनुयोज्य दखे गये हैं।

पिंजरा एवं तटीय तालाब संवर्धन में कलवा मछलियों को 8

से 10% की दर पर ट्राश मछली आहार के रूप में देती है। कलवा मछलियों के तालाबों में संभरित जीवंत तिलेपिया प्रजनन के ज़रिए प्राकृतिक खाद्य की आपूर्ति करनी है। लगभग 6-7 की संवर्धनावधि में 8 मी की लंबाई, 5 मी की चौड़ाई और 3 मी. की ऊँचाई के पिंजरों से प्रायः 600 कि ग्रा उत्पादन मिलता है।

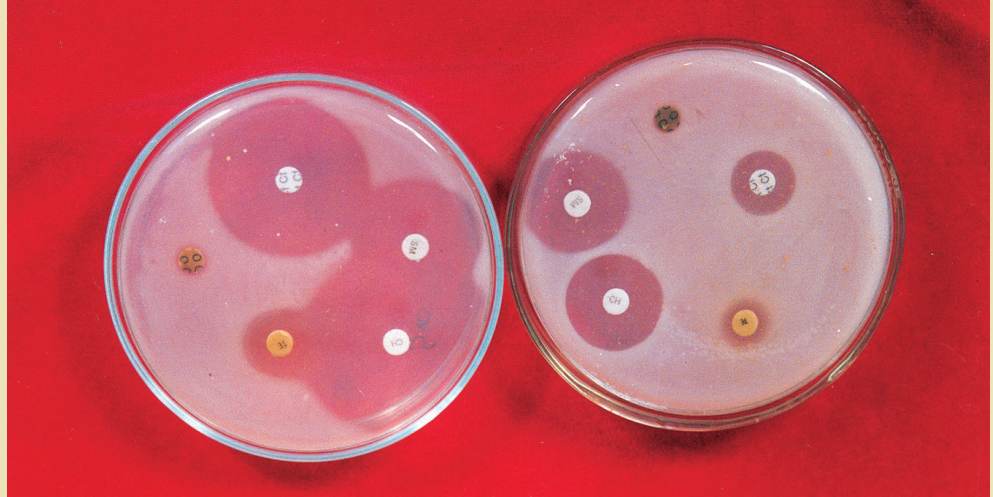
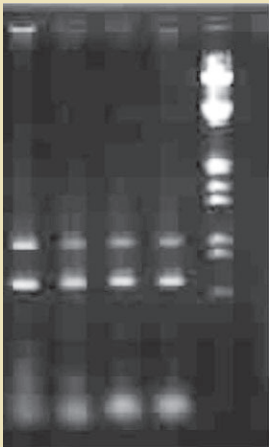
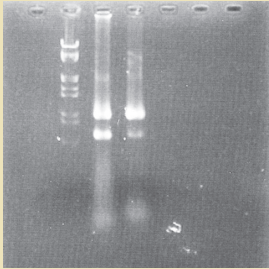
पर्याप्त मात्रा में ऑस्ट्रेलिया में बारामुण्डि (लाटेस कालकारिफर); नारवे, कैनडा, ऑस्ट्रेलिया और यू एस ए में एटलैन्टिक सालमोन; मेडिटेरेनियन, नारवे में हालिबट और यू के में यूरोपियन सी बास और यूरोपियन सी ब्रीम का संवर्धन होता है। सिंगपुर में मलेशिया और सिंगपुर के बीच के समुद्री क्षेत्र में जाल पिंजरों में सी बास का संवर्धन वाणिज्यिक तौर पर किया जाता है। वर्ष 1973 से लेकर सी बास के बीजोत्पादन में तायलैन्ड का प्रथम स्थान है। भारत में भी तटीय तालाबों में सी बास का संवर्धन किया जाता है। अनुसंधानाधीन और समुद्री संवर्धन के लिए शक्यता प्राप्त अन्य जातियाँ हैं रैबिट फिश सिगानस कानालिकुलाटस, एस. जावस और रजत पोम्फ्रेट पाम्पस आरजेन्टस।

आज पखमछलियों के समुद्री संवर्धन में हैचरियों (स्फुटनशालाओं) से बीजों की अपर्याप्त आपूर्ति, प्राकृतिक संस्तरों से बीज उपलब्धि की अस्थिरता एवं इसका खाद्य-ट्राश मछलियों की कमी महसूस की जानेवाली मुख्य बाधाएँ हैं इन कमियों का सामना करने के लिए तरकारी प्रोटीन भी युक्त वैकल्पिक खाद्यों को रूपायित करने और स्टील, एच डी पी ई, प्लास्टिक आदि के प्रयोग करके समुद्री ग्रो आउट सिस्टम के आधुनिकीकरण करने के लिए अनुसंधान कार्य चल रहा है। इन सभी कोशिशों के साथ सरकारी एवं प्राइवेट सेक्टरों के सहयोग भी प्राप्त हो जाए तो पखमछली समुद्री संवर्धन में हम ज़रूर विकास पा सकते हैं।



भाग II

जलकृषि में जैवप्रौद्योगिकी अनुप्रयोग



समुद्री शैवाल अनुसंधान में जैवप्रौद्योगिकी और भारत में उपयोगिता

पी. कलाधरन

केंद्रीय समुद्री मात्स्यिकी अनुसंधान संस्थान, कोचीन

सारांश

भारत में समुद्री शैवाल संबंधी अनुसंधान के क्षेत्र और उपयोगिता में जैवप्रौद्योगिकी की असीम साध्यताएं हैं। यह लेख समुद्री शैवाल जैवप्रौद्योगिकी के दूरदर्शी क्षेत्रों की सूची प्रस्तुत करता है। सी एम एफ आर आइ में समुद्री शैवाल पर किये जैवप्रौद्योगिकी अभिविव्यस्त अनुसंधान कार्यों जैसे (मर्कुरी) और काडिमियम का निराविषीकरण (de-toxification), समुद्री शैवाल से ऐगरेस एन्जाइम, साइटोकिनिन और गाबा (GABA) का उत्पादन एवं ऐगार फैक्टरी विसर्ज्यों का ईंधन और उर्वर के रूप में उपयोगिता का भी इस लेख में चर्चा किया गया है।

प्रस्तावना

भारत में समुद्री शैवाल जैवप्रौद्योगिकी के दूरदर्शी क्षेत्र है:

1. वाणिज्यिक समुद्री शैवालों के आनुवंशिकतः संशोधित विभेदों का उत्पादन
2. प्रयोगशाला की नियन्त्रित स्थिति में समुद्री शैवालों के विदेशी प्रकारों के पर्यनुकूलन, कृषि और प्रचारण।
3. उन समुद्री शैवालों, जो मौसमी हैं, विरल हैं और विवेकहीन विदोहन के कारण विनाश हो रहे हैं, का संग्रहण
4. समुद्री, तटीय और तल-आधारित समुद्री संवर्धन में आविषलु प्रदूषकों के जीव उपचार (bio remediation) और अवशोषण (sorption)
5. पात्रे स्थिति में समुद्री सूक्ष्म और स्थूल ऐलर्गों से बयोएक्टिव पेप्टाइड्स, पॉलिसेकेराइड, उपापचयन (मेटाबोलाइट) और औषध के निचोडन, पृथकीकरण और हेरफेर (मानिपुलेशन)।



उपर्युक्त पहलुओं पर सी एम एफ आर आइ द्वारा चलाए गये कुछ कार्यों का एक संक्षिप्त विवरण नीचे सूचना के लिए प्रस्तुत है।

1. आइसोक्राइसिस गाल्बाना के ज़रिए पारद (मर्कुरी) का जीव उपचार (बायोरेमिडियेशन)

पारद (मर्कुरी) नितलस्थ जीवों के लिए विषैला होने पर भी कुछ जीवाणु और ऐल्गे ऐसे हैं जिनमें इस धातु को प्रतिरोध करने का और पारद के रूपान्तरण को शून्य संयोजक बाष्पशील (zero valent volatile) बनाने की शक्ति होते हुए देखा है जो रासायनिक रूप से कम विषैला होता है। ऐल्गे और जीवाणु के ज़रिए पारद के इस बाष्पीकरण स्वभाव को नियन्त्रण पारद प्रदूषण (control mercury pollution) कहा जा सकता है। संवर्धन ब्रौथ से पारद निकालने के लिए सी एम एफ आर आइ एककोशीय समुद्री सूक्ष्म ऐल्गे *आइसोक्राइसिस गाल्बाना* पार्क प्रयोग करके देखा। इस ऐल्गे का LC_{50} प्रति लीटर 25 μg होने के कारण Hg के आगे इसकी काफी ऊँची प्रतिरोध शक्ति है। परीक्षण में यह समुद्री ऐल्गे केवल 4 घण्टों के समय में द्रुत गति से 86% पारद को निकाल करते हुए देखा। इस दृष्टि में कम अवधि एवं निम्नलागत में पारितंत्र को बिगाड़े बिना तटीय तंत्र के Hg प्रदूषण कम करने में *आइसोक्राइसिस गाल्बाना* पार्क का उपयोग बहुत ही महत्वपूर्ण होगा।

आइसोक्राइसिस गाल्बाना द्वारा Hg का बाष्पीकरण

समय (घंटे)	संवर्धन ब्रौथ से Hg पृथक्करण की प्रतिशतता	
	1. गाल्बाना	निस्थित समुद्र जल
2	22.7	4.5
4	85.9	21.4
8	90.5	21.4
24	93.6	39.1
48	95.5	45.7

2. ऑसिल्लाटोरिया जाति से ऐगारेस

कम कीमत पर नए औषधों और विशेष रासायनों के निर्माण

की दृष्टि में सूक्ष्म ऐल्गों ने काफी आर्थिक ध्यान आकर्षित किया है। नारक्कल में सिलपोल बसारे तालाब में संवर्धित *ग्रेमिलेरिया इडुलिस* के थैलस में संलग्न होकर उगने वाली हरा नील ऐल्गे की समुद्री जाति *ऑसिल्लाटोरिया एस पी* को, थैलस के संलग्न बिन्दु में दिखायी पड़ी अपवर्णता के कारण इसकी ऐगारोलिटिक सक्रियता जाँचने के लिए परीक्षित किया। प्रथम तीन घण्टों के अंदर प्रति मि ली 600 μg प्रोटीन सघनता युक्त क्षारीय Po_4 बफर निचोड़ों ने 1% ऐगार स्लान्ट्स पर ऐगार विलेयीकरण (490 μg) की अधिकतम सक्रियता दिखायी। इस एन्ज़ाइम का शुद्धीकरण कर सकता है और *ग्रेमिलेरिया इडुलिस* और अन्य ऐगारोफाइटों से जीवद्रव्यक (प्रोटोप्लास्ट) अलग करने के लिए मसिरोज़ाइम और सेलुलेस के साथ इस एन्ज़ाइम का उपयोग किया जा सकता है।

ऑसिल्लाटोरिया जाति से प्राप्त एन्ज़ाइम की ऐगारोलिटिक सक्रियता

समय घंटे	कुल उत्पन्न कुल विलेय शर्कर (μg /मि. ली/घंटे)	
	पी एच 6.0	पी एच 7.5
1	35	40
2	73	120
3	240	490
4	341	330
5	172	110

3. सरगैसम से काडिमियम का जैवशोषण

जैवशोषण जैवपदार्थों (निष्क्रिय) या (सक्रिय) द्वारा विलयन से विषैला धातुओं, पीडकनाशियों या किसी भी संदूषक को संशोधित/निकालने का एक महत्वपूर्ण कार्यविधि है। जैवशोषण संदूषकों का नाश नहीं करेगा बल्कि इनको गाढ़ा करता है या इनको अन्य रूप में परिवर्तित कर देता है। अधिकतर समुद्रीशैवालों के कोश भित्ति में कोलॉइडी बहुशर्करा जमाव होने के कारण इनको औद्योगिक बहिस्त्रावों या प्रदूषित तटीय जल राशियों के उपचार के लिए उपयोग किया जा सकता है। *सरगैसम वाइटी* के



सूखे टुकड़ों ने 2.5 से 3.0 घंटों में 5.0 के इष्टतम पी एच स्तर पर काडिमियम क्लोराइड से संदूषित समुद्र जल से 70% काडिमियम निकाल दिया।

सरगैसम द्वारा काडिमियम का निष्कासन

समय घंटे	काडिमियम का निष्कासन (μg /ली)
0	9.4
1	7.5
2	4.6
3	4.1

4. जीवंत ऐल्गे चारा के प्रयोगशाला संवर्धन के लिए समुद्री शैवाल निचोड़

जलकृषि में तेज़ बढ़ती जीवंत चाराओं के संवर्धन में रुचि बढ़ा दी है। किसी भी जलकृषि प्रणाली के स्फुटनशाला (हैचरी) प्रचालन में जीवंत चारा अनुपेक्षणीय गुण प्रदान करता है। सूक्ष्म ऐल्गे को प्रयोगशाला एवं हैचरियों में पालन करने के लिए वाल्नेस, सीबेर्स, मैकिल्स आदि कई परंपरागत रीतियाँ भी प्रचलित हैं। ये मीडिया अकार्बनिक फोस्फेट्स और नाइट्रेट्स की उच्च सान्द्रता के साथ अजैव एवं खचीला है। हरा समुद्री शैवाल *उल्वा लाक्टुका* के निचोड़ तीन जीवित चारा ऐल्गे जातियों, *टेट्रासेल्मिस ग्रेसिलिस*, *आइसोक्राइसिस गाल्बाना* और *कीटोसिरोस कालसिट्रान्स* को वैटामिनों (B1 एवं B12) से संपूरित संवर्धनों के आगे 250-325% और बढ़ती और वृद्धि दी। जब इन जीवंत चाराओं को विविध स्तरों में उद्यान-मृदा और *उल्वा लाक्टुका* से अनुपूरित समुद्री जलों में संवर्धन करने पर *टेट्रासेल्मिस ग्रेसिलेरिया* और *आइसोक्राइसिस गाल्बाना* बढ़ती में 16% और 58% वृद्धि दर्ज की और *कीटोसिरोस* की बढ़ती में 19% घटती दिखायी पड़ी।

इस सरल तरीके को रोडोफाइसी और फियोफाइसी के कई अन्य समुद्रीशैवालों के निचोड़ विविध अनुपातों में जोड़कर और भी सक्षम बनाया जा सकता है। इस नये तरीके के सबसे प्रमुख

गुण यह है कि तट प्रभावी होने के साथ यह तरीका सूक्ष्म ऐल्गा कोशों अकार्बनिक लवणों के जमाव कम करता है, फलतः जीवों में एवं संवर्धन पारितंत्र में इनका परिवहन भी कम हो जाता है।

5. बीज प्रभव के रूप में समुद्रीशैवाल प्रोटोप्लास्ट

आज संवर्धन के लिए उपयुक्त समुद्रीशैवाल विभेदों की पर्याप्त मात्रा में उपलब्धि एक बड़ी समस्या है क्योंकि कि वर्तमान समुद्री संवर्धन तरीके में 25% तक संवर्धित बीजों का संभरण अनिवार्य है। यह उत्पादनक्षमता कम करती है और संवर्धन के लिए बीज संभरण को संवर्धन रैफ्टों में हाथों से लगाना बहुत ही कठिन कार्य भी है। ऐसी स्थिति में समुद्री संवर्धन के लिए बीजों के स्थान पर प्रोटोप्लास्ट का उपयोग किया जा सकता है। *पोर्फाइरा*, *ग्रेसिलेरिया*, *जेलीडियम*, *कोन्ड्रस*, *काप्पाफाइक्स* और *टीरोक्लाडिया* के लिए वर्धनक्षम प्रोटोप्लास्ट की विशेष उपलब्धि की रिपोर्ट की गयी है।

6. लाल समुद्रीशैवाल से गाबा (GABA)

विषिजम से संग्रहित लाल समुद्रीशैवाल से लिये कच्चा गाबा (गाम-अमिनो ब्यूट्रिक अम्ल) को शंबु डिम्भक बसाव में अनुकूलन की सक्रियता मानक सिग्मा ग्रेड की समान सक्रियता के साथ तुलना करके जाँच किया। सिग्मा ग्रेड के गाबा में 10 पी पी एम और इसके बाद 15 पीपी एम में बसाव की उच्च दर दिखायी पड़ी (10 पी पी एम में 100% और 15 पी पी एम में 83%) और समुद्रीशैवाल से लिये कच्चा गाबा ने 10 और 15 पी पी एम में केवल 50% बसाव दर ही दर्ज की थी जब कि नियन्त्रणाधीन गाबा ने 48 घंटों में 20.73% बसाव दर्शाया।

7. कॉलेर्पा रेसेमोसा से साइटोकिनिन जैसे पदार्थ

हरा समुद्री शैवाल *कॉलेर्पा रेसेमोसा* से सी एम - सेलुलोस के आयन विनिमय द्वारा साइटोकिनिन जैसे पदार्थों (सी एल एस) का निष्कर्षण किया। इस निष्कर्षण पर्यरहित (क्लोरोफिल) जैवआमापन के लिए ककड़ी के गहरे रंग के अंकुरित बीजपत्रों के साथ आमापन किया। इसके अनुसार *कॉलेर्पा रेसेमोसा* में

साइटोकिनिन की उपस्थिति स्पष्ट हुई। समुद्री शैवाल स्रोत से प्राप्त 3.0-4.0 पीपी एम के सी एल एस समान सघनता के वाणिज्यिक ग्रेड कैनेटिन की अपेक्षा क्रमशः 3.7% और 17.7% पर्णहरित जीव संश्लेषण प्रेरित करते हुए देखा।

पर्णहरित वर्णकों का सी एल एस और काइनेटिन की उपस्थिति/अनुपस्थिति में जीवसंश्लेषण

सघनता	प्रारंभिक पर्णहरित	अंतिम पर्णहरित	
पीपीएम	($\mu\text{g/g}$ (आद्रभार))	($\mu\text{g/g}$ (आद्रभार))	
		काइनेटिन	शैवाल से लिये सी एल एस
0.0	6.12	148.47	143.63
1.0	6.12	215.32	210.73
2.0	6.12	290.17	294.06
3.0	6.12	373.49	386.85
4.0	6.12	421.32	438.93

यह अध्ययन अनुपयोगित एवं कम विदोहित *कालेर्पा रासेमोसा* से साइटोकिनिन उत्पादन की शक्ति साध्यताएं स्पष्ट करती है।

8. ऐगार फैक्टरी बहिस्त्राव को ईंधन और उर्वर के रूप में

भारत में ऐगार और ऐल्जिन उत्पादन करने वाले लगभग 40 फाक्टरियाँ हैं। कुटीर उद्योग के रूप में कार्यरत ये फाक्टरियाँ हफ्ते में लगभग एक टन कच्चे माल का इस्तेमाल करते हैं (कलाधरन और कालियपेरुमाल, 1999)। इन फाक्टरियों से पॉलिसैकेराइड उत्पादन केवल 15% है और 80-85% का दैनिक बहिस्त्राव को कोई उपयोग के बिना ढेर लगा जाता है। भारत सरकार ने राष्ट्र के ऊर्जा परिदृश्य के अध्ययन करने के लिए एक ईंधन नीति समिति (FPC) का गठन किया और यह देखा गया कि कुल ऊर्जा के लगभग टेढ़ अंश जीव भार आधारित अपरंपरागत स्रोतों के ईंधन जैसे लकड़ी, चारकोल, गोबर और वनस्पति अवशिष्टों से आता है। वर्ष 1991 की जनगणना के अनुसार यह मालूम पड़ा कि गाँवों में 39% और

नगर क्षेत्रों में 92% घरों में ईंधन के रूप में जीवभार आधारित ईंधनों का प्रयोग होता है। ऐसी स्थिति में कम से कम ऐगार फैक्टरियाँ कार्यरत क्षेत्रों में बहिस्त्रावों को ईंधन पिण्डिका के रूप में उपयोग किया जा सकता है।

सी एम एफ आर आइ में ऐगार फाक्टरी बहिस्त्राव को पाकक्रिया के ईंधन के रूप में और लोबिया के उर्वर के रूप में उपयोग किया था। इससे बनाये गये ईंधन पिण्डिका में जलाऊ लकड़ी की अपेक्षा ऊर्जा और दहनधारिता क्षमता अधिक है। एफ ए डी से बनाये गये ईंधन पिण्डिका में ऊर्जा धारिता ए एफ डी से 19% और जलाऊ लकड़ी से 15% उच्च थी। इसी तरह ए एफ डी से तैयार किये ईंधन पिण्डिका में जलाऊ लकड़ी की तुलना में भस्म का अंश और दहन दर उच्च थी, जिससे पाकक्रिया में ए एफ डी ईंधन पिण्डिकाओं की श्रेष्ठता स्पष्ट हो जाती है।

ए एफ डी ईंधन पिण्डिकाओं के ऊर्जा, भस्मांश और दहनशीलता और इनके संघटक

नमूना	ऊर्जा धारिता (कैटगरी/ग्रा)	जल 100°C प्राप्त करने के लिए समय	भस्म (%)
ऐगार फैक्टरी बहिस्त्राव	2758	6 मिनट. 25 सेकन्ड्स	14.15
जलाऊ लकड़ी	2865	6 मिनट. 15 सेकन्ड्स	20.17
भूसी से बनाये ईंधन पिण्डिका	3345	5 मिनट. 20 सेकन्ड	22.36
बुराद से बनाये ईंधन पिण्डिका	3238	5 मिनट.	21.04

अगर फाक्टरी अपशिष्ट को पीसकर उर्वर के रूप में लगाये लोबिया नवोद्भिदों ने नियन्त्रित की अपेक्षा लंबाई, (85-87%), आद्रभार (194-329%), पत्तों की संख्या (31-38%) और जड़ ग्रन्थिकाओं की संख्या (42-92%) की बढ़ती दिखायी। उपचारों में ऐगार वर्धमान अपशिष्ट धूलियों के आधार प्रयोग करने के दोनों प्रकारों में बीज बोने के समय का एक बार प्रयोग

नियन्त्रण और अन्य उपचारों के आगे अधिकतम वृद्धि दर्ज की।
लोबिया नवोद्भिदों की बढ़ती में ए एफ डी के आधार प्रयोग का प्रभाव

अतः ए एफ डी को अब अपशिष्ट नहीं कहा जा सकता बल्कि फसलों के लिए उर्वरक के रूप में और पाक क्रिया में ईंधन के रूप में संसाधन और विपणन किया जा सकता है।

उपचार	नवोद्भिदों की लंबाई (से मी)	नवोद्भिदों का भार (ग्रा)	जड़ ग्रन्थिकायें	पत्तों की संख्या
सी	21.4	04.79	12	16
इ-1	42.0	20.23	23	22
इ-2	39.6	14.24	17	21



जलखाद्य उत्पादन में घन-अवस्था किण्वन से सस्य संघटकों का सूक्ष्म जैविकी संपोषण

इमेल्डा जोसफ़, पॉलराज आर और

विजयकुमार. एम.

केंद्रीय समुद्री मात्स्यिकी अनुसंधान संस्थान, कोचीन

सारांश:

सस्य संघटकों के जैव संपोषण के लिए आजकल घन-अवस्था किण्वन का प्रयोग बढ़ रहा है। यह प्रौद्योगिकी कम लागत की है जिसके ज़रिए पोषण प्रोफाइल व पाच्यता बढ़ाया जा सकता है। एनज़ाइम की जलविश्लेषण के लिए भी यह सहायक होता है।

भूमिका

घन वस्तुओं पर सूक्ष्म जीवियों की बढ़ती से पानी के स्वतंत्र सान्निध्य के बिना किए जानेवाला किण्वन को आम तौर पर घन-अवस्था किण्वन कहता है। किण्वन के दौरान घन अवस्था को स्थिर, भागिक या नियमित रूप से बदलाया जा सकता है। आर्द्रता 12% से कम हो जाने पर जैविक क्रियाकलाप और तद्वारा घनावस्था में किण्वन कम हो जाता है जबकि आर्द्रता की प्रतिशतता बढ़ाने पर किण्वन प्रकार्य बढ़ जाता है। सी एम एफ आर आई में घनावस्था किण्वन स्थायी स्थितियों में 60-75% आर्द्रता में बाक्टीरिया *बासिल्लस कोयागुलन्स* या फंगै *अस्पेरिल्लस नैगर* के प्रयोग से किया है। कई सूक्ष्म जीव घन प्रतलों में बढ़ते हुए देखा है, पर तंतुकीय फंगौ और चुने गए बाक्टीरियाओं में यह लक्षण दिखाया पड़ता है।

घन अवस्था किण्वन के अभिलक्षण

परंपरागत पूर्वदेशीय नुस्खों में, उदाहरण के लिए *कोज़ी* प्रोसस में फंगै के ज़रिए धान और सोयाबीन का किण्वन करते हुए सोयासोस तैयार करने की रीति पहले भी थी। कृषि में घनावस्था किण्वन का प्रयोग साइलेज बनाने और अन्य अवायुवीय लाक्टिक एसिड किण्वनों में कम्पोस्ट तैयार करने को और खुंभी खेती में किए जाते हैं। इसके सिवा एनज़ाइमों, रामायनिक, एल्कोहोल और स्टार्टर कल्चरों (स्टॉक) के उत्पादन के लिए भी

इसका इस्तेमाल होता है। सी एस एफ आर आइ में फंगै *अस्पेरगिल्लस नैगर* से अमिलेस और प्रोटीस स्ट्रेनों का विक्क्रीकरण किया है जो कि मैग्रूवों से अत्पादित होनेवाले औद्योगिक स्ट्रेनों की तुलना में ज़्यादा सक्रिय है। संस्थान में घनावस्था किण्वन का प्रयोग जैव जन्तु खाद्यों के घटक लिग्नोसेल्लुलोसिस के उन्नयन केलिए दिया जाता है। संस्थान में इस तकनीक से विकसित किया मछली आहार झींगों के पश्च डिंभकों को खिलाने केलिए अनुयोज्य देखा गया है।

घनावस्था किण्वन करने के कदम

(1) कच्चे पदार्थों का लघूकरण (2) क्रियावस्तु (सबस्ट्रेट) का रोगाणुनाशन (स्टेरिलाइजेशन) (3) सूक्ष्म जीवों से संरोपण (इनोकुलेशन) (4) उत्पाद वसूली और मूल्यांकन आदि 4 कदम इस प्रक्रिया में सन्निविष्ट है। अच्छे सूक्ष्मजैविकी बढ़ती केलिए पदार्थों का लघूकरण किया जाता है पर कणिकाओं की मात्रा 1 मि मी आकार से कम भी नहीं होना चाहिए। इस से सबस्ट्रेट की संरघ्रता माने पोरोसिटी कम हो जायेगी। वांछित आर्द्रता प्राप्त किए जाने को रोगाणुनाशन के पहले पानी जोडना है। रोगाणुनाशन के बाद फंगै व बाक्टीरियाओं के बीजाणुओं (स्पोर) से संरोपण करना है। एकीकृत बढ़ती केलिए क्रियावस्तु (सबस्ट्रेट) व रोपण वस्तु (इनोकुलम) की अच्छी मिलावट करना है। यह प्रक्रिया अनुकूल तापमान व पी एच एव्यवस्था का अनुरक्षण करके किया जाना है।

घन क्रियावस्तु में सूक्ष्मजैविकी की बढ़ती

जिस प्रकार मिट्टी में सस्यों के मूल (रूट) बढ़ जायेगा उसी प्रकार तंतुक फंगै घन कणिकाओं से आवश्यक आर्द्रता व

पोषण लेते हुए बढ़ता है। बाक्टीरिया कोशों का विभाजन होता है। बाक्टीरिया हो या फंगै ये अतिरिक्त कोशिकीय एनज़ाइमों का उत्पादन करते हैं जिस से सबस्ट्रेट का न्यूट्रियन्ट प्रोफाइल का रूपांतरण होता है।

घनावस्था किण्वन के उपकरण

प्रयोगशालाओं में बीकरों, पेटी डिशों, कॉनिकल फ्लास्कों आदि को फर्मेंटर के रूप में घनावस्था किण्वन केलिए उपयोग में लाये जाते हैं। इसके अलावा ट्रे समान परंपरागत फर्मेंटर, टन्नल आकार फर्मेंटर, पाडल फर्मेंटर, रोटरी ड्रम फर्मेंटर, टर्वर फर्मेंटर आदि भी प्रयोग में हैं। इन में रोटरी ड्रम और टर्वर फर्मेंटर सब से अनुयोज्य है।

घनावस्था किण्वन के लाभ

सूक्ष्म जीवों के प्राकृतिक संस्तरों में बढ़ती इस रीति का मुख्य आकर्षण है। सबमेर्ज्ड फर्मेंटर की तुलना में इसका निवेश और परिचालन व्यय कम है। परिचालन रीति सरल है और उत्पाद घन रूप में होने के कारण संभरण व पाकिंग आसान है। जलकृषि उद्योग में सीधे या अन्य खाद्यों से मिलावट करके इसका उपयोग किया जा सकता है।

बाक्टीरिया *बासिल्लस कोयागुलन्स* की सहायता से सोया बीन आटा और मिश्रित खलियों का घनावस्था किण्वन

यह देखा गया कि महत्वपूर्ण पौष्टिक संपोषण केलिए अनुकूल समय सोयाबीन केलिए 48 घंटे और खलियों केलिए 36 घंटे हैं। इनोकुलम का अनुकूलतम आकार 10^7 से 10^8 कोश मि ली है। शुरुआत में प्रोटीन में कमी और बाद में वर्धन देखा गया। कूड फैबर ($P<0.05$) में भी घटती देखी गई। सारणी 1 व 2 देखिए

सारणी 1 : बासिल्लस आगुलनस से किण्वित सोयाबीन आटा और अकिण्वित उत्पादों का निवटस्थ संयोजन

समय (घं)	कूड प्रोटीन (%)	कूड वसा (%)	कूड फैबर (%)	कूड आश (%)	नाइट्रोजन विहीन एक्स्ट्राक्ट (%)
0	46.97 ± 0.21	0.81 ± 0.02	2.82 ± 0.08	6.89 ± 0.01	44.51 ± 0.08
12	51.36 ± 0.36	0.37 ± 0.09	2.51 ± 0.52	8.25 ± 0.08	37.48 ± 0.48
24	52.89 ± 0.62	0.42 ± 0.07	3.01 ± 0.67	8.36 ± 0.14	35.32 ± 0.65
36	51.66 ± 1.67	0.39 ± 0.04	1.76 ± 0.04	8.81 ± 0.04	37.98 ± 0.71
48	56.39 ± 2.24	0.37 ± 0.04	1.13 ± 0.07	8.78 ± 0.09	34.38 ± 0.08

सारणी 2 : बासिल्लस आगुलनस से अकिण्वित खली मिश्रण और किण्वित उत्पादों का निकटस्थ संयोजन

समय (घं)	कूड प्रोटीन (%)	कूड वसा (%)	कूड फैबर (%)	कूड आश (%)	नाइट्रोजन विहीन एक्स्ट्राक्ट (%)
0	35.04 ± 0.73	2.53 ± 0.95	3.65 ± 0.09	7.63 ± 0.11	51.16 ± 0.88
12	34.97 ± 0.96	4.6 ± 1.21	3.21 ± 0.08	8.62 ± 0.07	48.6 ± 0.91
24	35.52 ± 0.38	4.16 ± 0.75	3.34 ± 0.23	8.66 ± 0.08	48.33 ± 0.47
36	37.07 ± 0.88	2.3 ± 0.26	3.00 ± 0.10	8.91 ± 0.28	48.42 ± 0.82
48	35.98 ± 1.31	2.23 ± 0.11	2.95 ± 0.14	8.9 ± 0.18	49.94 ± 1.61

निर्णय

घनावस्था किण्वन सस्य संघटकों के पौष्टिक संपोषण करने और उनके खाद्य मूल्य बढ़ाने की सफल रीति है। जलकृषि में

उपयोग की जानेवाले कृत्रिम जैव सम्मिश्र खाद्यों की तुलना में यह सस्ता है। अभी इस तकनीक का परिष्कार और वणिज्यीकरण वांछित है।



औषध और कीड़े : जलकृषि में प्रतिसूक्ष्म जीवी कारकों का प्रभाव

वी. चन्द्रिका

केंद्रीय समुद्री मात्स्यिकी अनुसंधान संस्थान, कोचीन

जलकृषि में मछलियों पर विब्रियो अंग्विल्लारम, एयरोमोनास हाइड्रोफिला, माइकोबाक्टीरियम मारिनम, एड्वेसिएल्ला टारडा, पास्युरेल्ला पिसिडा और येरसीनिया रुकरी सहित रोगजन्य जीवाणुओं (बाक्टीरिया) द्वारा होने वाले संक्रमणों को रोकने के लिए प्रतिसूक्ष्मजीवी कारकों (आन्टी माइक्रोबियल एजेंटों) का प्रयोग आज दुनिया भर प्रचलित है। लेकिन जलकृषि में प्रतिसूक्ष्मजीवी कारकों का अधिक मात्रा में प्रयोग संक्रमणकारियों को नाश करने की तुलना में इनके आगे प्रतिरोधशक्ति अर्जित करने के लिए कारण बन जाएगा। टेट्रासाइक्लिन, क्लोरामफेनिकल और अन्य औषधों का आवधिक प्रयोग भी पारिस्थिति तंत्र में उपस्थित कीड़ाओं की शक्ति के क्षय करने के बदले में इन औषधों के आगे प्रतिरोध शक्ति प्रदान करेगी। मछली और कवच प्राणियों की जलकृषि में प्रतिसूक्ष्म जीवी कारकों के असंतुलित प्रयोग के बाद रोगजनकों की प्रतिरोधशक्ति बढ़ती हुई देखी गयी है। इसलिए प्रयोगार्थ चयन की जाने वाली प्रतिजैविकी या प्रतिजैविकी मिश्रितों का अन्य जीवों या संवर्धन कार्यविधियों पर पार्श्वफल पैदा नहीं करनी चाहिए क्योंकि स्ट्रेप्टोमाइसिन की उच्च सान्द्रता प्रकाश विश्लेषण में बाधा डाल सकती है। विब्रियो, एयरोमोनास, स्ट्रेप्टोकोकी आदि रोगाणुओं को रोकने का सल्फानोमाइड्स, टेट्रासाइक्लिन, अमोक्सिलिन, ट्राइमोप्रिम - सल्फोमीतोक्सिन और क्विनोलोनेस के बहुल औषध प्रतिरोध के बारे में कई देशों ने रिपोर्ट की है। जलकृषि में प्रतिसूक्ष्म जीवी कारकों के प्रयोग के तुरन्त बाद प्रतिरोध ए. हाइड्रोफिला का पृथकीकरण होने की रिपोर्ट हमेशा मिल जाती है।

हेटीरियोट्रोफिक एयरोब्स, माइक्रोएयरोफिल्स और एनेरोब्स भी जलकृषि में प्रतिसूक्ष्मजीवी कारकों की अधिकमात्रा में प्रयोग द्वारा प्रतिरोध प्राप्त करते हैं। इस दिशा में चलाए गये कई अध्ययन जलकृषि में प्रतिसूक्ष्मजीवी कारकों के प्रयोग से तलछट और मछली में होनेवाले प्रभाव निर्धारित किया है। उदाहरण के लिए औषधों के प्रयोग किये मछली खेतों के तलछट

से प्रतिसूक्ष्मजीवी कारकों के प्रतिरोध जीवाणुओं का वियोजन किया और एक अध्ययन में उपचार किए मछली खेतों से पकड़ी मछलियों के आंत्र के वस्तुओं से “बहुल प्रतिजैविक प्रतिरोध” को (multiple antibiotic resistance) विकृतियों को वियोजित किया जब कि औषध नहीं लगाए क्षेत्रों की मछलियों के आंत्र में पाये गए जीवाणुओं में यह प्रतिरोध नहीं था।

एम ए आर (multiple antibiotic resistance) अथवा बहुल प्रतिजैविकी प्रतिरोध, जो जलकृषि में उपयोगित प्रतिसूक्ष्म जीवी कारकों के प्रयोग का परिणत फल है, का बाक्टीरियाओं के स्थानांतरणीय R प्लास्मिडों द्वारा प्रतिरोध को अन्य जीवाणुओं में परिवहित करने की क्षमता प्रदान करती है। परीक्षणों ने मछली तालाबों और समुद्री तलछटों के जीवाणुओं के बीच प्लास्मिडों द्वारा प्रतिरोध जीन के होरिज़ोन्टल स्थानांतरण प्रमाणित किया। प्रतिरोध निर्धारकों को वहन करने वाले प्लास्मिडों को मछली रोगजनकों से *एस्क्रीष्या कोली* सहित मानव रोगजनकों में भी स्थानांतरित किया। बहुल प्रतिजैविकी प्रतिरोध निर्धारकों को वहन करनेवाले प्लास्मिडों को मछली, मनुष्य एवं अन्य जीवों के रोगजनकों में भी स्थानांतरित किया। अध्ययन यह सूचित करता है कि प्रतिसूक्ष्मजीवी प्रतिरोध निर्धारकों (आन्टीमाइक्रोबियल रेसिस्टान्स डिटेरमिनेन्स) को समान एवं विभिन्न वनस्पति जातों पर प्लास्मिडों के होरिज़ोन्टल स्थानांतरण के ज़रिए परिवहित किया जा सकता है। उदाहरण के लिए समुद्री वनस्पति जात *विब्रियो जातियाँ* का संक्रमण मनुष्य में तब होता है जब इनके साथ व्रणों का संपर्क हो जाता है।

इक्वाडोर में, कुछ समय पहले चिंगट खेतों में कार्यरत मछुए कोलेरा से पीड़ित हुए। जलकृषि के ज़रिए संवर्धित तिलेपिया पर काम किये लोगों को *स्ट्रेप्टोकोकस इनेई* ने गंभीर चर्म रोग से पीड़ित किया। इसी प्रकार *विब्रियो वल्निफिकस* के एक नये जैवप्रकार द्वारा इस्राएल में सजीव संवर्धित तिलेपिया पर काम करने वाले सौ से भी ज्यादा लोग गंभीर चर्म रोगों से पीड़ित हुए। जापान में *विब्रियो पाराहीमोलिटिकस* एक सर्वसाधारण खाद्य जन्य रोग है। खाद्यजन्य रोग के कारक *साल्मोनेल्ला*

जातियों को मछली एवं चिंगट जलकृषि खेतों में पाया गया है। ये रिपोर्ट साबित करती है कि जलकृषि पारितंत्र में उपस्थित जीवाणु पशुओं और मानव में संक्रमित हो जा सकता है।

प्रतिसूक्ष्मजीवी प्रतिरोध निर्धारकों (एन्टीमाइक्रोबियल रेसिस्टन्स डिटेर्मिनन्स) के नई उपलब्ध अण्विक अभिलक्षणन (मोलिक्युलार कारक्टरेसेशन) भी जलकृषि पारितंत्र और पशु एवं मानव के बीच प्रतिसूक्ष्म जीवी प्रतिरोध की संचार्यता पर बल देता है। *साल्मोनेल्ला टाइफीम्यूरियम* DT 104, में पाए जाने वाला टेट्रासाइक्लिन प्रतिरोध, G क्लास जीन के कारण है। क्लास G जीन का प्रथम पहचान वर्ष 1981 में एक मछली रोगजनक *विब्रियो एन्विक्लारम* के टेट्रासाइक्लिन प्रतिरोध आइसोलेट में हुआ था। *साल्मोनेल्ला टाइफीम्यूरियम* DT 104 में पाया गया फ्लोरोफेनिकल प्रतिरोध जीन *floR* अण्विक के क्रम में *फोटोबाक्टीरियम डामसेला* और एक मछली रोगजनक में प्रथमतः वर्णित फ्लोरोफेनिकोल प्रतिरोध जीन के साथ समानता रखती है। *एस. टाइफीम्यूरियम* DT 104 में उपस्थित सभी प्रतिसूक्ष्मजीवी प्रतिरोध निर्धारकों को क्रोमसोम के आधार पर दो भिन्न इन्टेग्रोन्स (integrons) और एक अन्तःस्थ प्लास्मिड व्युत्पन्न क्रम (Intervening plasmid sequence) में वर्गीकृत किया। क्लास G और निर्धारकों को अन्तःस्थ प्लास्मिड व्युत्पन्न स्वीक्वेन्स में देखा गया। प्लास्मिड - व्युत्पन्न स्वीक्वेन्स मछली रोगजनक *पास्ट्यूरेल्ला पिसिसिडा* में पहचान गये प्लासमिड से बहुत ही समान (94% पहचान) होता है।

उपर्युक्त एवं अन्य रिपोर्ट यह व्यक्त करता है कि जलकृषि पारितंत्र के लिए चयन किए किसी एक प्रतिसूक्ष्मजीवी प्रतिरोध निर्धारक बाक्टीरियाओं से होते हुए मानवजाति को रोग प्रदान कर सकता है।

संक्षेप में जलकृषि में जीवाणुओं के प्रतिरोध के लिए चयन किए गए प्रतिसूक्ष्मजीवी कारकों का विवेकरहित प्रयोग जीवाणुओं की प्रतिरोध शक्ति बढ़ा देती है। यह प्रतिरोध अन्य जीवाणु जातियों में स्थानांतरित करते हुए मनुष्य में रोग जगानेवाले बाक्टीरियाओं के ज़रिए रोगों का संक्रमण कर सकता है। ■

जल जीव कृषि में स्वास्थ्य प्रबंधन के लिए जैवप्रौद्योगिकी का प्रयोग

के.एस. शोभना और के.सी. जोर्ज

केंद्रीय समुद्री मात्स्यिकी अनुसंधान संस्थान, कोचीन

आजकल शीघ्र बढ़नेवाले जल जीव कृषि उद्योग में संक्रामक रोगों का रोकथाम चिंता का विषय है। गहन मछली पालन में होनेवाले दबाव और रोगों की वजह से प्रतिजैविकियों (antibiotics) और रासायनिक पदार्थों का ज़्यादातर प्रयोग होने लगा। लोगों की सुरक्षा और रोगजनकों में प्रतिरक्षा प्रभेदों (रिसिस्टन्स स्ट्रेन्स) का विकास रोकने के लिए दवाओं और प्रतिजैविकियों का उपयोग नियमित किया जाना है। कई किसान लोग निवारण उपायों जैसे पूर्व निदान, अच्छे पशु पालन तकनीक, टीका और रोग प्रतिरोधता होने वाली मछलियों और कवच प्राणियों के प्रभेदों का प्रयोग स्वीकारने के बिना कई संपदाओं का पालन छोड़ देते हैं।

जैव चिकित्सा (बयोमेडिकल) क्षेत्र में जैव प्रौद्योगिकीय (बयोटेक्नोलजिकल) और आण्विक (मोलिक्युलर) तकनीक सफल साबित हुए हैं और जल जीवों के स्वास्थ्य के लिए इन तकनीकों को प्रयुक्त किया जा सकता है। विशेष प्रकार के निदान औजारों के रूपायन, मछली और कवच प्राणियों की प्रतिरक्षा व्यवस्था पर अध्ययन करने और रोगजनकों (पातोजन) और परपोषी जीवों के बीच का संबंध कायम रखने के लिए जैव प्रौद्योगिकी उपयुक्त की जा सकती है। जीन स्थानांतरण से रोग प्रतिरोधता की क्षमता वाले प्रभेदों का उत्पादन और प्रभावकारी टीकाओं (वाक्सिन्स) और चिकित्सा विधियों का विकास और नए तरीके से उनका वितरण भी जैव प्रौद्योगिकी से किया जा सकता है। आजकल उपलब्ध किसी भी अनुसंधान औजारों के सहारे से मछली और कवच प्राणियों में होने वाले रोगों का प्रतिरोध हमारे अनुसंधान कार्यों का मुख्य लक्ष्य है। इस के लिए, फिनफिशों में जीवाणु रोगों के रोकथाम के लिए डी एन ए टीका विकसित करना और कवच प्राणि रोगों की चिकित्सा के लिए प्रतिसूक्ष्माणु (एन्टीमाइक्रोबियल) पेप्टाइडों का मूल्यांकन जैसे तरीके स्वीकार किए जा सकते हैं।



इस लेख में जल कृषि में होनेवाले रोगों के निदान एवं प्रबंधन के लिए स्वीकारने योग्य विभिन्न जैवप्रौद्योगिकीय तरीकों के बारे में संक्षिप्त विवरण दिया गया है।

1. रोगों के द्रुत निदान में जैव प्रौद्योगिकी का प्रयोग

जल कृषि के स्वास्थ्य प्रबंधन में रोगों का द्रुत निदान (रापिड डायग्नोसिस) अपरिहार्य है। रोगों की पहचान के लिए उपलब्ध परंपरागत तरीके अधिक समय लगने वाले हैं और संवेदनशील भी नहीं हैं। प्रतिरक्षी (एन्टीबोडी) पर आधारित रोग पहचान तकनीकों (प्रतिरक्षा निदान) और आणविक निदानों के विकास से इन त्रुटियों को सुधार किया जा सकता है।

1.1. मोनोक्लोनल प्रतिरक्षी पर आधारित निदान

उन्नीसवीं सदी के अंत में प्रतिरक्षा विज्ञान (इम्यूनोलजी) के परीक्षण शुरू होने तक वैज्ञानिक लोगों ने रोग पहचान के लिए प्रतिरक्षियों (आन्टिबोडी) की विशेषताओं को उपयुक्त किया था। वर्ष 1975 में जब कोहलर और मिलस्टीन ने हाइब्रिडोमास के उत्पादन का तकनीक विकसित किया, तब जीव वैज्ञानिक ढांचे के लिए आवश्यक प्रतिरक्षियों की शक्ति में उल्लेखनीय वृद्धि हुई। हाइब्रिडोमास कुछ दीर्घजीवित कायिक कोशिका संकर हैं जो मोनोक्लोनल प्रतिरक्षियों जिनकी पूर्व निश्चित विशिष्टता नहीं है, का उत्पादन करते हैं। इस में, एक प्रतिरक्षित जीव से विलगित प्रतिरक्षी (एन्टीबोडी) उत्पादित कोशिका को माइसोमा कोशिका, जो BALB/C चूहे से लिया गया B कोशिका ट्यूमर है, के साथ संयुक्त किया जाता है। इस प्रकार की संकर कोशिकाओं या हाइब्रिडोमा को क्लोन करके इन विट्रो (जीव के बाहर) रखा जा सकता है जिस से निश्चित विशिष्टता होनेवाली प्रतिरक्षी का उत्पादन होता है। इन्हें एककोशिकीय प्रतिरक्षी (मोनोक्लोनल प्रतिरक्षी) कहा जाता है। इस प्रकार प्रतिरक्षियों का उत्पादन करने वाली कोशिका श्रेणी को नेमी रूप से अलग सा प्रबंधन किया जा सकता है।

परम्परागत रूप से रोग निदान, स्क्रोटोटाइपिंग (scrotyping) आदि के लिए उपयुक्त करने के लिए खरगोशों में बहु कोशिकीय

प्रतिरक्षियों को बनाया जाता है। खरगोश के प्रतिसीरम में कई जीवद्रव्य कोशिका (प्लास्मा सेल) क्लोन करने से व्युत्पन्न, कई प्रकार की प्रतिरक्षियाँ होती हैं और ये प्रतिरक्षियाँ विभिन्न एपिटोपों से आपेक्षिक होती हैं। इस प्रकार की प्रतिरक्षियों की मिश्रित जीव संख्या के उपयोग से बाकग्राउन्ड पतिक्रिया और गलत परिणाम याने फाल्स पोसिटिव जैसे प्रतिरक्षा रासायनिक तकनीकों में विभिन्न समस्याएं पैदा होती हैं। प्रतिसीरम की कम मात्रा में उपलब्धता भी एक गंभीर समस्या है। अतः निश्चित विशिष्टता सहित सजातीय प्रतिरक्षियों का बड़ी मात्रा में उत्पादन करना प्रतिरक्षा रासायनिक अनुसंधान का सबसे उल्लेखनीय लक्ष्य रहा था। मोनोक्लोनल एन्टीबोडियों के उत्पादन के लिए विकसित हाइब्रिडोमा प्रौद्योगिकी से इस लक्ष्य की उपलब्धि हो गयी।

बहु कोशिकीय प्रतिसीरा (पोलीक्लोनल एन्टीसीरा) पर आधारित प्रतिरक्षा निदान तकनीकों के विकास में भी परिणाम में क्रॉस प्रतिक्रिया और असंगतता जैसी कई समस्याएं आ गयी हैं। अगर MAbs (मोनोक्लोनल एन्टीबोडी) पर आधारित निदान किट (जो ज़्यादातर विशिष्ट है) प्रमुख सूक्ष्माणु रोगजनकों के लिए उपलब्ध है तो और भी शास्त्रीय स्वास्थ्य प्रबंधन उपायों को स्वीकारने में सहायक निकल जाएंगे। ऊतक खंडों (टिशू सेक्शन) और ऊतक अधिचिन्हों (इम्प्रिन्ट) में प्रतिरक्षा ऊतक रसायन (फ्लूरसेन्ट आन्टीबोटी तकनीक, इम्यूनोपेरोक्सिडेस आदि) द्वारा नियत रोगजनकों की उपस्थिति की पुष्टि करने और परम्परागत तरीकों से पहचान नहीं किए जाने वाले निम्न स्तर के संक्रमण के पहचान के लिए भी MAbs को उपयुक्त किया जाता है। ELISA (एनज़ाइम लिंक्ड इम्यूनोसोर्बन्ट एस्से) और इम्यूनोडोट जैसे MAbs पर आधारित प्रतिरक्षा निदान किटों को किसानों को उपयुक्त करने लायक रूप से और भी सुगम किया जा सकता है। मछली और कवच प्राणियों के कई वाइरल और बैक्टीरियो रोगजनकों की मोनोक्लोनल प्रतिरक्षियों को भी विकसित किया गया।

मोनोक्लोनल प्रतिरक्षियों के उत्पादन के लिए विकसित हाइब्रिडोमा प्रौद्योगिकी का जलजीव कृषि में महत्वपूर्ण योगदान

हुआ है। मोनोक्लोनल प्रतिरक्षियों को रोग निदान, रोग जनक वर्गीकरण, रोगविज्ञानीय विश्लेषण और टीकाओं के विकास के लिए उपयुक्त किया जा सकता है। इसके अतिरिक्त MAbs पर आधारित एपिटोप विश्लेषण से मछली और कवच मछलियों में दिखाए पड़ने वाले बाक्टीरियल और वाइरस परिवर्तियों के बीच की सूक्ष्म सीरमीय विभिन्नता का पहचान किया जा सकता है। इसलिए यह परीक्षण सीरमीय और रोग विज्ञानीय अध्ययनों में अत्यधिक सहायता प्रदान करता है। उप एकक टीकाओं के विकास के लिए रोगजनन में कारक बन गए एपिटोपों के पहचान के लिए भी मोनोक्लोनल एन्टीबोडियों को उपयुक्त किया गया है।

1.2 मोलिक्युलर निदान

1.2.1. न्यूक्लीक एसिड प्रोब्स और संकरण (हइब्रिडाइसेशन) तकनीक

इस तकनीक में न्यूक्लिक अम्ल प्रोब्स को एनजाइम्स, एन्टीजेनिक पदार्थों रासायनिक संदीप्त मोइटीस (Chemiluminescent moieties) या रेडियो आइसोटोप्स से अंकित है। ये न्यूक्लिक अम्ल के प्रतिपूरक अनुक्रमों के साथ अत्यधिक विशिष्टता के साथ दृढ़ होकर द्विगुणित स्ट्रान्डड मोलिक्यूल बन जाते हैं। प्रोब्स को डी एन ए या आर एन ए लक्ष्यों तक निर्देशित किया जा सकता है और 20 से 20,000 बेसों तक लंबा किया जा सकता है। ओलिगोन्यूक्लियोटाइड प्रोब्स (सामान्यतः 50 बेस युग लंबाई से कम) में लक्ष्य मोलिक्यूल में और भी दृढ़ रूप से संयोग करने की गुणता है।

न्यूक्लिक अम्ल संकरण में मुख्यतः चार स्तर होते हैं: डी एन ए का स्थानांतरण और इसे नाइलोन / नाइट्रोसेल्लुलोज (ब्लोटिंग) जैसे किसी एक झिल्ली (membrane) में निश्चलीकरण; ब्लोट का पूर्व संकरण ऊष्मायन; संकरण (ब्लोट पर लक्ष्य डी एन ए के साथ प्रोब का ऊष्मायन) और संकरणोत्तर धावन। (पोस्टहाइब्रिडाइसेशन वाशिंग)।

इन सिटू (स्वस्थाने) संकरण शीतीकृत विभेदों (Frozen

sections), टच प्रिपरेशन्स या पाराफिन विभेदों पर किया जा सकता है। ब्लोटिंग तकनीकों में सथर्न ब्लोट और डोट ब्लोट संकरण तकनीक सबसे प्रमुख हैं। समुचित पहचान व्यवस्था में बयोटिन या डिगोक्सीजेनिन अंकित प्रोब्स अपयुक्त किया जाना अच्छा है।

1.2.2. पोलिमरेस चेइन रियाक्शन (पी सी आर)

एक डी एन ए मोलिक्यूल के चुने गए भाग में एन्जाइम प्रवर्धन के लिए उपयुक्त एक पात्रे (इन विट्रो) -तकनीक है पोलिमरेस चेइन रियाक्शन। इस में प्रवर्धन एक मिलियन गुना ज़्यादा हो सकता है, डी एन ए विकृतीकरण (denaturation), प्रारंभक तापानुशीतन (primer annealing) और टारगेट डी एन ए विस्तार के तीन स्तरीय चक्रण प्रक्रिया द्वारा थेर्मोस्टेबिल डी एन ए पोलिमरेस की सहायता से साध्य हो सकता है।

डी एन ए संकरण और पी सी आर जैसे मोलिक्युलर तकनीकों ने जल जीव कृषि में रोग निदान के क्षेत्र में एक क्रांतिकारक परिवर्तन लाया है। रोग चौकसी और मॉनिटरन कार्यक्रमों, स्फुटनशालाओं में अंड शावक (ब्रूडस्टॉक) और डिंभकों का निरीक्षण आदि क्षेत्रों में इन तकनीकों का व्यापक उपयोग किया जाता है।

2. मछली और कवच मछली सेल लाइनों (कोशिका रेखा) का विकास

विश्व में विकसित होने वाले जल जीव कृषि उद्योग में मछली कोशिका रेखाओं का प्रमुख स्थान है। वाणिज्यिक प्रमुख जातियों में रोग कारक वाइरसों के पहचान और विलगन के एक उपाय के रूप में मछली सेल लाइनों के विकास की प्रेरणा बन गई। रोग पहचान के अतिरिक्त वाइरस मुक्त मछली स्टॉक के उत्पादन के लिए अत्यंत आवश्यक राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय संगरोध एवं प्रामाणीकरण कार्यक्रम में भी सेल लाइन प्रमुख है। कोशिकीय और शरीर क्रियात्मक प्रक्रियाओं के अध्ययन और प्रदूषकों की विषाक्तता के मूल्यांकन में इन विट्रो नमूनों की तरह कोशिकानुवंशिकी (cytogenetics) में भी मछली सेल लाइन का व्यापक प्रयोग होता है।



अधिकांश सुव्यवस्थित मछली कोशिका रेखाएं सालमोनिड्स, चैनल शिंगटी (कैट फिश) तथा कोमन कार्प जैसे शीत जल मछलियों से व्युत्पन्न की गई हैं। फिर भी जल जीव कृषि में उपयुक्त की जाने वाली स्थानीय जातियों से कोशिका संवर्धन करने के लिए विश्व भर में प्रयास किए गए थे और परिणाम स्वरूप नई नई कोशिका रेखाओं का विकास किया जा रहा है। हाल ही में विकसित कशिका रेखा लौच, मिल्क फिश, ईल, ज़ीब्रा मछली, स्नेक हेड्स, गोल्ड फिश, कैट फिश, समुद्री बैस और गूपरों से व्युत्पन्न की गई है।

भारत में मछली कोशिका रेखाओं के विकास पर बहुत कम प्रयास किया गया है इसका कारण शायद सुविधाओं और प्रशिक्षित कार्मिकों की कमी होगी, कोशिका संवर्धन रोग युक्त जाति या उस जाति की समानता वाली अन्य जातियों से व्युत्पन्न करने पर वाइरस विलगन अत्यंत संवेदनशील होने के कारण स्थानीय जातियों से व्युत्पन्न कोशिका रेखाओं को प्राथमिकता दी जानी चाहिए।

कवचप्राणी कोशिकाओं का पात्रे (इन विट्रो) संवर्धन

पालन किए गए कवचप्राणी जीवों में कई वाइरस रोगों की उपस्थिति की रिपोर्ट प्राप्त हुई है। वैज्ञानिकों द्वारा लंबे अरसे से विषाणु विज्ञान के अध्ययनों के लिए कवचप्राणी कोशिका रेखाओं की सफलतापूर्वक स्थापना की गई थी। लेकिन इन अध्ययनों के अधिकांश परिणाम निराशाजनक थे। दुनिया के विभिन्न भागों के कई वैज्ञानिकों ने पेनिआइड जाति की एक उपजाति के विभिन्न ऊतकों से प्राथमिक कोशिका संवर्धित करने का प्रयास किया लेकिन सफलतापूर्वक उप-संवर्धन से कोशिका रेखा में परिवर्तन नहीं किया जा सका। यह तो कोशिका रेखा की स्थापना का प्राथमिक कदम था और इन से विभिन्न ऊतकों की अतिजीवितता और प्रचुरता क्षमता से संबंधित अनुयोज्य कोशिका संवर्धन स्थितियों पर आवश्यक सूचनाएं प्राप्त होती है।

कोशिका रेखा संवर्धन सफल नहीं होने का एक मुख्य कारण यह होगा कि कवचप्राणी कोशिकाएं संवर्धन बर्तन में चिपकने में असमर्थ थी। इसका कारण ढूँढने के लिए आवश्यक अध्ययन

किया जाना अनिवार्य है। वियोजित कोशिकाएं ठोस पदार्थों में चिपकने में असमर्थ होने के कारण का स्पष्टीकरण मिलने के लिए कोशिका जीव वैज्ञानिकों / जीव रसायन वैज्ञानिकों द्वारा कवचप्राणी कोशिका झिल्ली के मिश्रण और विशेषताओं पर आधारभूत अध्ययन करना आवश्यक है। भविष्य के अध्ययनों में कोशिका चक्र विश्लेषण और कोशिका विभाजन में होने वाले आणविक रुकावटों को कैसे अतिक्रमण कर सकते हैं इस पर ध्यान दिया जाना पड़ेगा।

3. वाकसीनों (टीकाओं) का विकास

सालमोनिड मछली के विब्रियोसिस, एन्टेरिक रेड माउथ और फ्यूरेकुलोसिस जैसे रोगों के प्रति टीका का सफल विकास किया गया है, जो अब वाणिज्यिक रूप से उपलब्ध है। फिर भी मछलियों के कई रोगजनकों, विशेषतः विषाणु तथा परजीवों से व्युत्पन्न रोगजनकों के प्रति सुरक्षा के लिए प्रभावकारी टीकाओं का विकास अब तक नहीं किया गया है। वर्तमान में कई टीकाओं को विकसित करने के कार्यक्रम प्रगति पर है, उदाहरणार्थ पास्चरेलोसिस प्रोलिफरेटिव किडनी रोग, बैक्टीरियल किडनी रोग, रेइनबो ट्राउट फ्राइ सिन्ड्रोम, ऐरोमोनस हाइड्रोफिला आदि अब विकसित की जानेवाली टीकाओं का रेंच पूरी कोशिकाओं का नाश करनेवाले टीकाओं से पुनर्योगज (रीकोम्बिनेन्ट) और डी एन ए टीकाओं तक है।

रोगाणु (वाइरस), परजीव (पारसाइट) और फिनफिश के अंतराकोशिकीय जीवाणु से होने वाले रोगों के रोकथाम के लिए सस्ते और प्रभावकारी टीकाओं का विकास बहुत कठिन कार्य देखा गया। इसके फलस्वरूप उपर्युक्त प्रकार के रोगों के प्रति टीका लगाने के लिए कुछ वाणिज्यिकीय टीकाएं अब उपलब्ध हैं। मछली रोगों के रोकथाम के लिए उपयुक्त परंपरागत टीकाओं में मारे गए रोगजनकों (बैक्टीरिया में बाक्टेरिन्स) या रोगजनकों के सूक्ष्मीकृत रूप (जीवंत टीका) जोड़ा गया है। जाँच किए जाने वाले अन्य परीक्षणों में रोगजनकों (पुनर्योगन टीकाएं) से प्राप्त परिष्कृत या आनुवंशिक रूप से संशोधित ऐन्टीजन और डी एन ए टीका सम्मिलित है। इन में से डी एन ए टीकाओं को टीका

विकास में 'तीसरी क्रांति' मानी जाती है। डी एन ए टीकाओं में, पातोजन के प्रोटीन का एक जीन कोडिंग वैक्टीरियल प्लास्मिड (एक छोटा, वृत्ताकार का डी एन ए मोलिक्यूल जो वेक्टर के रूप में उपयुक्त किया जाता है) जिस में मछली कोशिका के लिए आवश्यक सभी मूलतत्व हैं, में संवेष्ट किया जाता है। जीवाणु संवर्धन में इन प्लास्मिडों को दोहराया जाता है और संशोधित डी एन ए को अंतरा पेशीय इंजेक्शन द्वारा जीवंत मछली में स्थानांतरित किया जाता है। मछली की कुछ कोशिकाएं डी एन ए को स्वीकार करके प्रोटीन प्रकट करती हैं। प्रतिरक्षा व्यवस्था प्रोटीन को एक बाहरी घटक के रूप में पहचान करती है और एन्टीजन के प्रति प्रतिक्रिया प्रकट करती है और यह प्रतिक्रिया मछली के रोग जनकों के संक्रमण से बचाती है। डी एन ए टीकाओं की विशेषता यह है कि तैयार करने में सरल है और अत्यंत शुद्धता से बड़े पैमाने में उत्पादन किया जा सकता है। इसके अतिरिक्त डी एन ए उच्च तापमान सह्यता के लिए अत्यंत स्थिरतायुक्त है, जिससे टीकाओं का संग्रहण, परिवहन और वितरण आसान होता है।

कई अनुसंधान गृहों द्वारा मछलियों में डी एन ए टीकाओं का परीक्षण किया गया और दिखाया गया कि रेइनबो ट्राउट के हीमटोपोइटिक नेक्रोसिस वाइरस, वाइरल हेमरेजिक सेप्टिसीमिया और बैक्टीरियल किडनी रोग और पूरे विश्व में साल्मानिड जल जीव कृषि के गंभीर रोग के प्रति प्रतिरोध हो सका है। फिर भी

इन टीकाओं को खेत में प्रयुक्त करने से पहले की समस्याओं को सुधार किया जाना अपेक्षित है। डी एन ए टीकाओं को सुधारने के उपायों पर अध्ययन करना भी आवश्यक है। टीका कंपनियों द्वारा टीकाओं का वाणिज्यीकरण करने से पहले कई सुरक्षा उपायों पर ध्यान दिया जाना आवश्यक है।

4. प्रोबियोटिक्स और जैव प्रत्युपाय

जैव प्रत्युपाय में जलजीव कृषि में विषैले प्रदूषकों के परिवर्तन/नाश के लिए सूक्ष्म जीवों का उपयोग सम्मिलित है। तालाब के नितलस्थ भाग में जमे हुए अपशिष्टों को कम करके यह भाग स्वच्छ और समृद्ध करने के लिए अनुयोज्य सूक्ष्म जीवों को निवेशित किया जाता है। जलजीव कृषि में वृद्धि और रोग प्रतिरोधता बढ़ाए जाने के लिए गट प्रोबियोटिक्स को व्यापक तौर पर उपयुक्त किया जाता है।

5. रोग प्रतिरोध क्षमता वाली मछली का उत्पादन

ट्रान्सजेनेसिस द्वारा तेज़ बढ़ने और रोग प्रतिरोधक्षमता वाली मछलियों के उत्पादन के लिए प्रयास किया जा रहा है। इस तरीके में रोग प्रतिरोधता के जीनों के पहचान, उनका विलगन और जीन रचना (कन्स्ट्रक्ट) की तैयारी सम्मिलित है। इस के बाद माइक्रोइन्जेक्शन द्वारा इसे मछली अंडों में स्थानांतरित किया जाता है और इसके बाद मछली के साथ इसके संयोजन और सफल अभिव्यक्ति की जांच की जाती है।



आण्विक जीवविज्ञान तकनीक द्वारा समुद्री खाद्य में खाद्य रोगजनक की खोज

राकेश कुमार

केंद्रीय मात्स्यिकी प्रौद्योगिकी संस्थान, कोचीन

उपभोक्ता की सुरक्षा को सुनिश्चित करने वाले रोगजनक एवं अन्य सूक्ष्मजीवी संदूषणों की तेज खोज करना संकटपूर्ण है। खाद्यजन्य जीवाणु की खोज के लिए परम्परागत पद्धतियाँ संवर्धन मीडिया में समय, उपभोग बढ़ती, उस के बाद वियोजन, जीवरासायनिक पहचान और कभी कभी सीरमविज्ञान पर निर्भर रहती है। प्रौद्योगिकी की उन्नति से खोज एवं तेज पहचान, ज्यादा सुविधाजनक, ज्यादा संवेदी और कम से कम परिकल्पना में परम्परागत विश्लेषण से ज्यादा सुस्पष्ट है। इन नयी पद्धतियों की तैयारी के लिए आम तौर पर प्रयुक्त अवास्तविक शब्द है कि डी एन ए पर- आधारित परीक्षण और विश्लेषण को तेज करने के लिए परम्परागत परीक्षण के शुद्धीकरण की कसौटी इस में शामिल है। इन कसौटियों में कुछेक को स्वचलन किया गया है ताकि हस्तन से उत्पन्न विकृति को कम करें। कुछ को छोड़कर, खाद्य में विशेष रोगजनक की खोज के लिए उपयोगित ज्यादातर सभी कसौटियों में विश्लेषण से पहले समृद्ध मीडिया में कुछ बढ़ती की आवश्यकता रखती है। वर्ष 1980 के दौरान मूल अनुसंधान में प्रमुख उन्नति प्रौद्योगिकी क्षेत्र में तेजी से जैव प्रौद्योगिकी के रूप में स्थानांतरित हुई है।

आण्विक जीव विज्ञान के मूल्यांकन दिखाते हैं कि कुछ एक खाद्य से अन्य में अच्छा कार्य करते। खाद्य संघटकों द्वारा व्यतिकरण के लिए यह ज्यादा विशेषता रखती है, इस में से कुछ विशेषकर तेज पद्धति में उपयोगित प्रौद्योगिकी के लिए असुविधा रखती है। उदाहरण के लिए, एक संघटक डी एन ए संकरण या पॉलीमेरीस को रोकता है, मगर प्रतिजन - प्रतिरक्षी अन्योन्यक्रिया पर कोई प्रभाव नहीं दिखाता और उसके विपरीत परिस्थिति भी उत्पन्न होती है क्योंकि पद्धति की कार्यक्षमता खाद्य आधारित हो सकती है, यह उपयुक्त होगा कि उस खाद्य प्रकार के विश्लेषण में विशेष कसौटी के प्रभाव को सुनिश्चित करने के लिए तुलनात्मक अध्ययन किया जाए।



डी एन ए आधारित कसौटी की विशेषता अल्प जाँच द्वारा अधिदेशित होती है, इसलिए सकारात्मक परिणाम दिखाते हैं, उदाहरण के लिए एक विष जीन की जाँच एवं प्रारंभिक विश्लेष, केवल सूचित करता है कि इन जीन अनुक्रम के जीवाणु के साथ उपस्थित होता और यह विषजन के लिए संभावित हो सकता है। मगर, यह सूचित नहीं करता कि जीन वास्तविक रूप में निश्चित होता और यह विष को तैयार करता। उसी तरह, *क्लॉस्टीरियम* और *स्टैफिलोकोकी* मादकता में डी एन ए जाँच आर कोशिका की उपस्थिति को ही पी सी आर खोजता। मगर निष्पादित विष की उपस्थिति की खोज में सीमित उपयोगित होता है। इस समय, ई. कोली 0157 : H 7 और *सालमोनेल्ला* के प्रत्येक परीक्षण के लिए करीब 30 कसौटियाँ हैं। उपयोगकर्ता को बड़ी मात्रा के विकल्प उलझते और जबरदस्ती करते, मगर, ज्यादा प्रमुखता यह है कि यह इन पद्धतियों के प्रभावी मूल्यांकन को सीमित करता है। परिणाम के रूप में, खाद्य परीक्षण में उपयोग के लिए केवल कुछ पद्धतियाँ आधिकारिक रूप में मान्य हैं।

रोगजनक की खोज के लिए परम्परागत सूक्ष्मजीवीय पद्धतियाँ बहुत समय लेने वाले और श्रमबद्ध हैं। इस पद्धति द्वारा रोगजनक की खोज के लिए 4-5 दिन लगाते हैं। निम्न कारणों से ऐसी परिस्थितियों के फलस्वरूप आगे की समस्याएं उत्पन्न होती हैं। *वी. क्लोरा* के बीच, केवल 01 और 0139 सीरम प्ररूप हैं जो उत्पन्न करते। सीरमप्ररूप के पर्यावरण वियुक्त के बीच, आविष जनिक वितति विद्यमान होते हैं।

वी. पैराहेमालीटीक्स में केवल 2% से कम पर्यावरणीय वितति विषजनक है। तापस्थिर सीधे हीमोलाइसिन (टी डी एच) या टी डी एच संबंधित हीमोलाइसिन (टी आर एच) की उत्पादन की उनकी क्षमता द्वारा इनका चरित्र-चित्रण होता है। रक्त एगार मीडियम के (वगटसुमा एगार) उपयोग से इसे खोजा जा सकता है, इस परीक्षण में अक्सर झूठे सकारात्मक प्रतिक्रिया ज्यादा देखे गये हैं। इस मीडियम की तैयारी के लिए स्वच्छ (24h से कम) मानव या खरगोश रक्त आवश्यक है, ज्यादातर

प्रयोगशालाओं में उन्हें प्राप्त करना मुश्किल है। टी आर एच उत्पादन के लिए कोई लक्षणप्ररूपी परीक्षण नहीं है। हालांकि वर्षों के दौरान, आण्विक जीवविज्ञान आधारित पद्धति रोगजनक खोज में आमूल परिवर्तन कर रही है। खाद्य में रोगजनक की खोज के लिए डी एन ए आधारित पद्धति विशेष है। खाद्य सुरक्षा आश्वासन में लोकप्रियता प्राप्त करने वाली आण्विक पद्धतियाँ हैं।

(क) डी एन ए जाँच संकरण पद्धति

पहला न्यूक्लिक अम्ल प्रवर्धन पर आधारित है और यह बहुत उच्च संवेदी है। मगर इस के लिए विशेष प्रयोगशाला व्यवस्था की आवश्यकता है और संसाधित खाद्य में मृत जीवाणु का भी खोज किया जा सकता है। दूसरी ओर, डी एन ए जाँच संकरण, में कॉलोनी संकरण करने पर विस्तृत उपकरण की आवश्यकता नहीं है, मात्र जीवित जीवाणु का खोज करता और मात्रिक आँकड़ा देता। इस प्रपत्र का उद्देश्य यह है कि समुद्री खाद्य सुरक्षा आश्वासन में पी सी आर और डी एन ए जाँच संकरण के अनुप्रयोग को स्पष्ट रूप में समझना। डी एन ए जाँच संकरण आधारित सिद्धांत है कि (क) डी एन ए दुगुण लड़ आण्विक है (ख) ताप या रासायनिक उपचार द्वारा डी एन ए के दो लड़ों को अलग किया जा सकता है (ग) दो अलग किये लड़ों को जोड़ा जा सकता है (घ) विभिन्न क्षेत्रों के डी एन ए लड़ों को संकरण किया जा सकता है, मगर इन दोनों के बीच (A-T ; G-C) के आधार का पूरक उपलब्ध होना चाहिए। इस सिद्धांत को आधार पर विभिन्न सूक्ष्मजीवों के लिए विशेष जाँच करना संभव है। जाँच न्यूक्लीओटीड्स के अल्प कसना है जो कि लक्ष्य अनुक्रम के लिए अनुक्रम पूरक है। जाँच संकरण की खोज के लिए, रेडिओअक्टिव आण्विक (P32), एन्जाइम, लीगन्डोस (उदा. बाईओटीन) या प्रतिजनिक सबस्ट्रेट (उदा. डीगोक्सीजेनीन) से जाँच को अंकित किया जाना चाहिए।

लक्ष्य के रूप में चुने जीन प्रत्येक जीवाणु में विशेष होते हैं। रोगजनक जीवों के मामले में, यह जीन विषाक्तता जैसे तथ्य जो रोगजनक जीवों को तैयार करने का कूट बनाते। *वी. कोलीरी*



विष को उत्पन्न करते, हैजा विष etx जेन द्वारा कूट किये जाते हैं। *वि. पैराहेमालीटीक्स* में विषाक्तता तथ्य tdh और trh द्वारा कूट किये जाते हैं। *एल. मोनोसिटोजेन्स* में विषाक्तता तथ्य iap और hly जीन द्वारा कूट किये जाते हैं। सालमोनिल्ला में, inv जैसे विषाक्तता सहायक जीन है। एन्टेरोहेमरजीक ई. कोली में six, eae जैसे विषाक्तता जीन होते हैं। ऐसे विशेष जाँचों के उपयोग से रोगजनक जीवाणु की विशेष खोज संभाव है। अचुनिदा एगार पर प्रतिरोधक और पट्टित में खाद्य नमूने सजातीय हैं। 350°C के पास 18h के लिए पट्टिका उद्भवित किया गया। पट्टिका पर दिखे कॉलोनीस को उपयुक्त फिल्टर के लिए स्थानांतरित किया गया है। लाइसींग घोल में जीवाणु कोशिकाएँ निम्मजन द्वारा लाइसीड होते हैं और डी एन ए मुक्त विकृत होते हैं और फिल्टर को जुड़ जाते हैं। अब फिल्टर पूर्वसंकरित घोल में उद्भवित होता है और उसके बाद जाँच आगे बढ़ती है। जाँच के लिए उपयुक्त तापमान के पास संकरण करना चाहिए। संकरण के बाद, एक विशेष तापमान के पास फिल्टर को धोना चाहिए। अंकन के प्रकार के आधार पर डी एन ए के लिए प्रोब संकरण फिल्टर पर खोजा जाता है। अगर रेडिओएक्टिव प्रोब उपयोगित होने पर खोज आटोरेडिओग्राफि द्वारा खोजी जाती है, जहाँ फिल्टर में X-ray फिल्म के साथ उद्भवित होते हैं, संकरित प्रोब के कॉलोनी के धब्बों को देखा जा सकता है। फिर भी, इस समय कई नान रेडियोएक्टिव प्रोब लेबल उपलब्ध हैं। यह ज्यादा सुविधाजनक एन्जाइम लेबल है जिसकी खोज उपयुक्त क्रोमोजेनिक सबस्ट्रेट से किया जा सकता है।

बहुत छोटी मात्रा में उपस्थित रोगजनक की खोज के लिए, खाद्य नमूनों के रोपण से पहले समृद्ध किया जाना चाहिए। विश्लेषण के रिकार्ड के रूप में संकरण के बाद के फिल्टर को परिरक्षित किया जा सकता है। प्रोब संकरण विश्लेषण के लिए कोई साबित उपकरणों की आवश्यकता नहीं है। इसलिए इस तकनीक को समुद्री खाद्य गुणता नियंत्रण प्रयोगशाला में बहुत सुविधाजनक रूप में अपनाया जा सकता है। कुछ स्थितियों में, *विब्रियो पारहेमालीटीक्स* जैसे रोगजनक वितरित के जीवों की खोज के लिए डी एन ए प्रोब आधारित पद्धतियाँ ज़रूरी हैं। यह

जीव सामान्यतः विश्वभर में तटीय एवं नदीमुख क्षेत्र में पाये जाते हैं। 98% के पर्यावरणीय वितरित रोगजनक नहीं है। इसलिए संकट के निर्धारण के लिए परम्परागत सूक्ष्मजीव विज्ञान द्वारा केवल इन जीवों की खोज करना पर्याप्त नहीं है। डी एन ए प्रोब संकरण पद्धतियाँ गुणता नियंत्रण प्रयोगशालाओं में व्यापक स्वीकार्यता को प्राप्त कर रहे हैं और यू एस एफ डी ए जीवाणु विज्ञान विश्लेषणात्मक नियमावली में सूचित किया गया है कि यह पद्धति नियामक एजेन्सीस द्वारा स्वीकार्य है। जीवाणु के मामले में *सालमोनिल्ला* एवं *लिस्टीया मोनोसिटोजेन्स*, डी एन ए प्रोब संकरण पद्धतियाँ द्वारा संचालित बहु प्रयोगशाला में मूल्यांकित किये गये और आधिकारिक पद्धतियों के रूप में स्वीकार्य है।

(ख) पॉलीमेरेस चैन रियाक्शन (पी सी आर)

पी सी आर एक न्यूक्लीक अम्ल प्रवर्धन तकनीक है जहाँ पर एक विशेष भाग का न्यूक्लीक अम्ल से इन विट्रो में लक्ष्य जीव प्रवर्धित है। इस विशेष प्रवर्धन की प्राप्ति ओलिगोन्यूक्लियोटाइड प्रामर के उपयोग से किया जा सकता है जो प्रवर्धन के क्षेत्रीय फ्लन्कींग भाग के लिए विशेष है। प्रवर्धन के लिए एन्जाइम डी एन ए पॉलिमेरेस और डी एन ए के निर्माण भाग, डीओक्सरी-कार्बानुक्लीओटाइड (dATP, dGTP, dCTP) आवश्यक है। यह क्रिया कई साइकलों में होती है, प्रत्येक साइकल में तीन कदम शामिल हैं। (क) डी एन ए की विकृति: इस कदम में लक्ष्य डी एन ए लड़ी करीब 950C के पास, ताप द्वारा अलग किया जाता है (ख) प्राइमर अनीलिंग: यह विशेषकर लक्ष्य क्षेत्र के लिए प्राइमर बाइन्ड का कदम है। इस कदम को 55-650C के पास किया गया है। (ग) प्राइमर विस्तार: इस कदम में साँचा लड़ी पर डी एन ए पॉलिमेरेस द्वारा डी एन ए लड़ी में संश्लेषण किया जा सकता है। सामान्यतः करीब 30 साइकल में 950C के पास डी एन ए की विकृति होती, क्रिया में उपयोगित डी एन ए पॉलिमेरेस तापस्थिर होनी चाहिए। थर्मोफिलिक जीवाणु थर्मोमस एक्वन्टीक से अन्वेषण किये थर्मोस्परि डी एन ए पॉलिमेरेस निदानसूचक में पी सी आर के तेज अनुप्रयोग के लिए आगे आता है।



ओलिगोन्यूक्लीोटीड द्वारा अभिकल्पित प्राइमर एक जीव के लिए विशेष है, किसी वंछित जीव से विशेष डी एन ए के प्रवर्धन के लिए पी सी आर अभिकल्प करना संभव है। आर एन ए वाइरस के मामले में, एन्जाइम रिर्वस ट्रान्सक्रिप्टेस के उपयोग से पहले आर एन ए को डी एन ए में नक़ल करना संभव है। आर एन ए की लक्ष्य खोज के लिए पी सी आर उपयोगिता को आर टी-पी सी आर के रूप में निर्दिष्ट किया जाता है।

समुद्री खाद्य में रोगजनक जीवाणु की खोज के लिए पी सी आर

ज्यादातर मामलों में ओलिगोन्यूक्लीओटीड प्राइमर विशेष प्रवर्धित विषाक्तता सहायक जीन को अभिकल्पित करते हैं। उदाहरण के लिए विषजनक वी. कोलेरा खोज हैजा विष के उत्पादन *ctx* जीन कूट पी सी आर प्रवर्धन के उपयोग से किया जा सकता है। रोगजनक वी. पैराहेमालोटीक्स के साथ संदूषित समुद्री खाद्य *tdh* और *trh* जीन पी सी आर प्रवर्धन उपयोग द्वारा खोजा जा सकता है जो कि विषाक्तता सहायक हीमोलाइसिन का कूट बनाता रोगजनक *एशरिकिआ कोली* के मामले में, प्रवर्धन के लिए संभावित लक्ष्यों में विष जैसे- झींगा उत्पादन के *stx* जीन कूटीकरण, *eae* जीन कूट इन्टीमीन, हीट-लेबिल (एल टी) और ताप स्थिर विष (एस टी) आदि शामिल हैं। लिस्टीया मोनोसाइटोजन्स के मामले में, कई लक्ष्य जीन रिपोर्ट किये गये हैं। इन में धावा सहायक प्रोटीन *iap* के उत्पादन के जीन कूट लेखन, लिस्टीऑलसीन *hlyA* और नियामक प्रोटीन *prfA* शामिल हैं।

पी सी आर डी एन ए प्रवर्धन तकनीक है और अगर मृत्यु जीवाणु होने पर भी पी सी आर में दिखाता है। समुद्री खाद्य सुरक्षा के निर्धारण के लिए, यह देखना ज़रूरी है कि केवल जीवनक्षम रोगजनक को ही खोजने को सुनिश्चित करके ही इसे प्राप्त किया जा सकता है। अगर उपयुक्त ब्रोथ में खाद्य नमूनों को समृद्ध करने के बाद पी सी आर करने से इसे प्राप्त किया जा सकता है।

संदूषण के स्रोत की खोज के लिए पी सी आर आधारित तकनीक

जीवरासायनिक परीक्षण द्वारा परम्परागत जीवाणु पहचान पद्धति से उनकी पहचान जाति स्तर तक की जा सकती है। मगर वित्तियों के बीच भेद नहीं किया जाता है। सीरमप्ररूप और विभोजी प्रकार जैसे तकनीक भी कुछ भेद मूलक शक्ति रखती है। पॉलिमरफीक डी एन ए (आर ए पी डी) रंडाम प्रवर्धन जैसे पी सी आर आधारित तकनीक जीव के डी एन ए अंगुली छाप को उत्पन्न करते हैं। आर ए पी डी प्रतिमान वित्तियों में समानता एवं विभिन्नता के अध्ययन में सहायक है। उदाहरण के लिए, यह तकनीक संसाधन पर्यावरण में कच्ची मत्स्य, धूमित मत्स्य से वियोजित लिस्टीया मोनोसाइटोजन्स के वित्तियों को भेद करने के लिए उपयोग किया जाता है। इस प्रकार के अध्ययन उत्पाद जैसे शीतित धूमित मत्स्य में उपलब्ध वित्तियों के स्रोत को समझने में, सहायक हो सकते हैं। इस तकनीक में एकल 10 मेर ओलीगोन्यूक्लीओटीड प्राइमर का उपयोग अल्प अनीलिंग तापमान (उद. 370C) के पास प्रवर्धन करने के लिए उपयोग किया जाता है। प्राइमर को जेनोम के किसी विशेष क्षेत्र के साथ लक्षित नहीं किया जा सकता है और इसलिए, उस क्रिया को उन जीवों के संबंध में किया जा सकता जिन का जेनोम अनुकूल उपलब्ध नहीं है। हम हमारे प्रयोगशाला में समुद्रीखाद्य में विभ्रियों क्लोस्ट्रीडियम, डब्ल्यू एस एस वी, वै एच वी जाति के रोगजनक के संदूषण के स्रोत के अध्ययन के लिए पी सी आर का उपयोग किया जा सकता है।

निष्कर्ष

प्रायः तेज पद्धतियों का ज्यादा उपयोग होने के कारण, इसके फायदे और उसी समय, उसकी सीमाएं भी प्रकट होती हैं। इस भाग में केवल कुछ तेज पद्धति फारमैट और खाद्य विश्लेषण में इन कसौटियों को उपयोग करने पर उत्पन्न होने वाले चुनिंदा समस्याओं के संबंध में वर्णित किया गया है। फिर भी, इन परीक्षणों के जटिल अभिकल्प एवं फारमैट के कारण, खाद्य परीक्षण की कठिनायियाँ जुड़ जाती हैं, प्रयोक्ता तेज पद्धतियों के

चुनाव के समय सावधानी लें और इन परीक्षणों का अच्छी तरह मूल्यांकन करें, भिन्न परीक्षण स्थितियाँ या खाद्य के कुछ प्रकारों के लिए एक से दूसरा ज्यादा उपयुक्त हो सकती है। अंतः प्रौद्योगिकी तेजी से प्रगतिशील है और अगली पीढ़ी की कसौटी जैसे जीवसंवेदक, एवं डी एन ए चीप का विकास पहले ही विकसित किया गया जो कि खाद्य में बहु रोगजनक के खोज में प्रायः सही-समय एवं आन-लेन मानीटरिंग करने की संभावना रखता है। जलकृषि के उत्पादों की सुरक्षा चिंताजनक है और

रोगजनक सूक्ष्मजीव के उत्पादों के खोजी की सुरक्षा की आवश्यकता का मूल्यांकन किया जाना चाहिए। खोज के परम्परागत पद्धतियाँ ज्यादा समय लेते हैं और रोगजनक एवं अरोगजनक वितति के बीच विभेद नहीं करते हैं। आण्विक तकनीक जैसे पी सी आर और कालोनी संकरण तेज रोगजनक खोज एवं विषाक्तता वितति के विशेष खोज में उपयोगी है। यह तेज, विशेष एवं संवेदी

होने के कारण, समुद्री खाद्य गुणता नियंत्रण प्रयोगशाला में अत्यधिक प्रयोग हो रहा है।



श्वेत चित्ति संलक्षण विषाणु (वाइट स्पोट सिन्ड्रोम वाइरस) के लिए सी एम एफ आर आइ का पी सी आर किट

पी.सी. तोमस एवं एम.पी. पोल्टन

केंद्रीय समुद्री मात्स्यिकी अनुसंधान संस्थान, कोचीन

आमुख

श्वेत चित्ति संलक्षण विषाणु याने कि वाइट स्पोट सिन्ड्रोम वाइरस से होने वाला श्वेत चित्ति रोग आज चिंगट कृषि उद्योग के लिए बड़ी आशंका बन गई है। इस रोग की रोकथाम के लिए कोई औषध नहीं होने की दृष्टि में, जनकों से शिशुओं पर सीधा संक्रमण रोकने के लिए एक उपाय है पालन के लिए रोगमुक्त डिम्बकों का संभरण। इस प्रकार के चयन के लिए सस्ता, सरल, सूक्ष्मग्राही और शीघ्र पहचान प्रणालियाँ अनिवार्य है।

हाल तक (रोग) निदानसूचक प्रविधियों का रूपायन अधिकतम रोगग्रस्त प्राणियों के रोग के पूर्ववृत्त, रोग लक्षण और ऊतकीय जाँच पर किया करते थे। प्रायोगिक दृष्टि से रोगों के रोकथाम के लिए इन प्रविधियों से कम फायदा होती है और इनके सूक्ष्मग्राह्यता भी सीमित है। प्राणियों में विषाणुओं (वाइरस) की उपस्थिति जानने के लिए डी.एन.ए. खोज (DNA probe) और पी.सी.आर. प्रवर्धन (PCR amplification) जैसे जैवप्रौद्योगिकी प्रविधियों के प्रयोग आजकल किये जा रहे हैं। विविध आण्विक निदानसूचक (molecular diagnostic) प्रविधियों में पी सी आर आधारित पहचान अति सूक्ष्मग्राही एवं रोगों के आगे अग्रिम उपाय लेने के लिए सहायक होता है।

द्वैत पी सी आर प्रणाली - विज्ञान (ड्यूप्लेक्स पी सी आर मेथोडोलजी)

सी एम एफ आर आइ में श्वेत चित्ति सिन्ड्रोम विषाणु (WSSV) की पहचान के लिए एक द्वैत विश्लेषण आधारित पी सी आर किट विकसित किया गया है। परंपरागत बहुक्रम पी सी आर की अपेक्षा यह किट कम लागत का एवं शीघ्र में परिणामदेनेवाला होता है। इसमें द्वैत किट के प्रयोग करके विषाणु जीनोम के विभिन्न खंडों का एक साथ पी सी आर

स्क्रीनिंग हो जाता है। इस से समय एवं रासायनों का कम उपयोग होता है। जबकि नेस्टेड पी सी आर में दो क्रमिक पी सी आर परीक्षण होते हैं। प्रथम पी सी आर में विचाराधीन जीन के फ्लॉकिंग (flanking) के लिए एक जोड़ी प्राइमरों का उपयोग होता है और दूसरे पी सी आर में जीन के प्रथम पी सी आर द्वारा प्रवर्धित एक अंतर खंड के साथ सदृश्य रखनेवाले और एक जोड़ी प्राइमरों के प्रयोग होते हैं। पहली प्रतिक्रिया में उत्पादित टुकड़े को दूसरे पी सी आर के लिए टेम्पलेट के रूप में उपयोग करता है।

परंपरागत किटों की अपेक्षा ड्यूप्लेक्स पी सी आर किट के कई लाभ होते हैं।

ड्यूप्लेक्स पी सी आर के लाभ

□ द्रुत गति : बहुक्रम पी सी आर में दो चरणों में होनेवाली कार्यविधि ड्यूप्लेक्स पी सी आर में एक चरण में होती है और तेज़ स्क्रीनिंग हो जाता है।

□ लागत प्रभावी : प्राइमरों को छोड़कर ड्यूप्लेक्स पी सी आर में उपयोगित आमापक मात्रा (assay volumes) और संघटक नेस्टेड पी सी आर के प्रथम चरण से समतुल्य है। यह कम लागत की होती है।

□ विश्वसनीयता : विषाणु जिनोम के विभिन्न भागों के एक

साथ प्रवर्धन और जाँच के कारण यह विश्वसनीय होता है।

प्रौद्योगिकी की स्वीकृति

- महा निदेशक, भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली द्वारा इस किट का विमोचन किया गया।

- इस किट के प्रयोग करके उपभोक्ताओं के बीच श्वेत चित्ति संलक्षण विषाणु (WSSV) के सफल विलगन का निदर्शन किया।

- देश के विभिन्न भागों के तकनीकी और वैज्ञानिक अधिकारियों को इस किट के उपयोग के बारे में प्रशिक्षण दिया।

- सी एम एफ आर आइ द्वारा हैचरियों और चिंगट कृषकों को निदान सूचक सेवाएं प्रदान की जा रही है।

आर्थिकी

भारत में अब प्रचलित पी सी आर किट से 30-50% तक के कम मूल्य में यह किट बेच दिया जा सकता है।

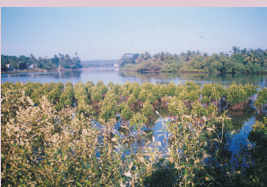
उपभोक्ता एवं लाभ भोगी :

जल उपचारालय (aquaculture) द्वारा चिंगट कृषकों और हैचरियों को कृषि/पालन के लिए विषाणु मुक्त चिंगट डिम्बकों के चयन करने के लिए प्रतियोगी दरों में स्क्रीनिंग सेवाएं प्रदान की जा सकती है।



भाग III

जीविकार्जन केलिए तटीय जलकृषि



सुन्दरबन्स की मात्स्यिकी-समस्याएं और प्रत्याशाएं

गणेश चन्द्रा और आर एल सागर

कृषि विज्ञान केंद्र, केंद्रीय अंतर्स्थलीय प्रग्रहण मात्स्यिकी
अनुसंधान संस्थान, काकद्वीप, पश्चिम बंगाल

सारांश

भूमि का सब से बड़ा डेल्टा (सुन्दरवन) अपनी समुद्री व ज्वारनदमुखी मछली संपदाओं के लिए मशहूर है। यहाँ के जीवन यापन में प्रग्रहण मात्स्यिकी का विशेष महत्व है। सुन्दरवनों में 172 मछली जातियाँ, 20 झींगा जातियाँ और 44 केकड़ा जातियाँ पाई जाती हैं। केकड़ा जातियों में दो खाद्ययोग्य हैं। लेकिन सुन्दरवनों की मात्स्यिकी आजकल जीववैविध्यता, टिकाऊपन और जीविकार्जन से जुड़ी हुई कुछ समस्याएं झेल रही है। ऐसी समस्याएँ होते हुए भी अंतर्स्थलीय प्रग्रहण मात्स्यिकी और खारापानी जलकृषि इस मेखला की अच्छी प्रत्याशाएँ हैं। कोल्ड स्टोरेजों, पाकेज/केंद्रों से सज्ज मात्स्यिकी बंदरगाहों और एक अंतर्राष्ट्रीय मछली संसाधन जोन की स्थापना से सुन्दरवनों की मात्स्यिकी अधिकाधिक प्रगति पा जायेगी।

भूमिका

सुन्दरवन भूमंडल का सब से बड़ा संकरा डेल्टा है जो कि गंगा-ब्रह्मपुत्रा नदियों के ज्वारनद दशाओं से विकसित हुआ है। भारत में सुन्दरवन उत्तर पूर्वी तट के 9630 वर्ग कि मी क्षेत्र उत्तर अक्षांश 21°32'-22°40' पूर्व रेखांश 88°22'-89°0' में फैला हुआ है। पश्चिम में हूगली नदी, उत्तर में रायमंगल नदी, दक्षिण में बंगाल की खाड़ी, और उत्तर में डाम्पियर होड्जस रेखा इसकी सीमाएँ हैं। कई आकार-रूप के 56 द्वीपों से यह बनाया गया है और हर एक द्वीप ज्वारीय नालियों, नलियों और संकरी खाडियों से अलगाया गया है। इन में कुछ मीठा जल प्रवाही है तो कुछ बाढ़ व निम्न ज्वार की वाहिका होते हुए ऊपर से नीचे और नीचे से ऊपर की ओर बहती रहती है।

सुन्दरवनों की प्रकृति की विशेषता वैविध्यता में एकता है। तटीय क्षेत्र एक सौम्य ढाल



है जो माध्य समुद्र तल से 7-8 मी से ऊपर है। ओयाग (1939) ने यहाँ तीन मौसमी स्थितियाँ रिपोर्ट की है ये दक्षिण पश्चिम मानसून के दौरान के पहले में होनेवाला निम्नज्वार, नवंबर से फरवरी के दौरान के कम निम्नज्वार और मई से जून तक के दौरान के उच्च ज्वार के मौसम हैं।

सुंदरवनों की मात्स्यिकी :

सुंदरवन पूर्वीतटों के जलीय संपदाओं का पालन गेह माना गया है अतः उत्तर भारत की तटीय मात्स्यिकी सुंदरवनों पर निर्भर होके पलती है। झिंगारम (1977) ने सुंदरवनों में 172 मछली जातियाँ को उपलब्धि रिपोर्ट की है। उनके अनुसार हुगली-माल्टा ज्वारनद मुख में लवणता की बढ़ती के साथ जीव वैविध्यता भी बढ़ जाती है। दलदली भूमियों में 400 से ऊपर जीवजात वास करते हैं। मछलियों के अलावा 20 झींगा जातियाँ और 44 केकडा जातियाँ जिस में 2 खाद्ययोग्य है, यहाँ पायी जाती है। यह कई प्रकार के वाणिज्य प्रधान मछलियों का पालन गेह है, भारत और आस पास के देश इन संपदाओं का उपयोग करते हैं। डेल्टा का पर्यावरण याने कि तापमान, लवणीयता और अन्य भौतिक-रासायनिक प्राचल जीवजालों के वास के लिए अनुकूल है। सामान्यतः इस ज्वारनदमुख का पानी पौष्टिक और जैविक अपरदों से संपुष्ट है। वाणिज्य प्रधान कई प्रकार की मछलियाँ यह बढ़ती है, और उत्तर बंगाल खाड़ी की मछलियों को बढ़ाती है। मीठा जल में बसने वाली कई मछलियाँ व झींगे अंडजनन के समय यहाँ पहुँचती हैं। अतः कई समुद्री और मीठाजल मछलियों के जीवन चक्र की पूर्ति के लिए यहाँ के पर्यावरण आवश्यक सहारा प्रदान करता है।

यहाँ उपलब्ध वाणिज्य प्रमुख समुद्री और ज्वारनद मुखी मछलियाँ निम्नलिखित हैं।

पख मछली जातियाँ

लाटस कालकारिफर, हिल्शा इलिशा, लिज़ा पारसिया, लिज़ा टीडे, हार्पोडॉन हेहेरस, प्लोटोसस कानिअस, पाम्पस अर्जेन्टीयस, रिनोबाटस, पानगोसिअस पानगोसिअस, पोलिडाक्टिलेस, चानोस

चानोस, इलितिरोनीमा टेट्राडाक्टैलम पोलिनीमस इंडिकम, पोलिनीमस पाराडेस्यस और पामा पामा।

कवच मछली जातियाँ

पेनिअस मोनोडॉन, पेनिअस पेनिकुल्लाटस और मेटापेनिअस मोनोसिरोस।

परुषकवची जातियाँ (क्रस्टेशियन्स)

खाद्ययोग्य केकडे मूलतः सिल्ला सेरेटा और नेविप्टीरस पेलाजियन्स। सुंदरवनों की आबादी का मुख्य जीविकार्जन मार्ग मत्स्यिकी है। मोनडॉन झींगों का बीज संग्रहण एक मुख्य धंधा है। मत्स्यन के लिए यंत्रिकृत और अयंत्रिकृत यानों का उपयोग होता है। यंत्रिकृत यानों में ट्रालर, गिल नेट्टर, पर्स सीनर आदि और अयंत्रिकृत यानों में खात नौका (डोंगी), कट्टमरम, लकड़ी से बनाए बोट आदि का इस्तेमाल होता है। मयस्यन गिअरों में ट्रॉल नेट, पर्स सीन, ड्रिफ्ट/गिल नेट, बोट सीन, बाग नेट, काँटा डोर, शोर सीन, ट्रापस, हूक नेट आदि प्रमुख हैं।

हाल में दक्षिण 24 पारगनास जिले में निम्नलिखित 14 मछली अवतरण केंद्र हैं रेडिडिधि, काकद्वीप स्टीमर घट, काकद्वीप अक्षय नगर, काकद्वीप 8 नंबर लोट, सुल्तानपुर मात्स्यिकी बंदरगाह, डयमन्ड हार्बर, नमखाना, फेसरगंज मत्स्यन बंदरगाह, गंगासागर, बेगुआखाली, मायागोलिनी घाट पूरे वर्ष में और कालिस्थान, फरसेरगंज बल्यिश और गंगासागर वेस्ट मौसमी मत्स्यन के लिए खुले रहते हैं।

समस्याएं

सुंदरवनों की समुद्री और ज्वारनद मुखी मात्स्यिकी की समस्याओं को दो विभागों में बाँटा जा सकता है। पहली है जैववैविध्यता और दूसरा टिकाऊपन और जीविकार्जन।

जैववैविध्यता

पुलि झींगों की कमी

पुलि झींगों का विवेकहीन संग्रहण इस कमी का कारण है। अतः बढ़ती की सारी दशाओं में विविध प्रकार के जालों से



इसका संग्रहण निम्नप्रकार से होता है : पश्च डिम्बकीय अवस्था में ज्वारनदमुखों से पुष्प व ड्राग जाल व मीन जाल से; तरुणों और पूर्व वयस्कों को समुद्री पानी से बड़े बाग जालों से; पूर्व वयस्कों और वयस्कों को ट्रामल जाल से (महापत्रा आदि 1999)

विवेकहीन बीज संग्रहण

पेनिअस मोनोडॉन झींगा बीजों का विवेक हीन संग्रहण होने पर कम माँग की झींगा व मछली बीजों का नाश होता है। यह नाश 90-95% है जो अत्यंत खतरनाक है। इस परिस्थितिक तंत्र में कई प्रकार की मछलियाँ पाई जाती है। इनके नाश के सिवा मोनोडॉन झींगों का हास भी हो सकता है इसलिए बीज संग्रहण और मोनोडॉन झींगा उपलब्धि के बीच का तुलनात्मक अध्ययन आवश्यक है।

टिकाऊपन और जीविकार्जन

संग्रहणोत्तर और अन्य अवसंरचनात्मक सुविधाओं का अभाव

पकड़ी गई मछली उसी क्षण से खराब होने लगती है। मछलियों का भंडारण, परिरक्षण और समय पर परिवहन अत्यंत आवश्यक है (यादव 2003) इन सुविधाओं के अभाव में विशेषकर मानसून के दौरान पकड़ी जानेवाली मछलियों के 20-30% का नाश होता है। इसलिए इस क्षेत्र के विकास के लिए संग्रहणोत्तर अवसंरचनाएँ जैसे कोल्ड स्टोरेज, बर्फ संयंत्रों; परिवहन सुविधाएँ जैसे रोड व वाहन और विपणन केंद्रों का विकास व पहचान आवश्यक है।

प्राकृतिक विपत्तियाँ

सुन्दरवनों में चक्रवात और निम्न वात से होनेवाली प्राकृतिक विपत्तियाँ सामान्य है जिन से मछुआरों की मृत्यु अकसर होती हैं। बंदरगाहों के अभाव से और जंबुद्वीप में मछुआ विराम पर रोध लगाने से महाद्वीपीय और द्वीपीय क्षेत्रों में मछुआरों को किसी प्रकार का सहारा न रह गया है। मौसमी पूर्वानुमान में हुई देरी से पिछले वर्ष में कई दुर्घटनाएँ भी हुईं। इसके सिवा इंडो बंगलादेश सीमा होने के नाते वहाँ मत्स्यन करनेवाले मछुआरों को बंगलादेश सरकार बंदी बनाना भी चिंता का विषय बन गया

है। पकड़ और आय कम हो जा रहा है; यहाँ के सीमांत मछुआरों के उन्नयन के लिए नए अवसर प्रदान किये जाने हैं।

प्रत्याशाएं

सुन्दरवनों की मात्स्यिकी की विशेषता समुद्री व अंतर्स्थलीय मात्स्यिकी की संयोजित सान्निध्य है। दोनों प्रणालियों के उचित संपर्क से यहाँ की मात्स्यिकी का स्वरूप ही बदला जा सकता है। ज्वारीय और भेरी प्रदेशों में खारापानी जल कृषि रीतियों के प्रयोग किए जाने हैं। असल में भारत का सब से बड़ा मत्स्य उत्पादन राज्य पश्चिम बंगाल है जहाँ से वर्ष 2002-03 में 11.20 लाख मे. टन मछली के निर्यात से 533.134 करोड रुपयों का विदेशी मुद्रा प्राप्त हुआ। इस तटीय भूप्रदेश में झींगा आधारित बहुपालन खेतियाँ की जा सकती है। इसके लिए अन्तर्स्थलीय, खारापानी और समुद्री पालन के विशेषज्ञों का सक्रिय भागीदारी और सहयोग आवश्यक है। बड़ा वरदान है कि सुन्दरवन कोलकत्ता महानगर के आस पास स्थित है। आजकल कोलकत्ता और काकद्वीप के बीच संसूचनाएं आसान हो गई है जिस से बिक्री में मध्यवर्तियों का चूषण रोका जा सकता है।

आधुनिक सुविधाओं वाले 6 मात्स्यिकी बंदरगाहों का निर्माण फ्रेज़रगंज, शंकरपुर, डायमंड हार्बर, काकद्वीप, सागर और पत्तराप्रतिमा में हो रहा है। इन में पहले तीनों का निर्माण पूरा हुआ है बाकी तीनों का 2005-2006 में पूरा होना, प्रत्याशित है। यह और हार्बर के निर्माण पूरा हो जाने पर 75000 मछुओं को रोजगार मिल जाने की प्रत्याशा है। निर्यात उद्योग का उन्नयन भी प्रत्याशित है। (अज्ञात 2003)

कोलकत्ता महानगर के बाहर चकबेरिया में एक नई अन्तर्राष्ट्रीय मछली संसाधन मेखला का निर्माण हो रहा है। दक्षिण एशिया में यह अपने आप में पहला होगा। 14 एकड़ भूमि में 20 करोड रुपयों की खर्च से निर्मित होनेवाला इस संसाधन मेखला में 10 निजी उद्यम 2004 में उद्योग शुरू करना प्रत्याशित है (अज्ञात 2003)



निर्णय

इन अवसंरचनात्मक सुविधाओं के विकास होने पर यहाँ की मात्स्यिकी का भविष्य उज्ज्वल होना प्रत्याशित हैं। अधिक आय और निर्यात से मुद्रा कमाना भी लक्षित है। दसवीं योजना में

समुद्री और अन्तर्स्थलीय सेक्टरों में यथाक्रम 2.5% और 8% की बढ़ती दर प्रस्तावित है। इसके लिए राज्य मात्स्यिकी विभाग अनुसंधान संस्थाओं और अन्य सरकारेतर संस्थाओं को मिलके सक्रिय काम किए जाने हैं।



तटवर्ती जलकृषि विकास में एम पी ई डी ए की भूमिका

श्री बी विष्णुभट्ट, श्री पी एन विनोद,

श्री एम विश्वकुमार,

समुद्री उत्पाद निर्यात विकास प्राधिकरण, कोचीन

देश से किए जाने वाले समुद्री उत्पादों के निर्यात में खारा पानी जलकृषि का महत्वपूर्ण योगदान है। श्रिम्प हमारे समुद्री खाद्य निर्यात उद्योग का मुख्य आधार है तथा खारा पानी जलकृषि, श्रिम्प उत्पादन बढ़ाने के अपने प्रभाव पर ज्यादा ध्यान केन्द्रित कर रहा है। देश का खारा पानी क्षेत्र लगभग 1.20 दशलक्ष हेक्टर है। इसमें से, अब तक केवल 13% का ही उपयोग हुआ है, जो आगे के विकास की गुंजाइश को सुदृढ़ बनाता है। 1,52,080 हेक्टर क्षेत्र से, कल्वर्ड श्रिम्प का मौजूदा उत्पादन 1,15,320 मे. टन है। देश से स्कैपी सहित किए जाने वाले श्रिम्प निर्यात में कल्वर्ड श्रिम्प का योगदान मात्रा में करीब 60% एवं मूल्य में 82% से अधिक है।

भारत में कृषि की जानेवाली प्रमुख किस्म टाइगर श्रिम्प है, इसके पश्चात् व्हाइट श्रिम्प आता है। श्रिम्प कृषि के लिए आवश्यक प्रमुख निवेश बीज और चारा है। इन निवेशों की व्यवस्थित आपूर्ति के लिए सहायक उद्योग अच्छी तरह विकसित है। प्रति वर्ष 12 अरब बीजों की क्षमता के साथ करीब 280 श्रिम्प हैचरियाँ, जलकृषि क्षेत्र के लिए श्रिम्प बीज उत्पादन में लगी हैं। कई देशी फार्म चारा उत्पादकों के अतिरिक्त 30 से ज्यादा वाणिज्यिक श्रिम्प चारा उत्पादक श्रिम्प चारे की माँग को पूरा कर रहे हैं। इन दो निवेश प्रदायकों के अलावा, खाद, चूना, प्रोबियोटिक्स, चारा संघटक/पूरक आदि विभिन्न अन्य निवेश व्यापारी भी उत्पादन प्रक्रिया में जुटे हैं।

जहाँ दीर्घकालीन उत्पादन स्तरों के लिए पर्यावरण प्रक्रियाओं की अपेक्षा है वहाँ अपनाई गई कृषि प्रणाली की प्रक्रिया पारंपरिक से संशोधित गहन प्रणाली में बदलती है। निम्न संभरण सघनता, स्वास्थ्य बीज का चुनाव, वैज्ञानिक चारा एवं जल गुणता प्रबन्धन आदि सर्वोत्तम प्रबन्ध प्रक्रियाओं के कुछ कदम हैं। जलकृषि का कृषि के साथ एकीकरण, पशु

पालन, कच्छ वनस्पति वनरोपण आदि ग्रामीण विकास एवं पर्यावरण सुरक्षा को बनाए रखने के कुछ सकारात्मक कदम हैं।

ग्रामीण अर्थव्यवस्था का विकास एवं रोजगार अवसर, तटवर्ती श्रिम्प कृषि की प्रगति के साथ जुड़े हुए सकारात्मक पहलू हैं। जलकृषि में करीब एक रुपए और प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप से 104 लाख से अधिक लोगों को रोजगार मिलता है। जबकि करीब एक दशलक्ष लोग जलकृषि से अप्रत्यक्ष रूप से लाभान्वित होते हैं। सुदूर तटवर्ती गाँवों में जलकृषि विकास के फलस्वरूप यातायात एवं संप्रेषण जैसी कई बुनियादी अवसंरचनात्मक सुविधाएं बनी हैं। सुदूर तटवर्ती गाँवों में श्रमिकों के आने से, इन क्षेत्रों का सामाजिक एवं आर्थिक विकास हुआ है और वर्ष भर रोजगार अवसरों के साथ ये क्षेत्र लाभान्वित हुए हैं तथा मजदूरी में संपूर्ण बढ़ोत्तरी भी हुई है।

हालांकि, करीब सभी तटवर्ती राज्यों में जलकृषि में प्रगति हुई है तो भी आन्ध्रप्रदेश 71,420 हेक्टर कल्चर क्षेत्र एवं 59,190 मे.टन श्रिम्प उत्पादन के साथ करीब पचास प्रतिशत हिस्से का योगदान कर रहा है। इसके पश्चात् 49,050 हे. क्षेत्र एवं 28,270 मे. टन श्रिम्प उत्पादन के साथ पश्चिम बंगाल आता है। नवीनतम प्रगति का राज्य-वार विवरण लेख के अंत में सारणी में दिया जाता है। हालांकि पिछले दशक के दौरान श्रिम्प निर्यात में श्रिम्प कृषि का महत्वपूर्ण योगदान रहा है, तो भी इस क्षेत्र को कई समस्याओं का सामना करना पड़ रहा है जो निम्नानुसार हैं:-

क) व्हाइट स्पॉट वायरल (डब्ल्यू एस एस वी) रोगः

1990 की शुरुआत के दौरान श्रिम्प कृषि विकास अपनी ऊँचाई पर था। तथापि, श्रिम्प फार्मों में व्हाइट स्पॉट वायरल रोग के व्यापक प्रादुर्भाव के कारण वर्ष 1995 के दौरान श्रिम्प उत्पादन में भारी गिरावट हुई। तब से अपनाए गए विभिन्न प्रबन्ध उपायों ने इस रोग के आवर्तन को कम किया है। तथापि, इसकी आशंका बनी हुई है जिसके कारण कृषकों में अनिश्चितता है।

ख) जलकृषि पर सर्वोच्च न्यायालय का मुकदमा

एक गैर सरकारी कार्यालय द्वारा दायर पी आई एल के संदर्भ में भारतीय सर्वोच्च न्यायालय ने श्रिम्प कृषि को 1991 के सी आर ज़ेड अधिनियम की सीमा में शामिल किया है। 11.12.1996 के फैसले ने सी आर ज़ेड के भीतर एवं इसके बाहर आनेवाले वैज्ञानिक कृषि कर रहे सभी फार्मों को जलकृषि प्राधिकरण से लाइसेंस लेने का निदेश दिया। 11.12.1996 के फैसले के संबंध में एम पी ई डी ए एवं अन्य संगठनों द्वारा दायर की गई पुनरीक्षण याचिका पर शीर्ष न्यायालय में मुकदमा चल रहा है।

ग) विपणन समस्याएं

विश्व बाज़ार में श्रिम्प के मूल्य में अत्यधिक उतार-चढ़ाव आ रहा है। उत्पादों के गुणता मानकों के संदर्भ में आयातक देशों की माँग बढ़ रही है एवं उत्पाद का पता लगाया गया है। ऑर्गेनिक उत्पादों की बड़ी माँग है और अवांछित संदूषण को रोकने के लिए सख्त मानकों एवं कार्यप्रणालियों की अपेक्षा है। ई सी देशों में प्रतिजैविकी अवशेष, जापान से कीचड़दार एवं मोल्डी गंध शिकायत आदि कुछ ऐसे गुणता मामले हैं जिनका एम पी ई डी ए द्वारा शीघ्र ही हल किया जा रहा है।

घ) जलकृषि के लिए वित्तीय/बीमा कवरेज

जलकृषि पूँजी-गहन एवं पूरी तरह सांस्थानिक वित्तीयन पर निर्भर है। तथापि, श्रिम्प फार्मों में वायरल रोग का प्रादुर्भाव, जलकृषि यूनिटों के विरुद्ध मुदमेबाज़ी जैसी समस्याओं ने इस क्षेत्र के ऋण वापसी निष्पादन को प्रभावित किया है। अतः जलकृषि के लिए उधार एवं बीमा कवरेज ज्यादा फायदेमंद नहीं है। अतः वित्तीय संस्थानों एवं बीमा एजेंसियों को चाहिए कि वे जलकृषि क्षेत्र को पुनरुज्जीवित करने की अपनी रवैया बदलें।

एम पी ई डी ए के संवर्धनात्मक कार्य :

मात्र जलकृषि का संवर्धन करने के लिए एम पी ई डी ए के दस फील्ड कार्यालयों अर्थात् क्षेत्रीय केन्द्रों और उप क्षेत्रीय केन्द्रों का एक नेटवर्क है। इन कार्यालयों के तकनीकी अधिकारी श्रिम्प कृषकों को दीर्घकालीन जलकृषि के लिए तकनीकी मार्गदर्शन



देते हैं। इस तकनीकी सहायता कार्यक्रम में भू-सर्वेक्षण, स्थान का चयन, परियोजना रिपोर्ट की तैयारी, फार्म निर्माण, तालाब की तैयारी पर सलाह, चारा संग्रहण, तालाब प्रबंधन, चारा प्रबंधन आदि शामिल हैं। श्रिम्प कृषि में प्रबंधन की वैज्ञानिक संकल्पना को लोकप्रिय बनाने तथा व्यापक अवबोध सृजित करने के लिए ये कार्यालय नियमित रूप से प्रशिक्षण कार्यक्रमों, कृषकों की बैठकों, अभियानों, कार्यशालाओं, संगोष्ठियों, अंतर्राज्यीय अध्ययन दौरों, प्रदर्शन कार्यक्रमों आदि का आयोजन करते हैं।

एम पी ई डी ए द्वारा तकनीकी सहायता कार्यक्रमों के अलावा नए फार्मों, हैचरियों का विकास, बहिस्त्राव अभिक्रिया प्रणालियों, पी सी आर प्रयोगशालाओं व शीतकक्षों की स्थापना, पानी की गुणता जाँच करने के उपस्कर की खरीद आदि के लिए इमदाद के रूप में वित्तीय सहायता योजनाएं भी कार्यान्वित की जाती हैं।

एम पी ई डी ए भारत में जलकृषि के विकास के लिए राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय संगठनों के साथ सहयोग भी करता है। इस क्षेत्र में नई विकास नीतियाँ तैयार करने हेतु निधीकरण के लिए आई सी ए आर संस्थानों, विश्वविद्यालयों आदि से प्राप्त अनुसंधान प्रस्तावों पर एम पी ई डी ए द्वारा विचार किया जाता है। हाल ही में, एम पी ई डी ए ने श्रिम्प हैचरियों में प्रतिजैविकी मुक्त बीज उत्पादन के प्रदर्शन के लिए माँगलूर मात्स्यिकी कॉलेज को एक परियोजना की मंजूरी दी।

वस्तुतः एम पी ई डी ए द्वारा भारत में श्रिम्प रोग नियंत्रण तथा तटवर्तीय प्रबंधन के लिए एन ए सी ए बाँगकॉक (एफ ओ ए का अधीनस्थ संगठन) के साथ शुरू किया गया तकनीकी सहायता कार्यक्रम श्रिम्प फार्मों में सर्वोत्तम प्रबंधन का प्रदर्शन करने में सफल रहा। एम पी ई डी ए ने भारतीय हैचरी संचालकों के लिए ऑस्ट्रेलिया तथा थाइलैंड में हैचरियों का प्रतिजैविकी मुक्त संचालन सीखने के लिए एक अंतर्देशीय अध्ययन दौरा आयोजित किया।

एम पी ई डी ए भारतीय श्रिम्प प्रक्रियाओं में कुछ संहिताएं एवं मानदण्ड बनाने का कठिन प्रयास करता आ रहा है। हाल

में, एम पी ई डी ए ने जलकृषि निवेशों के लिए कुछ मानदंड तैयार किए हैं। एम पी ई डी ए द्वारा बड़े शुद्धजल झीलों की जलकृषि के लिए मार्गदर्शन तथा हैचरियों के लिए व्यवहार संहिता भी निर्धारित की गई हैं। संप्रति, एम पी ई डी ए तटवर्ती जलकृषि फार्मों के साथ श्रिम्प चारा मिल्सों के लिए भी मानदंड निर्धारित करने की संभाव्यता की खोज कर रहा है। दसवीं योजना के लिए एम पी ई डी ए द्वारा प्रस्तावित अन्य कदमों में श्रिम्प की गुणता सुधारने हेतु खोजनीयता अध्ययनों के आयोजन के लिए जापान जैसे आयातक देशों के साथ सहयोग करना, श्रिम्प कृषि में एच ए सी सी पी प्रक्रियाओं को अपनाना आदि शामिल है।

एम पी ई डी ए द्वारा नई पहल:

समुद्री खाद्य निर्यातों के अधार मज़बूत करने के लिए एम पी ई डी ए ने निम्नलिखित कई नई पहल लागू की है:-

क) शुद्धजल झींगा कृषि का विकास:

श्रिम्प निर्यातों की वृद्धि के लिए शुद्ध जल झींगा कृषि के विकास की संभावनाओं पर विचार करते हुए, एम पी ई डी ए बड़े शुद्धजल झींगा या स्कैम्पी की कृषि का संवर्धन कर रहा है। मात्र तटवर्ती राज्यों के ही नहीं, बल्कि हरियाणा, बिहार आदि आंतरिक राज्यों के शुद्धजल झींगा कृषकों को भी तकनीकी तथा वित्तीय सहायत दी जाती है। वर्ष 2002-03 के दौरान करीब 34630 हेक्टर में कृषि द्वारा 30450 मे.टन का उत्पादन करते हुए स्कैम्पी कृषि ज़ोर पकड़ रही है। प्रगति का राज्यवार ब्यौरा संलग्न तालिका में दिया जाता है। हाल के वर्षों में प्रगति की दर उल्लेखनीय रही है।

जलकृषि विविधीकरण कार्यक्रम

हमारे जलकृषि प्रयासों को उचित किस्मों में विविधीकृत करने हेतु, एम पी ई डी ए प्रत्याशी किस्मों की तकनीकी-आर्थिक व्यवहारिता का निदर्शन करने का प्रयास कर रहा है। इस दिशा में हमारे प्रयासों को कारगर बनाने के लिए एम पी ई डी ए ने राजीव गाँधी जलकृषि केन्द्र (आर जी सी ए) नामक



एक अलग सोसाइटी की स्थापना की है। संप्रति आर जी सी ए विभिन्न परियोजनाओं को कार्यान्वित करने का प्रयास कर रहा है जो निम्न लिखित है:-

- क) सीबास हैचरी प्रोद्योगिकी
- ख) सीबास केज कृषि परियोजना
- ग) लॉबस्टर फैटर्निंग
- घ) अर्टीमिया उत्पादन, आदि

आर जी सी ए की इन परियोजनाओं के अलावा, एम पी ई डी ए कृषकों के तालाबों में सीपी, शंबु शुक्ति, केकडा, मिल्क फिश, मुल्लेट्स, तिलापिया जैसी विभिन्न वैकल्पिक किस्मों के लिए प्रदर्शन फसल का आयोजन भी कर रहा है।

ख) जलकृषि में नयी संकल्पनाएं

जलकृषि की संकल्पनाएं बहुत गतिशील हैं तथा प्रक्रियाएं बदलती रहती हैं। अर्ध-गहन या गहन कृषि प्रक्रियाओं द्वारा तटीय श्रिम्प कृषि एक परंपरागत कार्यकलाप से एक धनार्जन

का साधन बन गया है। चूँकि इस प्रकार की आधुनिक प्रणालियों का पर्यावरण पर नकारात्मक प्रभाव हो सकता है, संशोधित परंपरागत या व्यापक प्रणालियों पर जोर दिया जा रहा है जो अधिक दीर्घकालीन एवं पर्यावरणोन्मुख हो सकती है। श्रिम्प कृषि में बीमारियों का प्रभाव रोकने एवं पर्यावरण सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिए बहिस्त्राव अभिक्रिया सुविधाएं, पुनः संचरण प्रणालियाँ, प्रोबोटिक्स का प्रयोग जैसी संकल्पनाएं भी शुरू की जाती हैं। जलकृषि में एच ए सी सी पी पद्धतियों के अपनाने से जलकृषि से संदूषण-मुक्त उत्पाद सुनिश्चित किए जा सकते हैं।

विदेशीय किस्मों की वाणिज्यिक जलकृषि की सार्वभौमिक माँग के कारण, वाणिज्यिक रूप से इन किस्मों का उत्पादन करने की बलवती माँग उद्योग की ओर से होती है। ऐसे मामलों में जैव-सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिए निकट मॉनीटरिंग एवं संगरोध कार्यप्रणाली अपेक्षित है। कुल मिलाकर, ऑर्गानिक उत्पादों के लिए विश्वभर की माँग बदल रही है एवं उपभोक्ता की माँग को पूरा करने के लिए उत्पादन प्रणालियों को बदलना आवश्यक है।

सारणी

श्रिम्प एवं स्कैपी कृषि का राज्य-वार विवरण (31.3.2003 को)

राज्य	श्रिम्प		स्कैपी		कुल	
	क्षेत्र (हे.)	उत्पादन (मे.ट)	क्षेत्र (हे.)	उत्पादन (मे.ट)	क्षेत्र (हे.)	उत्पादन (मे.ट)
आन्ध्रप्रदेश	71,420	59,190	21,580	27,020	93,000	86,210
पश्चिम बंगाल	49,050	28,270	4,100	2,140	53,150	30,410
उड़ीसा	9,000	10,280	2,995	410	11,998	10,690
केरल	13,680	7,570	830	200	14,510	7,770
तमिलनाडु	3,620	4,990	180	130	3,800	5,120
कर्नाटका	3,040	2,620	165	180	3,205	2,800
महाराष्ट्र	460	640	4,420	290	4,880	930
गुजरात	880	1,050	360	80	1,240	1,130
गोआ	930	710	-	-	930	710
कुल	1,52,080	1,15,320	34,630	30,450	1,86,710	1,45,770

श्रिम्प कृषि क्षेत्र में रोग नियंत्रण एवं रोक-थाम, पर्यावरण एवं परिस्थिति के अनुरूप जलकृषि, उत्पादों की बेहतर गुणता सुनिश्चित करना एवं विश्वभर के बाजारों में गिरते मूल्यों के संदर्भ में आर्थिक दीर्घकालिकता के उपाय आदि पर अत्यधिक जोर दिया जा रहा है। अच्छी प्रबंध प्रक्रिया (जी एस पी) से उपर्युक्त सभी पहलुओं को बनाए रखा जा सकता है। एन ए सी ए की तकनीकी सहायता के साथ एम पी ई डी ए ने श्रिम्प जलकृषि के लिए जी एम पी का एक सेट तैयार किया है। चुने हुए कृषकों के तालाबों में जी एम पी का परीक्षण किया गया

जिससे विस्तृत मरक वैज्ञानिक अध्ययन से रोग प्रादुर्भाव के नियंत्रण के लिए एक नीति तैयार हुई। प्रदर्शनी की सफलता से प्रोत्साहित होकर एम पी ई डी ए-एन ए सी ए अध्ययन दल ने पूरे क्षेत्र में जी एम पी अपनाने के लिए एक गाँव प्रदर्शनी कार्यक्रम का आयोजन किया। अक्वा क्लब, कृषक संघ एवं को-ऑपरेटिव फार्मिंग के सिद्धान्तों को जी एम पी के कार्यान्वयन में शामिल किया जाता है।

10 वीं योजना अवधि के दौरान एम पी ई डी ए भारतीय कृषकों के समक्ष ये नई संकल्पनाएं प्रस्तुत करेगा।



केरल में एरणाकुलम जिला के तटीय गाँव में संस्थान-गाँव-संपर्क कार्यक्रम

आर. सत्यदास, शीला इम्मानुएल,
सिन्धु सदानन्दन और जयन के. एन.
केंद्रीय समुद्री मात्स्यिकी अनुसंधान संस्थान, कोचीन

राष्ट्रीय कृषि प्रौद्योगिकी परियोजना (एन ए टी पी) के अंदर विश्व बैंक की निधिबद्धता से भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद द्वारा प्रारंभित नूतन और उपभोक्ता द्वारा प्रयोग करने लायक सरल विस्तार कार्यक्रम है संस्थान-गाँव-संपर्क कार्यक्रम (आइ वी एल पी). पहले के प्रौद्योगिकी कार्यक्रम, इसके उन्नयन और परिष्कार में किसानों, विशेषकर कमज़ोर किसानों की भागीदारी अनदेखी जा रही थी जिसकी बजट से विकास कार्यक्रमों का असंतुलन हो जाता भी था। केंद्रीय समुद्री मात्स्यिकी अनुसंधान संस्थान (सी एम एफ आर आइ) द्वारा केरल के एरणाकुलम जिला के वाइपीन द्वीप के एलमकुन्नपुष्पा गाँव की तटीय कृषि व्यवस्था में शुरू किए गए आइ वी एल पी प्रणाली से टिकाऊ विकास का अच्छा रास्ता खोला गया है। अन्य विकास कार्यक्रमों की अपेक्षा इस कार्यक्रम में योजना, आयोजन एवं कार्यान्वयन स्तर में किसानों को साथ मिलाने के साथ साथ कार्यान्वयन करने वाले संस्थान और किसानों के बीच तकनी-हस्तक्षेपों का आदान-प्रदान भी होता है। इस संयुक्त उत्तरदायित्व की वजह से यह कार्यक्रम अन्य कार्यक्रमों से अनोखा रह जाता है। इस कार्यक्रम का मुख्य लक्ष्य प्रौद्योगिकी जगाने की प्रासंगिकता में सुधार लाना, प्रचलित प्रणालियों का निर्धारण करके साध्य और शक्य उपायों को सुझाना और इस वजह से मछुआरों को उनकी बदलती आवश्यकताओं के अनुसार जानकारी प्रदान करना है। इस कागज़ात में कार्यक्रम के उद्देश्य, स्वीकृत भागीदारी समीपन, चालू लघु खेती परिस्थितियों, पहचान की गई समस्याओं, सिफारिश किए गए शक्य उपायों और गाँव में किए गए उत्कृष्ट प्रयासों के सुपरिणामों का प्रतिपादन किया जाता है।

मात्स्यिकी इस गाँव के लोगों का मुख्य धंधा और आय कमाने का मुख्य स्रोत है। मात्स्यिकी के अतिरिक्त मुर्गी और बतख, गाय, बकरी और खरगोश पालन जैसे पशुधन



सारणी : 1

मात्स्यिकी पर आधारित उद्यम	पशुधन पर आधारित उद्यम	कृषि पर आधारित उपव्यवसाय
<ul style="list-style-type: none"> सुधारित पालन व्यवस्थाओं के बारे में जानकारी की कमी अशास्त्रीय संभरण सघनता अपर्याप्त जल विनिमय गुणताहीन पानी खाद्य की अनुपलब्धता गुणतायुक्त बीजों की अनुपलब्धता अतिक्रमण, विष लगाना जैसे सामाजिक जैसे सामाजिक समस्याएं अपर्याप्त वित्तीय सहायता 	<ul style="list-style-type: none"> पोषणयुक्त खाद्य की कमी चारा घास के पैदावार के लिए भूमि का अभाव रोग ग्रसन पानी जमा होने की स्थिति चारा घास पैदावार पर जानकारी का अभाव अच्छे उत्पादन प्राप्त पशुओं के पालन पर जानकारी का अभाव पूँजी का अभाव खाद्य की अधिक लागत 	<ul style="list-style-type: none"> मृदा की लवणता संस्थानों की सहायता का अभाव विकसित कृषि प्रणालियों पर जानकारी का अभाव नई नई प्रजातियों पर जानकारी का अभाव शास्त्रीय पैदावार की ओर प्रतिकूल मानसिकता वित्त का अभाव अधिक श्रम लागत

प्रबंधन तथा इसके साथ साथ कृषि कार्यविधियाँ भी अन्य अनुपूरक उपव्यवसाय हैं। मात्स्यिकी मौसमिक स्वभाव का काम होने के कारण उपर्युक्त उपव्यवसायों के अतिरिक्त रोजगार की प्रासंगिकता बढ़ जाती है। अतः एक एकीकृत ग्रामीण विकास को लक्ष्य करके, राष्ट्रीय कृषि अनुसंधान व्यवस्था (एन ए आर एस) के अंदर आइ वी एल पी प्रणाली के भाग के रूप में पशुधन और कृषि पर आधारित हस्तक्षेपों की प्रौद्योगिकियाँ मात्स्यिकी के साथ प्रारंभित की गई हैं। यह अभियान अत्यंत सफल देखा गया

और इसे अत्यधिक व्यापकता भी प्राप्त हुई। गाँव में देखी गई कुछ समस्याएं सारणी 1 में दी जाती हैं:

पहचान की गई समस्याओं के आधार पर किसानों की सक्रिय सहभागिता से आवश्यकता पर आधारित और स्थान विशेषक तकनो-हस्तक्षेपों का कार्यान्वयन किया गया। इस तरह के कुछ सफल हस्तक्षेपों और किसानों तथा गाँव में इनके प्रभावों का विवरण सारणी 2 से 4 में दिया जाता है :

सारणी : 2 मात्स्यिकी पर आधारित हस्तक्षेपों का प्रभाव

क्र. सं	हस्तक्षेप का नाम एवं किसानों की प्रणाली	उपचार	प्रभाव		बी सी अनुपात
			अनुकूल	प्रतिकूल	
1.	<u>समान आकार वाले किशोर केकड़ों का एकल संवर्धन</u> अन्य मछलियों के साथ केकड़ों के छोटों का अनियमित संभरण	समान आकार वाले किशोर केकड़ों का एक संवर्धन (संभरण दर: 4800/हे. आकार 150-200 ग्रा)	<ul style="list-style-type: none"> • रोग प्रतिरोधता • केकड़ा के लिए ट्रेस मछली अच्छा खाद्य • कसाईखाने का अपशिष्ट, जो अच्छा खाद्य है, मुफ्त में मिलता है • बाड़े के लिए उपयुक्त जाल केकड़ों के बचाव को रोकता है। • उच्च विपणन-साध्यता 	<ul style="list-style-type: none"> • कसाईखाने के अपशिष्ट उबालते वक्त बदबू आ जाता है और पानी का प्रदूषण भी होता है • अधिक समय लग जाता है • प्राकृतिक स्थानों से केकड़ों के प्रग्रहण में कठिनाई • खराब केकड़ों का कम मूल्य 	2.10:1
2.	<u>पख मछलियों का बहु संवर्धन</u> मछली जातियों का अनुचित संभरण और पर भक्षकों का उन्मूलन	माहुआ खली उपयुक्त करके परभक्षकों का उन्मूलन, सी. चैनोस और एम. सेफालस का समान संभरण	<ul style="list-style-type: none"> • उच्च विपणन साध्यता • बड़ा आकार • कम रोग ग्रसन 	<ul style="list-style-type: none"> • कुछ मौसमों में बीजों की सीमित उपलब्धता • पालन की लंबी अवधि 	1.64:1
3.	<u>मछली और चिडियों का एकीकृत पालन</u> अलाभकर पालन प्रणालियाँ	मुर्गी पालन के विसर्ज्यों को उपयुक्त करके तालाबों को उपजाऊ बनवाना और एम. सेफालस और सी. चैनोस का संभरण करना	<ul style="list-style-type: none"> • अच्छा आर्थिक लाभ • मछली के साथ मुर्गीपालन जोड़ना आसान है • मछली के लिए अतिरिक्त पूरक खाद्य की ज़रूरत नहीं • इस से भी सही घरेलू मुर्गी पालन • अंडों की प्राप्ति बढ़ गई • चिडियों के भार में वृद्धि 	<ul style="list-style-type: none"> • चिडियों को थात में खाय देना • साँप, कुत्ता और अन्य पशुओं द्वारा चिडियों का आक्रमण • पंजर निर्माण खर्चीला • लकड़ी के स्तंभ (जिन पर पंजर बनाया जाता है) पर्याप्त नहीं, लंबी अवधि तक रह जाते नहीं • रोग ग्रसन की साध्यता (मुर्गीपालन से मछली को) 	1.85:1

1	2	3	4	5	6
4.	<u>मछली शुष्कन के लिए रैक में सुखाने की प्रणाली</u> (एक एकक - 15 सदस्य/एकक) मछली का परंपरागत सूर्य तपन	परंपरागत प्रणाली द्वारा रैक में सुखाना	<ul style="list-style-type: none"> • संसाधन के वक्त मछली का कम अपशिष्ट • अधिक स्वास्थ्य परक • लंबे काल तक रखा जा सकता है • सूक्ष्माणु ग्रसन से मुक्त • उपभोक्ता की अभिरुचि • देखने में अच्छा 	<ul style="list-style-type: none"> • उच्च पूँजी • अधिक श्रम लगाना 	1.98:1
5.	<u>एम. सेफालस का एक संवर्धन</u> मछली जातियों का अनुचित संभरण और पर भक्षकों का उचित उन्मूलन नहीं	माहुआ खली उपयुक्त करके परभक्षकों का उन्मूलन और 20,000/ है की दर में बीजों का संभरण	<ul style="list-style-type: none"> • उच्च विपणन साध्यता • बड़ा आकार • कम रोग ग्रसन • अधिक आर्थिक लाभ 	<ul style="list-style-type: none"> • बीजों का अधिक मूल्य 	1.45:1
6.	केकड़ा वज़न बढ़ाव जल केकड़ों का पालन	जल केकड़ों का संभरण करके बेहतर प्रबंधन प्रणालियों द्वारा उनका वज़न बढ़ाना	<ul style="list-style-type: none"> • कम पालन अवधि • कम रोग ग्रसन • तुरंत लाभ 	<ul style="list-style-type: none"> • स्वजातिभक्षण 	2.50:1

सारणी : 3 पशुधन पर आधारित हस्तक्षेपों का प्रभाव

क्र. सं	हस्तक्षेप का नाम और किसानों की प्रणाली	उपचार	प्रभाव		बी सी अनुपात
			अनुकूल	प्रतिकूल	
1.	डेरी गायों का कृमिहरण, सूक्ष्मपोषक सूक्ष्मपोषक संपूरण और प्रोफाइलाटिक प्रतिरक्षण अपर्याप्त एवं अनुचित चिकित्सा, कृमिहरण, संक्रामक रोगों के प्रति टीका देना	खनिज/विटामिन संपूरण, पाद एवं मुँह के रोगों के प्रति टीका लगाना	<ul style="list-style-type: none"> • वर्द्धित दूध प्राप्ति • कम रोग ग्रसन • अच्छा स्वास्थ्य • डेरी पालन के लिए और भी शास्त्रीय तरीके 	<ul style="list-style-type: none"> • अधिक श्रम वाला • दूध के विपणन में हानिकारक स्पर्धा 	1.42:1
2.	बकरी पालन में कृमिहरण सूक्ष्म पोषक संपूरण और रोग नियंत्रण परंपरागत प्रणाली, देशज दवाएं	कृमिहरण, खनिज/विटामिन संपूरण पाद एवं मुँह के रोगों के प्रति टीका	<ul style="list-style-type: none"> • वर्द्धित मांस प्राप्ति • कम रोग ग्रसन • अच्छा स्वास्थ्य • बकरी पालन में और भी व्यवस्थित तरीका 	<ul style="list-style-type: none"> • वर्द्धित श्रम लागत 	1.39:1
3.	देशज चिडिया की तुलना में ग्रामलक्ष्मी प्रजाति कम उत्पादकता और लंबे अंडपरिपक्वता वाली चिडियों का पालन, परजीवों का नियंत्रण और प्रोफाइलाटिक टीका नहीं	नई प्रजाति (ग्रामलक्ष्मी), खनिज/विटामिन संपूरण, टीका (30 चिडिया)	<ul style="list-style-type: none"> • वर्द्धित अंड प्राप्ति • वर्द्धित मांस भार • शीघ्र मांस भार • शीघ्र अंडपरिपक्वता की वजह से समय नष्ट नहीं 	<ul style="list-style-type: none"> • अधिक ध्यान की जरूरत • अच्छे खाद्यों की जरूरत 	1.12:1
4.	बतख पालन प्रणाली कम उत्पादनशील देशज बतखों का पालन	उच्च आनुवंशिक शक्यता वाले छोटे बतख (कुट्टनाडन), अच्छा खाद्य	<ul style="list-style-type: none"> • वर्द्धित मांस प्राप्ति • कम रोग ग्रसन • अच्छा स्वास्थ्य 	-	1.33:1
5.	वास भूमि में ब्रोइलर खरगोश का पालन कम उत्पादनशील देशज खरगोशों का पालन	खरगोशों की संकर प्रजाति की शुरुआत (ग्रे जयन्ट)	<ul style="list-style-type: none"> • वर्द्धित मांस प्राप्ति • खरगोश के भार में वृद्धि • कम रोगग्रसन 	-	1.46:1
6.	अनुपयुक्त कच्ची भूमि में चारा घास का पैदावार प्लूस और उष्णता	पाराघास की शुरुआत	<ul style="list-style-type: none"> • लवणता की अधिक सह्यता • अच्छी पौष्टिकता • अच्छी फसल प्राप्ति • पाचयोग्य चारा घास 	<ul style="list-style-type: none"> • घास की अधिकतर बढ़ती से साँप तथा अन्य रेंगनेवाले जीवों की बसती 	1.16:1

सारणी : 4 कृषि पर आधारित हस्तक्षेपों का प्रभाव

क्र. सं	हस्तक्षेप का नाम और किसानों की प्रणाली	उपचार	प्रभाव		बी सी अनुपात
			अनुकूल	प्रतिकूल	
1.	<u>बेहतर किस्म की चौलाई, करेला, चिचिंडा</u> स्थानीय किस्मों का परंपरागत पैदावार और अनियमित दूरी और बीजों की दर	बेहतर किस्म का नियमित दूरी और बीजों की दर में पैदावार क) चौलाई : कन्नारा लोकल, 30 से मी x 20 से मी, 8 ग्रा/सेन्ट ख) करेला : प्रीती 2 मी x 2 मी, 2 ग्रा/सेन्ट ग) चिचिंडा : कौमुदी, 2 मी x 2 मी, 16 ग्रा/सेन्ट	<ul style="list-style-type: none"> • अच्छी फसल प्राप्ति • कीटों और रोगों का कम ग्रसन • देखने लायक • अच्छी विपणन साध्यता 	<ul style="list-style-type: none"> • कम अपजाऊ मिट्टी में अवरुद्ध वृद्धि 	क) 3.37:1 ख) 6.80:1 ग) 2.93:1
2.	<u>ड्वार्फ कावेन्डिश का ऊतक संवर्धन</u> स्थानीय किस्म का परंपरागत पैदावार	ड्वार्फ कावेन्डिश का पैदावार दूरी : 2मी x 2 मी बीज की दर : 10 छोटे/सेन्ट	<ul style="list-style-type: none"> • उच्च वाणिज्य साध्यता • अच्छा स्वाद • फल का बड़ा आकार • अच्छा मूल्य 	<ul style="list-style-type: none"> • तुलना में कम अतिजीवितता दर 	1.27:1
3.	<u>नारियल बागों में पोषण प्रबंधन प्रणाली</u> पोषकों और उर्वरों का अनुचित प्रयोग	मृदा परीक्षण पर आधारित पोषण प्रबंधन	<ul style="list-style-type: none"> • बड़े आकार के नारियल • पानी का अंश ज्यादा • स्वस्थ पत्ते • खोपड़ा (copra) का अधिकतर भार • अधिक तेल की प्राप्ति 	-	2.00:1

1	2	3	4	5	6
4.	<u>बेहतर किस्म रिड्ज गौर्ड, सलाड ककड़ी और तरकारी लोबिया</u> स्थानीय किस्मों का परंपरागत पैदावार और अनियमित दूरी और बीजों की दर	बेहतर किस्म का पैदावार और परामर्श की गई दूरी और बीजों की दर (ग्रुप फार्मिंग) क) रिड्ज गौर्ड: इन्डाम - 1222, 2 मी x 2मी, 12 ग्रा/सेन्ट ख) सलाड ककड़ी पोइनसेटे, 2x 1.5 मी, 3 ग्रा/सेन्ट ग) तरकारी लोबिया : अर्का गरिमा, 45x 30 से मी, 20 ग्रा	<ul style="list-style-type: none"> • उच्च विपणन साध्यता • पकाने के लिए बेहतर • कम रोग ग्रसन 	<ul style="list-style-type: none"> • कम उपजाऊ मिट्टी में अवरुद्ध वृद्धि 	क) 3.94:1 ख) 3.32:1 ग) 2.16:1

परियोजना का व्यापक प्रभाव

- गाँव के किसान लोग इस उद्यम के वाणिज्यीकरण के लिए प्रयास कर रहे हैं। मात्स्यिकी पर आधारित हस्तक्षेपों की बात लें तो अधिकांश किसान पट्टे पर लिए गए तालाब उपयुक्त करते हैं। पट्टे की राशि शास्त्रीय हस्तक्षेपों से प्राप्त अधिक लाभ के अनुसार समय समय पर बढ़ जाती है।
- मछली/केकड़ा का संग्रहण करनेवाले लोग ज्यादातर सीमांत किसान हैं; वे छोटी मछलियाँ समान आकार की होने की बात पर ध्यान देते हैं और एक संवर्धन, द्विसमय संवर्धन और बहु संवर्धन जैसी कृषि प्रणालियों के अनुसार छोटों का संभरण करने के लिए भी ध्यान देते हैं,
- तटीय मछुआरे लोग आइ वी एल पी के भाग के रूप में शुरू की गई शास्त्रीय कृषि प्रणालियाँ अपनाते हैं। पड़ोसी गाँवों से आने वाले, जो खरगोश, फिनफिश आदि का पालन करने वाले हैं, यहाँ की कृषि प्रणालियों से प्रभावित हो जाते हैं।
- सफलता प्राप्त किसानों में और भी परिष्कृत कृषि के लिए पड़ोसी गाँवों के बड़े तालाब पट्टे पर लिए जाने की प्रवणता होती है। यह पड़ोसी गाँव के किसानों को भी प्रेरणा प्रदान करने लायक कार्य है।
- अनुपयुक्त तालाबों और बाँधों को उपयोग्य बनाते हैं।
- किसानों के अवगाह और जानकारी में वृद्धि
- गाँवों के बीच की सामाजिक भागीदारी और आपसी लेन-देन बढ़ गये। महिला किसानों में यह अच्छा दृष्टांत है।
- किसानों, अनुसंधान केन्द्रों/राज्य विभागों और अन्य संगठनों के बीच अंतर और अंतरा संपर्क कार्य
- कुछ किसान परामर्श देने में लगे हुए हैं और सामाजिक मान्यता भी प्राप्त करते हैं।
- सामूहिक सहयोग से किसानों के बीच की भागीदारी कार्य विधियाँ बढ़ गई हैं।



शंबु कृषि में महिला स्वयं सहायक ग्रूप - भारत के तटीय जनता के लिए रोज़गार एवं आमदनी

टी. एस. वेलायुधन,

केंद्रीय समुद्री मात्स्यिकी अनुसंधान संस्थान, कोचीन

आमुख

आन्डमान और निकोबार द्वीप समूहों सहित भारतीय तटों पर शंबुओं की दो जाति, हरित शंबु *पेरना विरिडिस* और भूरा शंबु *पेरना इन्डिका*, क्रमशः अधिकतर और नियन्त्रित वितरण के साथ उपलब्ध है। ये मात्स्यिकी की निरन्तरता में योगदान देनेवाली संपदाएं हैं। ये उत्तर केरल के ग्रामीण जनताओं की पसंदीदा भोजन भी है।

शंबुओं का पश्चजल संवर्धन वर्ष 1996 में पडन्ना (कासरगोड) में शुरू हुआ था। शंबु कृषकों को प्रशिक्षण एवं निदर्शनों के ज़रिए प्रोत्साहित करने पर वर्ष 1996 के 20 टन उत्पादन वर्ष 2002 में केरल ज्वरन्दमुखों में 1350 टन तक बढ़ गया। कर्नाटक और महाराष्ट्र ने भी वर्ष 2002 से शंबु कृषि शुरू की।

वर्गीकरण

भारतीय साहित्य में पहले संदर्भित किए अनुसार *माइटिल्स* वंश भारत में नहीं पाया जाता है। पर *माइटिल्स विरिडिस* की तुलना *पेरना विरिडिस* से की जा सकती है। भूरा शंबु में एक नई जाति *पेरना इन्डिका* का पहचान हुआ। (कुरियाकोस और नायर, 1976)

शंबुओं का वितरण

दुनिया भर खाद्य शंबुओं के लगभग 15 जातियों की कृषि हो रही है। नील शंबु *माइटिल्स इडुलिस* और एस. *गालोप्रोविनसियालिस* स्पेन की प्रमुख जातियाँ हैं। चीन *एम. इडुलिस* काला शंबु *एम.क्रासिटेस्टा* और हरित शंबु *एम. स्माराग्डिनस* की प्रमुखता के साथ दुनिया के शंबु उत्पादक देशों में सबसे आगे है। तायलैन्ड, फिलिपीन्स, इन्डोनेशिया,

मलेशिया बर्मा और फिजी में *पेरना विरिडिस* प्रमुख है। न्यूजिलैन्ड में बड़े हरित ओठ वाले न्यूजिलैन्ड शंबुओं या हरित कवच शंबुओं का पालन किया जाता है। कालिफोर्निया में *एम. कालिफोर्नियानस* का पालन किया जाता है। भारत के समान श्रीलंका में भी भूरा शंबु *पी. पेरना* उपलब्ध है।

भारत के तटीय क्षेत्रों में हरित शंबु प्रचुर मात्रा में पाया जाता है और केरल के कोल्लम, आलप्पुषा, कोची, कोप्पिकोड, कन्नूर और कासरगोड के अन्तराज्वारीय क्षेत्रों में विस्तृत रूप से और उडीसा में चिल्का, विशाखपट्टनम, काकिनाडा, चेन्नै, पोन्डिचेरी, गूडल्लूर, माँगलूर, कारवार गोआ, रत्नगिरि, कच की खाड़ी और आन्डमान निकोबार द्वीप समूहों में छोटे छोटे संस्तरों में पाया जाता है। *पेरना इन्डिका* का वितरण दक्षिण-पश्चिम तट पर वर्कला से कन्याकुमारी तक और दक्षिणपूर्व तट कन्याकुमारी से तिरुचेन्द्रूर तक सीमित है।

मात्स्यिकी मौसम

पश्चिम तट में सितंबर से अप्रैल तक शंबुओं का नियमित संग्रहण होता है जब कि कुछ क्षेत्रों में, विशेषतः पूर्व तट में मात्स्यिकी साल भर रहती है। पालन क्षेत्रों से उच्च पैदावार मार्च-अप्रैल महीनों के दौरान होता है।

भारत में इस दशवर्ष के प्रारंभ में 10,000 टन से नीचे रहे पैदावार वर्धमान विदोहन और तटीय शंबु खेतों के विकास के ज़रिए वर्ष 2002 में दुगुनी हो गयी हैं।

जनन क्षमता और व्यवहार

शंबु एकलिंगी होती हैं। एक प्रौढ़ मादा शंबु की जनन-ग्रंथी को इसके चटकीला नारंगी-लाल रंग के कारण आसानी से पहचाना जा सकती है। नर में इसका रंग क्रीम पीत होता है। ये लगभग 50 सालों तक जीवित रहते हैं।

बढ़ती के दो महीनों में (15-28 मि मी) शंबु प्रौढ़ता प्राप्त करती है। पश्चिम तट में जून-सितंबर में श्रृंग काल के साथ शंबुओं का अंडजनन काल लंबा होता है। अवस्था सूचक

(कंडीशन इन्डेक्स) यदि 140 से ऊपर है तो उच्च और 70 है तो अल्प माना जाता है।

$$\text{प्रतिशत खाद्य योग्यता} = \frac{\text{मांस भार} \times 100}{\text{कुल भार}}$$

प्रतिशत खाद्ययोग्यता उच्च रहने के समय संग्रहण किया जा सकता है।

शंबु पालन प्रविधियाँ

स्थान चयन, पारिस्थितिकी और शरीर क्रियात्मक घटक:

उच्च प्लवक उत्पादन (प्रतिलीटर 17-40 μg क्लोरोफिल, प्रति लीटर 3.5-5.2 μg क्लोरोफिल) के साथ स्वच्छ समुद्र जल शंबु पालन के लिए उपयुक्त होता है। सामान्य जल प्रवाह (ज्वारीय बाढ़, में 0.17-0.25 m/s और भाटा में 0.25-0.35 m/s) के ज़रिए आवश्यक प्लवकीय खाद्य उपलब्ध हो जाएगा और संवर्धन क्षेत्र से अधिक पड़ी उत्सर्ज्य और सिल्ट को प्रवाह में ले जाएगा। पालन क्षेत्र में जल की लवणता 27-35 पी पी टी होना अनिवार्य है।

1) खुले समुद्र में कृषि

केन्द्रीय समुद्री मात्स्यिकी अनुसंधान संस्थान ने वर्ष 1971 में विष्णिजम खाड़ी में भूरा शंबु पालन शुरू किया और वर्ष 1975 में कोप्पिकोड और चेन्नै में भी इसका सफल परीक्षण चलाया। इसके बाद कर्नाटक, कोचीन, अन्धकारनाग्री और तंगशेरी में खुले समुद्र में शंबु पालन की संभाव्यता जाँचने के लिए चलाए परीक्षणों के अनुसार ज्वारन्दमुख, पोताश्रय आधारित या खाड़ी क्षेत्र, देश के सामज-आर्थिक और राजनीति के परिदृश्य में अनुकूल देखे गये।

2) ज्वारन्दमुख में कृषि

खुले समुद्र की अपेक्षा ज्वारन्दमुख पारितंत्र कम प्रक्षुब्धता और उथला (< 4 मी) होने के कारण शंबु कृषि के लिए उपयुक्त होता है। इस दिशा में कासरगोड जिला में पडन्ना प्रथम



चयन स्थान था। रैक से लगभग 100 बीज रोपित रस्सियों लटकायी थी। श्री एम.एस. गुल मोहम्मद ने चार महीनों बाद पक्के शंबुओं का संग्रहण किया।

रैक रीति: यह ज्वारन्दमुख और अथले समुद्र क्षेत्रों के लिए अनुकूल होती है। इस रीति में बांस या काश्यूरीना खंभों को 1-2 मी के अंतराल में एक पंक्ति में लगाते हैं और इसके ऊपर एक फ्रेम बनाता है। इस फ्रेम से बीजारोपित रस्सियाँ लटका जा सकती है।

रैफ्ट रीति : क्षोभ रहित स्थितियों में खुली समुद्र कृषि के लिए यह तरीका अनुकूल होता है। बाँस या काश्यूरीना खंभों से समकोणीय चतुर्भुज के रैफ्ट बनाते हैं।

लॉग लाइन रीति : असुरक्षित समुद्री स्थितियों के लिए अनुकूल मानी जाती है। लॉग लाइन के लिए 16-20 मि मी व्यास के सिन्तेटिक रस्सियों का उपयोग किया जाता है। आधार को अवलंब देने के लिए 5 मी के अंतराल में 220 ली के रस्सी बैरलों को इस में बाँध देते हैं। लॉग लाइनों और बैरलों को दोनों चोरों पर कंक्रीट खंड या नाइलोन रस्सियों से उचित स्थान पर लंगार किया जाता है।

उपज्वारीय क्षेत्रों से संग्रहित बीज उच्च स्वास्थ्य के होंगे एक मीटर की लंबाई के 12-14 मि मी या 15-20 मि मी व्यास के रस्सी में रोपित करने के लिए करीब 500-750 ग्रा के बीज चाहिए और बीजों को रस्सी में लगाने के लिए 20 मि मी चोड़ाई के मच्छर दानी आवश्यक है। साधारणतया शंबू कृषि की अवधि 4-6 महीने है। पाँच महीनों में शंबु 36-40 ग्रा के औसत वजन और प्रति मीटर रस्सि में 10-12 कि ग्रा के साथ 80-88 मि मी तक की बढ़ती प्राप्त करते हैं।

भोजन और अशन स्वभाव

शंबु कृषि की सब से बड़ी सफलता इनके जल निस्यंदन करने की क्षमता है (प्रति दिन 20 गैलन)। क्लोमों की सहायता से ये जल की छालनी करते हैं और पादपल्लवकों (डयाटम),

प्राणिप्लवकों, डेट्रिटस खाकर तेज़ बढ़ते हैं। उपोष्ण और शीत देशों की अपेक्षा उष्णकटिबंधीय क्षेत्रों के वातावरण में शीघ्र बढ़ती होती है।

भूरा और हरित शंबुओं के लिए विकसित प्रजनन प्रौद्योगिकी पालन के पाँचवें महीनों में शंबु 80-88 मि मी की लंबाई और 36-40 ग्रा की औसत भार के साथ प्रति रस्सी 10-12 कि ग्रा/ मेट्रिक टन संग्रहण देता है।

“विपणन योग्य आकार” पाने पर और उच्च कन्डीशन इन्डेक्स की अवस्थाओं में शंबुओं का संग्रहण किया जाता है। संग्रहण काल अप्रैल से जून तक की अवधि होती है।

संग्रहण के बाद साफ किए शंबुओं को सजीव अवस्था में स्थानीय बाज़ारों बेचते हैं।

शंबु से बनाए खाद्य उत्पादन

(1) बर्फ डाले गये/हिमशीतित शंबु मांस (2) डिब्बाबंद शंबु मांस (3) धूमित शंबु मांस (4) शुष्कित शंबु मांस (5) मारिनेटड शंबु मांस (6) शंबु अचार और शंबु चटनी पाउड।

शंबु के निकट संघटन इस प्रकार है: नमी - 82.95, प्रोटीन - 8.94, वसा - 1.95, भस्म - 1.62, कार्बोहाइड्रेट - 0.85, विलेय अम्ल 0.05, ग्लाइकोजन 3.91 और फोस्फोरस।

अपेक्षित परिरक्षण और संग्रहण में नियन्त्रण

1. अनुकूलतम वहन धारिता का मानचित्रण एवं अध्ययन
2. नियन्त्रण उपाय : ज्वारन्दमुख/तटवर्ती क्षेत्रों के शंबु कृषि खेतों के लिए अभी तक किसी भी वैज्ञानिक नियंत्रण उपाय या सरकारी नीतियाँ नहीं बनाई गयी है।

एन ए टी पी कार्यक्रम द्वारा शंबु कृषि का विकीर्णन

इसके अधीन प्रौद्योगिकी स्थानांतरण का कार्य तीव्र करा दिया। गाँवों में कई निदर्शन खेतों की स्थापना की और कई प्रशिक्षण कार्यक्रम चलाए।



कृषकों की भागीदारी के साथ नौ निदर्शन खेतों की स्थापना की। एन ए टी पी कार्यक्रम के अधीन 1000 से भी अधिक गाँव वालों को शंबु कृषि में प्रशिक्षण दिया।

महाराष्ट्र की महिला मछुआरों ने शंबु कृषि के लिए स्वयं सहायक वर्ग (3 वर्ग) रूपायित किया। अंग्रेजी और मराठी में विवरण पुस्तिका प्रकाशित की। व्यापक जानकारी अभियान चलाया गया।

केरल में पुरंगरा, वडकरा, कोषिकोड (मूराड ज्वारन्दमुख) परप्पनंगाडी, मलप्पुरम (कोरापुष्पा ज्वारन्दमुख) और मणक्काड और पन्मबुकावु (वेम्बनाड झील) में कई निदर्श खेतों की स्थापना की।

शंबु संग्रहण - सार्वजनिक कार्यक्रम

महाराष्ट्र में जुवे गाँव की भाटिया संकरी खाड़ी में मई 2001 में चलायी कृषि का चार महीनों बाद संग्रहण किया।

विभिन्न शंबु कृषि खेतों में चलाए गये स्थान एवं प्रौद्योगिकी परीक्षणों ने यह सूचित किया कि महाराष्ट्र में स्टेकों में बढ़ने वाले शंबु खाड़ी में रैफ्टों में बढ़ाए (क्रमशः प्रतिमाह 1.02 ग्रा और 5.47 मि मी) शंबुओं की अपेक्षा बढ़िया मांस (प्रतिमाह 1.26 ग्रा और 6.95 मि मी) के साथ उच्च बढ़ती प्रदान की। नाइलॉन स्ट्रिप में रोपित शंबु बीजों ने नाइलॉन रास्सियों में रोपित बीजों की तुलना में अच्छी बढ़ती (प्रतिमाह 6.32 मि मी) दिखायी।

प्रभाव : एन ए टी पी के अधीन चलाए शंबु कृषि कार्यक्रमों ने कई गाँव वासियों को शंबु कृषि करने के लिए प्रेरित किया। महाराष्ट्र में प्रथमतः शंबु कृषि एक मौसमिक व्यवसाय या पेशे

के रूप में विकसित हुई। परियोजना के वैज्ञानिकों की सहायता के साथ जुवे गाँव के एक मछुए कुटुम्ब ने स्टेक रीति से शंबु कृषि चलायी। मिरिया गाँव वासियों ने अन्तराज्वारीय क्षेत्रों में अपना अपना या ग्रुपों में शंबु कृषि शुरू की। रैफ्ट रीति भी काफी प्रचलित हो रही है। कसारवेली गाँव के एक व्यक्ति परियोजना सहायता के साथ रैफ्ट रीति पालन में अत्यन्त उत्साह के साथ लगा हुआ है।

रोज़गार अवसरों के साथ साथ गाँववालों के लिए शंबु कृषि विविध प्रकार से आय कमाने का एक मार्ग है। केरल में लगभग 180 स्त्रियाँ शंबु संग्रहण काल में इसके विपणन से जीविका चलाती हैं।

एन ए टी पी के कार्यक्रमों के अधीन सी एम एफ आर आइ, कोचीन, सी ए आर आइ, पर्टब्लेयर और कोंकन कृषि विद्यापीठ, रत्नगिरि, महाराष्ट्र द्वारा चलायी गयी शंबु समुद्र कृषि परियोजना के अनुसार बीजों की उपलब्धता एवं कृषि के लिए उपयुक्त स्थान की सूचना उपलब्ध होने की दृष्टि में केरल के समान अन्य तटवर्ती राज्यों में भी शंबु कृषि सलाहनीय है।

निर्णय :

जलकृषि के लिए प्रयुक्त सभी जातियों में शंबु कृषि सबसे आसान है। संबंधित सरकारी प्राधिकारी के सहमति के साथ कोई भी व्यक्ति निकटतम उपयुक्त जलाशय में शंबु कृषि किया जा सकता है। निम्न व्यय और उच्च लाभ वह भी 4-5 महीनों की छोटी अवधि में, इसका आकर्षण है। स्वास्थ्यकर रूप में कृषि चलाते हुए देशी और अन्तर्राष्ट्रीय मार्केटों में विपणन कर सकता है अतः शंबु पालन तटवर्ती गाँवों के सभी अपेक्षित लोगों को रोज़गार एवं आय कमाने का अवसर प्रदान करेगा।



